बीसवीं शती के सिन्धी कवियों का हिन्दी में योगदान

डॉ. दयाल आशा

बीसवीं शती के सिन्धी कवियों का हिन्दी में योगदान

लेखक

डॉ. दयाल कोडूमल धामेजा "आशा"
एम.ए. पीएच्. डी.

अध्यक्ष

सिन्धी विभाग

श्रीमती चांदीबाई हिम्मथमल मनसुखाणी कालेज
उल्हासनगर-३ (महाराष्ट्र)

अंजलि प्रकाशन

उल्हासनगर-५ (महाराष्ट्र)

आशीर्वाद

★ महा मण्डलेश्वर श्री स्वामी विद्यानंद जी महाराज उदासीन

साहित्य सिन्धोरधिकानि रत्ना, न्यादाय भाषा शुचि सिन्धु देशात्।
ग्रन्थोदयालाशु कवि प्रणीत: सदा समाजस्य हिताय भूयात्॥
सिन्धी भाषा महारत्नं, हिन्दी भाषा ऽऽभयायुतम्।
भारतांगण सौलभ्यात् लोक मौलिषु राजते॥

★

प्रथम संस्करण जून १९७९ मूल्य ४० रुपये

★

मुद्रक :
श्रीमती मोहिनी सोभराज बुधवाणी
इन्कलाब प्रिंटिंग प्रेस,
शिवाजी चौक,
उल्हासनगर–३. (फोन : ६६)

प्रकाशक :
कृष्णलाल बजाज
अंजलि प्रकाशन
विष्णु कुंज, १९७४,
उल्हासनगर–५.

सादर समर्पित

आचार्य डॉ. सी. एल. प्रभात
के प्रति

दयाल 'आशा'

आशीर्वाद

★ दादा जे. पी. वास्वाणी

गोधूलि की वेला थी, वर्षा की बूंदाबूंदी हो रही थी। मैं पूजनीय दादा वास्वाणी के श्रीचरणों में एक वाटिका में बैठा था। दादाजी के कमल मुख की ओर देखा। मैंने प्यारे दादाजी से पूछा कि इस समय आप के अन्तःकरण में क्या विचार उठ रहे हैं? दादाजी ने कहा कि अब मेरे मन में यह विचार उत्पन्न हो रहे हैं कि अब भारत को वक्ताओं की आवश्यकता नहीं, अपितु शान्तचित्त एवं विनम्र कार्यकर्ताओं की आवश्यकता है, जिनके जीवन में सादगी है और जिनके मन में पिपासा है कि दरिद्र एवं निराश्रितों के विनम्र सेवक बन कर रहें।

प्राध्यापक डा. दयाल आशा एक ऐसा व्यक्ति है, जो अधिक बातें नहीं करता शाँत भाव से कर्तव्य-परायणतापूर्वक कर्म कर रहा है। शांतचित्त एवं विनम्र है। इसके जीवन में सादगी चमक रही है। इस के मन की प्यास है कि दरिद्र-दुखियों की सुश्रूषा में जीवन व्यतीत हो। इसके मनमें विद्यार्थियों एवं ग्रामीणों के प्रति अगाध स्नेह है। कितनी तन्मयता के साथ उनकी सेवा करता है। समय बचाकर सुंदर हृदयद्राविक कविताएँ लिखता है और शिक्षाप्रद साहित्य का सृजन करता है। सिन्धी भाषा एवं हिंदी भाषा का विद्वान है। अनुसंधान करके उसने "सिंधी कवियों की हिंदी साधना" शोध ग्रन्थ लिखा है। मैं हिंदी तो इतनी नहीं जानता हूँ, परंतु मैं यह बात तो जानता हूँ कि प्रा. दयाल आशा के मन में मातृभूमि, संतों, दरवेशों की भूमि सिंध के प्रति स्नह है, प्रेम है, श्रद्धा है। सिन्ध ने कतिपय कवियों को जन्म दिया है जिनकी विश्व के महान् कवियों के साथ तुलना की जा सकती है। सिंधी कवियों का उदात्त भावनाओं से ओत-प्रोत संदेश न केवल सिन्ध के लिए है परंतु भारत निसंदेह संपूर्ण विश्व के लिए है। कुछ सिंधी कवियेंाने हिंदी मे काव्य साधना की है। यह आवश्यक है कि भारत इस विपुल निधी से परिचित हो। इस लिये मैं इस सुन्दर ग्रंथ का अभिनंदन करता हूँ। इस पुस्तक से भारतीय जनता को ज्ञात हो कि सिंधी अन्तःकरण कितना उजागर है; सिंधी कवियों के गीतों में कितनी अगाध प्यास है परमात्मा के लिए। इस पुस्तक पर सदैव संतों महात्माओं का आशीर्वाद चमकता रहे।

मीरा भूमि,
१० साधु वास्वाणी पथ,
पुणे-१.

आशंसा तथा भूमिका

लब्धप्रतिष्ठ विद्वान्, लेखक, कवि, गायक, समाज-सेवी, विचारक तथा सन्तसेवी डा० दयाल कोटूमल धामेजा 'आशा' एम. ए. पीएच. डी., अध्यक्ष सिन्धी विभाग, श्रीमती चाँदीबाई हिमथमल मन्सुखाणी कालेज, बम्बई द्वारा लिखित नवीन ग्रन्थ "बीसवीं शती के सिन्धी कवियों का हिन्दी काव्य में योगदान" पढ़कर अतिशय प्रसन्नता हुई। डा० दयाल आशा बहुमुखी प्रतिभा के धनी और गंभीर शोध-वृत्तिवाले विद्वान हैं। आकाशवाणी के विभिन्न केंद्रों से समय समय पर आप जो वार्तायें प्रसारित करते रहे हैं उनसे आपकी विचारशीलता, गहन चिन्तन, अभिव्यक्ति-कौशल और भाव-प्रवणता का पर्याप्त परिचय मिलता रहा है। आपकी कृतियों की महत्ता का समादार करते हुए भारत सरकार के शिक्षा मंत्रालय ने आपकी "बापूजे बागमां" और "लाल बहादुर शास्त्री" शीर्षक पुस्तकों पर एक एक हज़ार के दो पुरस्कार दिए, राष्ट्रीय अनुसन्धान परिषद दिल्ली ने आपकी "दादा दर्शन" तथा "महकंदड़ मुखिड़ियूं" शीर्षक पुस्तकों पर एक एक हज़ार रुपए के दो पुरस्कार दिए तथा यूनेस्कोने भी आपके हस्तलिखित ग्रन्थ "शल अहिड़ा लाल जमनि" पर चौदह सौ रुपए का नुरस्कार देकर आपका सम्मान किया है। स्वभाव से सरल और विनम्र होने के साथ साथ आप महात्मा गांधी की विचारधारा से पूर्णतः प्रभावित हैं।

हमारे देश के विभिन्न अंचलों में हिन्दी के ऐसे अनेक सेवकों, लेखकों, कवियों और मनीषियों की वाणियां बिखरी पड़ी हैं जिन्होंने विशाल भारत के साथ सम्पर्क करके उन्नत भारत के जन जीवन को प्रभावित करने के लिए उस हिन्दी का आश्रय लिया जिसकी व्यापक प्रतिष्ठा अनेक सन्त देशभर में कर चुके थे क्यों कि देशभर के विशेषतः उत्तर भारत के जन-मानस तक पहुंचने का आधार वही भाषा थी। इतना सब होते हुए भी न तो भारत सरकार की ओर से और न हिन्दी की सर्वसामान्य संस्थानों की ओर से ही ऐसे लेखकों और कवियों की रचनाओं के संग्रह का कार्य किया गया। इस दृष्टिसे इस ग्रन्थ का और भी अधिक महत्त्व है कि विद्वान लेखक ने अत्यन्त परिश्रम के साथ बीसवीं शतीके उन सिन्धी लेखकों और कवियों का प्रामाणिक परिचय दिया है जिन्होंने साम-गान की पावन भूमि सिन्धु प्रदेश में रहकर भी लोक मानस को पुनीत करने के लिए उस लोकवाणी हिन्दी (भाषा, रेखता

या हिन्दुई) में रचना की जिसे कुछ समीक्षकों तथा लेखकों ने सधुक्कड़ी भाषा की संज्ञा दी है ।

यह सरल, सर्वबोध्य हिन्दी कितनी व्यापक थी इसका सबसे बड़ा प्रमाण यही है कि सूफी सन्तों ने भी अपने विचार का प्रचार करने का उसी प्रकार इस भाषा का आश्रय लिया जैसे नामदेव, गुरु नानक, कबीर आदि सन्तों ने लिया था। किसी समय ग्रन्थों के नगर हैदराबाद (सिन्ध) में फुलेली नहर के तट पर सूफी सन्तों का बड़ा विशाल जमावड़ा रहा जहाँ देश विदेश के अनेक सूफी सन्त और फकीर आकर निवास भी करते थे, साधना भी करते थे। देश विभाजन होने तक सिन्ध के पश्चिम में हिंगुलाजा देवी के मन्दिर में तान्त्रिकों का बड़ा बोल बाला रहा जहाँ अनेक तान्त्रिक साधकों ने भी कई गुह्य साधना ग्रन्थ हिन्दी में लिखे । इस सरल भाषा की महत्ता का दूसरा महत्वपूर्ण प्रमाण यह है कि उदासीन सम्प्रदाय के आचार्य श्री श्रीचन्द्राचार्यजी ने अपने सम्प्रदाय के धर्मग्रन्थ "मात्रा शास्त्र" की रचना इसी भाषा में की जिसकी ओर अभी तक भी हिन्दी के इतिहासकारों का ध्यान नहीं गया है।

इतना तो सभी विद्वान मानते हैं कि संसार के सर्व प्राचीन संप्राप्त वाङ्मय वेदों के ग्रन्थों का दर्शन, सप्तसिन्धु या प्रिसप्त सिन्धु की पुनीत धरणीपर ही आर्य ऋषियों को हुआ था। संपूर्ण याज्ञिक कर्मकांड उसी भूमि में प्रारम्भ हुए और साम-गानके देवी स्वरों का गुंजन भी सर्वप्रथम वहीं हुआ, काल-क्रमसे वह भूमि आज उस महानीय वाङ्मय से विहीन हो गई है किन्तु वेदों के उदार मातृत्वका जो गौरव उस धरती ने प्राप्त किया है उसका लोप किसी प्रकार नहीं हो सकता।

सिन्धु नदीके बीच सद्गुरु श्री स्वामी बनखण्डीजी महाराज ने अपने साधुबेला आश्रम की स्थापना करके अपने शील, त्याग, तप और प्रभाव से उस पुण्य भूमि को पुनः उसका प्राचीन गौरव प्रदान करने के लिए वहाँ ऐसा पुण्य केंद्र स्थापित किया जिसके माध्यम से वेद, शास्त्र, पुराण, साहित्य सबका पुनरुद्धार और प्रचार हुआ। संस्कृत और हिन्दी के अनेक विद्यालयों के माध्यमसे हिन्दी और संस्कृत के अध्ययन की सुविधा प्रदान हुई । इस प्रकार साधुबेला तीर्थ उस सिन्धु प्रदेश में भारतीय धर्म, विज्ञान और संस्कृति का अत्यन्त महत्वपूर्ण केन्द्र बन गया जिसने भारतीय जन-जीवन में भारतीय धर्म और संस्कृति के

प्रति तथा उसके उदार और उदात्त साहित्य के प्रति नवीन चेतना और आस्था उत्पन्न कर दी। उस प्रदेश में हिन्दी के प्रचार–प्रसार का मुख्य केन्द्र वह साधुबेला तीर्थ ही रहा है।

उसी उदात्त परम्परा से प्रभावित होकर इस ग्रन्थ के लेखक डा. आशा ने समस्त सिन्धु प्रदेश में इतस्ततः बिखरे हुए बीसवीं शतीके हिन्दी के लेखकों, कवियों, सन्तों की रचनाओं और वाणियों का परिचय देकर वास्तविक शोध का अत्यन्त सराहनीय कार्य किया है। इससे पूर्व डा. दशरथ आसनानी ने "सन्त रोहल की बानी" में कुछ सन्तों का विशेषतः सूफी सन्तों का और उनकी वाणियों का विस्तृत और कौशलपूर्ण परिचय दिया था किन्तु इस ग्रन्थकार ने उसे पूर्णता प्रदान करते हुए वर्तमान युग के समस्त हिन्दी गद्य–पद्यकारों और उनकी हिन्दी रचनाओं का परिचय देकर बड़ा पुण्य और यशस्कर कार्य किया है।

यद्यपि हिन्दी साहित्य के अनेक इतिहास लिखे जा चुके हैं तथापि वे सभी अधूरे, अपूर्ण और भ्रामक हैं क्यों कि जब तक समस्त भारत के सभी अंचलों के हिन्दी लेखकों और कवियों तथा उनकी रचनाओं का पूर्ण और विस्तृत परिचय नहीं मिल जाता तब तक हिन्दी साहित्य का इतिहास पूर्ण नहीं समझा जा सकता।

डा. आशा ने जिस निष्ठा और धैर्य के साथ इस ग्रन्थ में सिन्ध के बीसवीं शतीके सिन्धी कवियों के हिन्दी काव्य में योगदान का परिचय देने का जो प्रशंसनीय कार्य किया है उसका समस्त हिन्दी साहित्यिक समाज की ओर से मैं अभिनंदन करता हूं और आशा करता हूं कि वे इससे पूर्वके भी उन कवियों और लेखकों का परिचय देनेका प्रयत्न करेंगे जो पहले से हिन्दी में रचना करते चले आ रहे हैं।

मैं पुनः डा. आशा को उनकी इस आशंसनीय कृतिके लिए साधुवाद देता हूं और विश्वास करता हूं कि उनके इस ग्रन्थ का व्यापक समादर और सम्मान होगा।

–आचार्य स्वामी गणेशदासजी, साधुबेला महंत

अनुक्रमणिका

बीसवीं शताब्दी

सिन्धी साहित्य एक सर्वेक्षण

सिन्ध की पावन भूमि जहां वैदिक संस्कृति पल्लवित पुष्पित हुई और वेदों की रचना हुई, जहाँ अनेक संतों महात्माओं ने वेदान्त और आध्यात्मिक ज्ञान का उपदेश दिया, वहाँ अवश्यमेव श्रेष्ठ साहित्य का सृजन हुआ होगा, यह निश्चित और अविवादास्पद है। किन्तु सिन्धु प्रदेश की प्रतिकूल राजनैतिक परिस्थितियों एवं सिन्धु नदी के सदैव बदलते प्रवाह के कारण सिन्ध का प्राचीन साहित्य उपलब्ध नहीं। चौदहवीं सदी का केवल 'दोदो चनेसर' प्रथम वीर काव्य उपलब्ध है। तत्पश्चात् मामूई फकीरों के कुछ दोहे, काजी काजन के दोहे, सोरठे, शाह अब्दुलकरीम के दोहे–सोरठे (बैत) उपलब्ध हैं। शाह अब्दुल लतीफ भिटाई जैसे विश्व विख्यात कवि, शाह इनायत, संत रोहल, सचल सरमस्त, मुराद, गुलामअली, दरियाखान, सामी साहब, दलपतराय, सूरतसिंह, महाराज बसंतराम, बेकसि, बेदिल आदि कवियों ने सूफी, संत, एवं भक्ति काव्य का सृजन किया।

अरबी व फारसी से प्रभावित होकर कुछ सिन्धी कवियों ने मिजाज़ी इश्क सम्बंधी काव्य रचना की। इन्होंने इल्म अरुज़ के आधार पर काव्य रचना की। इन्होंने शम्अ व परवाने, गुल व बुलबुल, साग़र व जाम, साकी व मैखाने इत्यादि उपमाओं और प्रतीकों का प्रयोग किया।

कुछ सिन्धी मुसलमान कवियों ने कुरान शरीफ की आयतों का सिन्धी काव्य में अनुवाद किया।

सन् १८४३ ई. में अंग्रेजों ने सिन्ध विजय की, उन्होंने सन् १८५३ ई. में सिन्धी भाषा के लिए अरबी लिपि निर्धारित की। सरकार की ओर से सिन्धी साहित्य प्रकाशित होने लगा। जार्ज कैप्टन स्टैक ने सिन्धी–इंग्लिश और इंग्लिश सिन्धी शब्दकोष सम्पादित किये। उन्होंने उक्त शब्दकोषों में सिन्धी के लिए देवनागरी लिपि का प्रयोग किया।

सन् १८५३ से १९०० तक, जिस साहित्य का सृजन हुआ उसे हम संक्रमण कालीन साहित्य कह सकते हैं। विद्वानों का मत है कि आरम्भ में गद्य की कई पुस्तकें देवनागरी लिपि में लिखी गई थी, परन्तु अरबी लिपि सिन्ध की लिपि बन जाने के कारण देवनागरी लिपि को बड़ी ही क्षति पहुंची। अब सारा सरकारी पत्रव्यवहार अरबी लिपि में होने लगा।[1]

सरकार की ओर से सिन्धी में पाठ्य पुस्तकें तैयार की गई। मुन्शी नंदीराम ने तारीख मौसूमी का सिन्धी में अनुवाद किया। इसी काल में अंग्रेजी फारसी एवं हिन्दी भाषा की कुछ पुस्तकों का सिन्धी में अनुवाद हुआ। ऋषि दयाराम गिदूमल, साधु हीरानंद, साधु नवलराय, मुन्शी उधाराम मीरचंदानी, श्री परमानंद मेवाराम, दीवान केवलराम सलामतराय, कौड़ौमल चन्दनमल खिलनाणी, मिर्जा कलीच बेग आदि साहित्यकारों को अपनी मूल रचनाओं एवं अनुवादों द्वारा सिन्धी साहित्य की महत्त्वपूर्ण सेवा की।

बीसवीं शती के पूर्वार्ध्द में जिन सिन्धी साहित्यकारों एवं आलोचकों ने सिन्धी गद्य को अपनी कृतियों द्वारा समृद्ध किया उनमें डॉ. होतचंद गुरबख्शाणी, श्री भेरूमल महरचन्द आडिवाणी, श्री लालचन्द अमरडिनोमल जगतियाणी, मुहम्मद सदीक मेमुन, आचार्य आसूदोमल गिदवाणी, साधु टी. एल. वास्वाणी, श्री दयाराम वसणमल मीरचन्दाणी, फतिह मुहम्मद सेवहाणी, पं. द्वारकाप्रसाद शर्मा नानकराम धर्मदास, श्री पहिलाजराय वास्वाणी, डॉ. दाऊद

---

1. कवि श्रीमाला बेवसि पं. देवदत्त शर्मा

पोटो, ताज मुहम्मद आगा, अब्दुलकरीम मेमुण, मीर मुहम्मद शाह, एच. एम. बलोच, हनीफ सदीकी, लीलाराम प्रेमचन्द, प्रो. एल. एच्छ. अजवाणी, मोलवी दीन मुहम्मद वफाई, मियां शम्स अलदीन, बुलबुल, प्रो. शेवाराम फेरवाणी, शेख अब्दालमजीद, गुलाम मुहम्मद शाहवाणी, उसमानअली अन्सारी, श्री आसानंद माम्तोरा, प्रो. नारायणदास मलकाणी, प्रो. मंघाराम मलकाणी, प्रो. झामनदास भाटिया, प्रो. कल्याण आडिवाणी, प्रो. राम पंजवाणी, श्री गोबिन्द मालही, गोबिंद भाटिया, चूहड़मल हिन्दूजा उल्लेखनीय हैं। श्री भेरुमल महरचन्द ने 'सिन्धी बोली जी तारीख', 'सिन्धी हिन्दुनि जी तारीख' एवं अन्य गवेषणात्मक पुस्तकें लिखी। डॉ. होतचन्द गुरबख्शाणी ने शाह के काव्य का विद्वत्तापूर्ण सम्पादन किया, एवं 'नूरजहां' ऐतिहासिक उपन्यास लिखा। मुहम्मद सदीक मेमुण ने 'सिन्धी अदबी तारीख' लिखी। अन्य लेखकों ने विभिन्न विषयों पर निबंध लिखे, सामाजिक एवं ऐतिहासिक उपन्यास लिखे। स्वतंत्रता संग्राम से प्रभावित होकर देशभक्ति सम्बंधी उपन्यास, कहानियां, एवं लेख लिखे गये। महाराज द्वारकाप्रसाद शर्मा ने श्री लोकमान्य तिलक के गीता रहस्य का सिन्धी में अनुवाद किया। श्री बूलचन्द राजपाल ने 'सिन्धु' मासिक पत्र का सम्पादन कर सिन्धी साहित्य को अमूल्य सेवा की। बंगला गुजराती एवं हिन्दी के अच्छे उपन्यास एवं कहानियां सिन्धी में अनुवाद की गई। विशेषकर मुन्शी प्रेमचन्द, शरत बाबू एवं रवि बाबू की कृतियों का विशेष अनुवाद किया गया। शेक्सपीयर एवं कुछ अन्य अंग्रेजी साहित्यकारों की मूल कृतियों का अनुवाद सिन्धी में किया गया।

काव्य के क्षेत्र में कवि किशनचन्द बेवस ने सिन्धी कविता को नया मोड़ दिया। बेवस ने शमअ परवाने, साकी मैखाने, गुल व बुलबुल इत्यादि बेसूद विषयों को छोड़कर राष्ट्रीय एवं सामाजिक विषयों पर कविता लिखी। इन्होंने, देश भक्ति, स्वतंत्रता, गरीब की झोपड़ी, किसान, मजदूर स्वदेशी आंदोलन इत्यादि जीवन सम्बंधी विषयों पर काव्य रचना की। वे बीसवीं शती के प्रतिनिधि कवि माने जाते हैं। उनकी देश प्रेम सम्बंधी कविताओं को हृदयगम करने से ही राष्ट्रीय प्रेम उमड़ उठता है। गुरदेव बेवसि सिन्ध के टैगोर थे। इन्होंने सिन्धी कविता में नयी क्रांति को जन्म दिया। आज से पच्चास वर्ष पूर्व कवि बेवसि ने अपनी कविता द्वारा समाजवाद का संदेश दिया। इंडलठ कवि बेवसि के सात एकांकी नाटकों का संग्रह है। वे उच्च कोटि के एकांकीकार

एवं निबंधकार भी थे। उन्होंने अपने काव्य में प्रकृति का सजीव चित्रण किया है। उनकी भाषा में प्रवाह है, ओज है, पौरुष की हुंकार है। उन्होंने इल्म अरुज़ के आधार पर काव्य रचना की है।

कवि बेवसि ने श्री हूंदराज 'दुखायल' जैसे राष्ट्रीय कवि को जन्म दिया, प्रो. राम पंजवाणी जैसे लोक प्रिय साहित्यकार और सिन्धी संस्कृति के प्रतिनिधि को पैदा किया। कवि हरि दिलिगीर जैसे उत्कृष्ट कवि एवं श्री गोबिंद भाटिया जैसे निबंधकार को जन्म दिया।

श्री हूंदराज 'दुखायल' सिन्ध के राष्ट्रीय कवि माने जाते हैं। उन्होंनें स्वतंत्रता आंदोलन के समय सिन्ध के गांव गांव में अपने देशभक्ति पूर्ण गीतों के द्वारा सिन्धी जनता में नई चेतना व जागृति पैदा की। उनके कंठ में माधुर्य है। जब वे गाते हैं तो उत्साह व उमंग उमड़ पड़ते हैं। उनके काव्य में सरसता एवं माधुर्य है। संगीतांजलि उनकी कविताओं का एक अमूल्य संग्रह है। वे स्वतंत्रता संग्राम के सच्चे सैनिक हैं। उन्होंने कई बार जेल यात्राएँ भी की। वे गांधीजी के अनन्य उपासक हैं। उन्होंने आध्यात्मिक, सामाजिक, राष्ट्रीय एवं जीवन उपयोगी विषयों पर कविताएं लिखी हैं। इनके काव्य में वीर रस, शांत रस, श्रृंगार एवं करुण रस का यथेष्ट परिपाक हुआ है। छेकानुप्रास एवं उपमालंकार उनकी रचनाओं में प्रचुर भाग में आये हैं।

साधु टी. एल. वास्वाणी ने भक्ति परक कविताएं लिखी। इनके काव्य में ईश्वर के प्रति अगाध प्रेम छलक पड़ता है। इनके काव्य में ज्ञान, भक्ति व प्रेम की त्रिवेणी छलछलाई पड़ती है। वे उच्च कोटि के संत, साहित्यकार एवं महान् विद्वान थे। उन्होंने जनता में जनार्दन का साक्षात्कार किया। उनका उपनाम 'नूरी' है। 'नूरी ग्रंथ' उनका महान काव्य संग्रह है। उन्होंने श्रीमद् भगवद गीता का काव्यानुवाद भी किया हैं।

श्री परसराम 'ज़िया' भी उच्च कोटि के कवि थे। उन्हें सिन्ध सरकार की ओर से उनके काव्य संग्रह 'तस्वीर अहिसास' पर पांच सौ रुपये का पुरस्कार प्राप्त हुआ। श्री डेवनदास किशनाणी 'आज़ाद' ने 'लाईट आफ एशिया' का 'पूरब संदेश' शीर्षक' से सिन्धी में काव्यानुवाद किया। इस काव्य पुस्तक पर उन्हें सिन्ध सरकार की ओर से पांच सौ रुपये का पुरस्कार मिला।

श्री लेखराज अजीज़, हेदर बख्श जतोई, प्रिः एन, बी. थधाणी, श्री हरि दिलगीर, नियाजअली नियाज़, शेख अयाज़, डॉः हरूमल सदारंगाणी, श्री खीअलदास फानी, नारायण श्याम्, संगीत आचार्य मास्टर चन्द्र आदि कवियों ने इल्म अरुज़ के आधार पर काव्य रचना की।

स्वामी टेऊंराम, स्वामी ग्वालानंद, कवि पहिलाजराम, श्री भोजल, संत वलीराम आदि संत कवियों ने सिन्धी के साथ साथ हिन्दी में भी काव्य साधना की। इन संत कवियों ने अधिकतर भारतीय परंपरा को अपनाया। इनका काव्य भक्ति भावना एवं आध्यात्मिक उन्नति सम्बंधी विषयों पर लिखा हुआ है। स्वामी टेऊंराम का 'प्रेम प्रकाश' ग्रन्थ एक अमूल्य देन है। इन संत कवियों पर हिन्दी के संत कवियों एवं नाथ पंथियों का प्रभाव दीख पड़ता है।

भारत–पाक विभाजन के बाद सिन्धयों को अपनी जननी जन्म भूमि सिन्ध छोड़नी पड़ी। वे अपनी धन सम्पती जायदाद सिन्ध में छोड़कर भारत में आये। उनके जीवन में बड़ा संघर्ष हुआ। अपने पुरुषार्थ एवं परिश्रम से वे भारत के विभन्न नगरों में बस गये। उन्होंने अपनी जन्मभूमि से दूर रहते भी अपनी सभ्यता, संस्कृति, साहित्य एवं भाषा को नहीं भुलाया। कवि श्री हूंदराज दुखायल के मुख से यह आवाज़ निकलीः–

"हम भी हिसेदार हैं पुरे हिसेदार हैं।
हिन्द के जंगे आजादी के हम भी अलम्बरदार हैं॥"

संघर्षमय जीवन ने सिन्धी साहित्य में नवचेतना का संचार किया और कई नये साहित्यकारों को जन्म दिया। सिन्धी भाषा पर हिन्दी एवं संस्कृत का प्रभाव पड़ा। नव लेखकों की सिन्धी हिन्दी निष्ठ है।

श्री परसराम ज़िया ने 'सिपाही' एवं 'सूटाई' उपनामों द्वारा आलोचनात्मक काव्य की रचना की। सरकार, समाज, एवं नेताओं का यथार्थ चित्र अपनी कविता में प्रस्तुत किया। उनके काव्य में प्रवाह था। वे जनता के प्रतिनिधि कवि बन गए। उन्होंने पीड़ित सिन्धी जनता को शांति प्रदान करने के लिए श्री सुखमनी साहिब, श्रीमद् भगवद् गीता, श्री जपुजी साहिब, श्री नाएं महले के शिलोकों तथा कुछ वेद मन्त्रों का सरल सरस सिन्धी पद्यानुवाद प्रस्तुत

किया। बच्चों के लिए 'बाग़ बहार' नामक काव्य संग्रह लिखा जिस पर उन्हें भारत शिक्षा मन्त्रालय की ओर से पांच सौ रुपये का पुरस्कार प्राप्त हुआ।

कवि पहिलाजराम, स्वामी सर्वानंद महाराज, स्वामी परमानंद, स्वामी शान्तिप्रकाशजी महाराज, स्वामी बसंतराम, दादा जे.पी. वास्वाणी संत रामकृष्ण, एवं अन्य संतों ने संत काव्य का सृजन किया।

प्रिं. हरि दिलगीर, प्रभु वफा, प्रो. राम पंजवाणी, नारायण श्याम, डॉ. हरूमल सदारंगाणी, प्रो. अर्जन शाद, गोबिन्द भाटिया, गोवर्धन भारती, पं. देवदत्त शर्मा, प्रो. सतरामदास 'साइल', सुगन आहूजा, कृष्ण राही, ईश्वर आँचल इन्द्र भोजवाणी, प्रिं. मोती प्रकाश, लक्ष्मण भाटिया, अर्जन हासद, हासाराम पीया, डॉ. दयाल आशा, एम. कमल, वासुदेव निर्मल, प्रो. हरेश वास्वाणी, हीरो ठकुर, परसराम रोहड़ा, टेकचंद मस्त, कृष्णलाल बजाज, आजिज़ बेदी, गोवर्धन शर्मा, डॉ. अर्जन सिकायल, अजीत किशोर, दीपचन्द्र तिलोकचन्द्र, कवि हेमनदास आदि कवियों ने सिन्धी काव्य क्षेत्र में योगदान किया। उन्होंने परिस्थितियों के अनकूल काव्य रचना की।

सिन्ध पाकिस्तान में शेख अयाज़ जैसे विद्रोही कवि ने अन्याय अत्याचार के विरुद्ध आवाज़ बुलंद की। शेख अयाज़ भाव पक्ष एवं कला पक्ष की दृष्टि से उच्च कोटि के कवि हैं।

सिन्ध में तनवीर अबासी, तालिब अलमौला, नियाज़, हमायूनी, इमदाद हुसेनी, शम्स अलहैदी, दादनखान, लुतफ अल्लाह बदवी, खाकी जोयो, गुलाम हुसेन रंगरेज, मुहम्मद उस्मान नियाज, गुलाम अली पठाण आदि कवियों ने सिन्धी काव्य के विकास में योगदान किया है।

भारत में जिन सिन्धी साहित्यकारों ने सिन्धी कहानी, उपन्यास नाटक के विकास में योगदान किया उन में प्रो. मंघाराम मलकाणी, प्रो. राम पंजवाणी, गोविन्द माल्ही, प्रो. चेतन माड़ीवाला, प्रो. पोपटी हीरानंदाणी, सुंदरी उत्तमचंदाणी चन्दूलाल जयसिंवाणी; जेठानंद नागराणी; जगत् आडिवाणी; कीरत बाबाणी, प्रो. कला प्रकाश; प्रिं. मोती प्रकाश; गुनो सामताणी; लाल पुष्प, प्रो. हीरो शेवकाणी; ब्रज मोहन; लखमी खिलनाणी; जी. एछ नागराणी; डॉ. अर्जन

सिकायल; ईश्वर चन्द्र; बालाणी; मोहन कल्पना; हरीकांत; वासुदेव निर्मल; प्रो. ईश्वरी जोतवाणी; प्रो. संतदास झांगियाणी; विश्नदास शिवदासाणी; विश्नदास आसराणी; चिमन शर्मा, तारा मीरचंदाणी, गुली सदारंगाणीं, गोपी मोटवाणी गोप गोलाणी, जेठानंद लालवाणी आदि उल्लेखनीय हैं।

श्री जयरामदास दौलतराम; प्राचार्य एछ. एच्छ, अजवाणी; प्राः कल्याण आडिवाणी; प्रा. लेखराज अज़ीज़; डॉ. हरूमल सदारंगाणी; प्रा. चेतन माड़ीवाला श्री तीर्थ वसंत; प्रा. झमटमल भावनाणी; प्रा. बी. एच्छ. नागराणी प्राचार्य मोतीलाल लछीराम बुटाणी; श्री तीर्थ सभाणी; श्री गंगाराम सम्राट; डॉ. नारायण सामताणी; डॉ. मोतीलाल जोतवाणी; डॉ. मुरलीधर जेतली; डॉ. सतीश रोहड़ा; पंडित कृष्णचन्द्र जेतली; डॉ. परसराम गिदिवाणी; श्री मनु गिदिवाणी; श्री मनोहरदास कौड़ोमल; प्रा. पोपटी हीरानंदाणी; डॉ. लक्षमण खूबचन्दाणी; श्री लीलो राइचंदाणी; श्री बलदेव गाजरा; प्रा. राम शर्मा, श्री रामकृष्ण आडिवाणी; श्री ए. जे. उतम; प्रा. चन्द्रा आडिवाणी इत्यादि सिन्धी विद्वानों ने विभिन्न विषयों पर आलोचनात्मक एवं शोध पूर्ण लेख लिखे।

साहित्य अकादेमी ने सिन्धी भाषा को स्वीकृत किया। भारत की अन्य भाषाओं की भांति सिन्धी भाषा में भी साहित्य अकादमी ने साहित्य प्रकाशित किया। अन्य साहित्यकारों की भांति सिन्धी साहित्यकारों को भी उनकी श्रेष्ठ रचनाओं पर साहित्य अकादेमी ने पुरस्कार देकर प्रोत्साहन दिया। श्री तीर्थ वसंत को 'कंवर' पर; प्रो. राम पंजवाणी को 'अनोखा आज़िमूदा' श्री लेखराज अजीज़ को 'सुराही' प्रो. कल्याण आडिवाणी को 'शाह जो रसालो'; प्रो. मंघाराम मलकाणी को 'सन्धी नसर जी तारीख'; श्री नारायण श्याम को 'वारीअ भरियो पलांद'; श्री गुने सामताणी को 'अपराजता'; श्री गोबिन्द माल्ही को 'प्यार जी प्यास'; श्री कृष्ण राही को 'कुमाच', श्री लाल पुष्प को 'आतम जो मौत' श्री लक्षमण भाटिया कोमल को 'जीअ झरोको' कृतियों पर साहित्य अकादेमी ने पांच पांच हजार रुपये के पुरस्कार दिये हैं।

भारत सरकार के शिक्षा एवं समाज कल्याण मंत्रालय की ओर से श्रीमती अनीता कमल 'प्यासी'; श्री फतहचन्द वास्वाणी; श्री हूंदराज दुखायल श्री मनोहरदास कौड़ोमल खिलनाणी; डॉ. दयाल 'आशा' को साक्षरों के लिये लिखित कृतियों पर एक एक हजार रुपये का पुरस्कार प्राप्त हुआ है। इसी मंत्रालय की ओर से बाल साहित्य के लिये श्री परसराम ज़िया; श्री डीपचन्द्र

तिलोकचन्द्र, श्री गोवर्धन भारती, श्री जीवत जोति, लक्ष्मण भाटिया 'कोमल', श्री लक्ष्मण भम्भाणी आदि पुरस्कृत हुए हैं। डॉ. दयाल 'आशा' को यूनेस्को की ओर से १४०० रुपये का पुरस्कार उनकी हस्त लिखित पुस्तक 'छल अहिड़ा लाल जमनि' पर प्राप्त हुआ है।

राष्ट्रीय शैक्षणिक अनुसंधान परिषद की ओर से बाल साहित्य के लिए डॉ. दयाल 'आशा' को 'दादा दर्शन' एवं 'महकंदड़ मुखिड़ियूं', श्री मौती प्रकाश को 'गुलिड़नि जा गीत', श्री मनोहर बेदी आजिज़ को 'झिरमिर' श्री के. लेखवाणी को विज्ञान सम्बंधी पुस्सक पर एक एक हजार रुपये का पुरस्कार प्रदान किया गया है।

सोवियत नेहरू पुरस्कार योजना के अंतर्गत अन्य भारतीय भाषियों की भांति, सिन्धियों को भी पुरस्कार प्राप्त हुए हैं। ए. जीः उत्तम को 'भारत रूस दोस्ती' सुन्दरी उत्तमचंदाणी को 'अमन सडे प्यो', प्रो. अर्जन 'शाद' को 'वोलगा जे किनारे', डॉ. अर्जन सिकायल को 'लेनन', बासुदेव निर्मल को 'पाताल' लक्षमल कोमल को 'नओं सुबह', इन्द्र भोजवाणी को 'प्रह बाखूं कढियूं' खेमचन्द सुमन को 'पहिर्यों प्यार' सलामत पुरस्वाणी को 'समाजवाद छा आहे' कृतियों पर सोवियत नेहरू पुरस्कार प्राप्त हुए हैं।

प्राचार्य कनैयालाल तलरेजा ने 'अमर शहीद संत कंवरराम' पुस्तक लिखकर जीवनी साहित्य में अभिवृधि की है। उनका काव्य संग्रह 'महिराण जा मोती' भी प्रकाशित हुआ है।

साधु वास्वाणी मिशन पुणे द्वारा भी भक्ति साहित्य का प्रकाशन हो रहा है।

महाराष्ट्र, गुजरात एवं मध्य प्रदेश राज्यों की ओर से सिन्धी भाषा में पाठ्य पुस्तकों का प्रकाशन किया जाता है। साहित्य अकादमी, नेशनल बुक ट्रस्ट ने भी उच्च कोटि की सिन्धी पुस्तके प्रकाशित की हैं।

भारतीय विधान की आठवीं धारा के अंतर्गत अन्य भारतीय भाषाओं की भांति सिन्धी भाषा को भी स्वीकृत किया गया है। भारत सरकार की ओर से सिन्धी भाषा एवं साहित्य के विकास के लिए प्रयास हो रहा है। भारत सरकार

ने अन्य भारतीय भाषाओं की भाति सिन्धी भाषा एवं साहित्य के विकास एवं सृजन के लिए एक क्रोड़ रुपये का अनुदान स्वीकृत किया है। इस योजना को कार्यान्वित करने के लिए हिन्दी निर्देशालय को काम सौंपा गया है। इस योजना द्वारा न केवल सिन्धी साहित्यकारों का उत्साह बढ़ेगा बल्कि साथ साथ नये साहित्य का सृजन एवं प्रकाशन भी होगा। इस योजना के अंतर्गत 'सिन्धी व्याकरण' एवं 'सिन्धी अंग्रेजी शब्द कोश' प्रकाशित किये गये हैं।

महाराष्ट्र सरकार ने 'लोक राज्य' पाक्षिक पत्रिका का प्रकाशन किया है। आकाशवाणी के विभिन्न केंद्रों से सिन्धी कार्यक्रम प्रसारित किये जा रहे हैं। डेक्कन कालेज पुणे में डॉ० परसराम गिदिवाणी एवं श्री गोवर्धन शर्मा सिन्धी शब्द कोश तैयार करने में संलगन हैं। राष्ट्रीय एकता के लिए भारत सरकार ने मातृभाषा के अतिरिक्त अन्य भारतीय भाषाओं के अभ्यास भी योजना आरंभ की है उस योजना के अंतर्गत भी असिन्धी भाषी डेक्कन कालेज पुणे में प्रा. प्रीतम वरियाणी एवं प्रा. कन्हैयालाल लेखवाणी के मार्गदर्शन में सिन्धी भाषा का अभ्यास कर रहे हैं। इसी प्रकार सरकार की ओर से सिन्धी भाषा एवं साहित्य के विकास के लिए प्रयास हो रहा है।

सिन्धियों की हिन्दी गद्य में देन

सिन्धी जनता ने देश विभाजन के बाद न केवल व्यवहारिक जीवन में हिन्दी का प्रयोग किया है, किन्तु शैक्षणिक एवं साहित्यिक जीवन में भी हिन्दी को अपनाया है। कई सिन्धियों ने उच्चत्तम हिन्दी परीक्षाएँ उत्तीर्ण कर उपाधियां उपलब्ध की हैं। कुछ सिन्धियों ने हिन्दी में साहित्य सृजन भी किया है। जिन सिन्धी कवियों ने बीसवीं शती में हिन्दी काव्य क्षेत्र में योगदान किया है उनका विस्तार से वर्णन इस पुस्तक में किया गया है, यहां उन सिन्धियों का संक्षिप्त विवरण प्रस्तुत है जिन्होंने बीसवी शती में हिन्दी गद्य में योगदान किया है।

स्वामी ग्वालानंद महाराज :

संत स्वामी ग्वालानंद महाराज ने वेदान्त एवं आध्यात्मिक विषय सम्बंधी 'पिण्ड ब्रह्मांड ज्ञान गुच्छा' पुस्तक लिखी, जिसका प्रकाशन स्वामी रामकृष्ण ने किया है।

स्वामी सर्वानन्दजी महाराज :

संत स्वामी टेऊँराम महाराज के धर्मपीठ के अधिकारी स्वामी सर्वानंदजी महाराज ने 'सद्गुरू स्वामी टेऊँराम महाराज का जीवन चरित्र' हिन्दी भाषा में लिखा है, जो प्रेम प्रकाश ट्रस्ट जयपुर ने प्रकाशित किया है।

पंडित द्वारकाप्रसाद शर्मा :

सिन्धी के वरिष्ठ विद्वान देश भक्त पंडित द्वारकाप्रसाद शर्मा ने हिन्दी भाषा में 'प्राचीन सिन्धु सभ्यता' पुस्तक लिखकर हिन्दी जगत् को सिन्धु सभ्यता

एवं सिन्ध के इतिहास से भली भांति अविगत कराया है। डॉ० सम्पूर्णानंद ने इस गवेषणात्मक पुस्तक का आमुख लिखते हुए लेखक की प्रशंसा की है।

प्राचार्य एन. एन. बठीजा:

प्राध्यापक नारायणदास बठीजा हिन्दी एव संस्कृत के विद्वान थे। वे जय हिन्द कालेज बन्बई में हिन्दी–संस्कृत विभाग के अध्यक्ष थे। उन्होंने माध्यम एवं अन्य पत्र पत्रिकाओं में हिन्दी भाषा में आलोचनात्मक लेख लिखे। साहित्य अकादेमी द्वारा प्रकाशित 'भारतीय कविता' संकलनों में सिन्धी कविताओं का हिन्दी काव्यबद्ध अनुवाद प्रा. बठीजा ने ही किया है।

पंडित देवदत्त शर्मा:

स्व: पंडित देवदत्त शर्मा ने कवि श्रीमाला के अन्तर्गत 'कवि किशनचन्द बेवसि' आलोचनात्मक पुस्तक लिखी है, जो राष्ट्रभाषा प्रचार समिति वर्धा द्वारा प्रकाशित की गई है। लेखक ने इस पुस्तक में कवि बेवसि का जीवन परिचय देते हुए उनकी काव्य साधना पर भी प्रकाश डाला है, साथ साथ उनकी मूल कविताओं का हिन्दी रूपांतर भी प्रस्तुत किया हैं।

आचार्य स्वामी गणेशदासजी महाराज:

साधुबेला आश्रम के धर्मपीठ के अधिकारी एवं कर्मयोगी संत आचार्य स्वामी गणेशदास जी महाराज ने हिन्दी में 'वेदान्त और अद्वैतवाद' पुस्तक लिखी है। उन्होंने आध्यात्मिक विषयों पर विद्वतापूर्ण लेख भी लिखे हैं जो विभिन्न पत्रिकाओं में प्रकाशित होते रहते हैं।

पंडित कृष्णचन्द्र जेतली:

पंडित कृष्णचन्द्र जेतली ने हिन्दी में 'सिन्धी भाषा का संक्षिप्त परिचय' पुस्तक लिखकर हिन्दी जगत् की अमूल्य सेवा की है। वे हिन्दी–संस्कृत के प्रकांड पंडित हैं। उन्होंने हिन्दी में गवेषणात्मक लेख लिखे हैं जो विभिन्न पत्र पत्रिकाओं में प्रकाशित हुए हैं।

डॅा. दशरथराज आसरानी:

डॉ० दशरथराज आसरानी ने सिन्धी भाषी होते हुए जो हिन्दी की सेवा की है, वह उल्लेखनीय है। उन्होंने हिन्दी में निम्न आलोचनात्मक पुस्तकें लिखी

हैं:- (१) हालावाद और बच्चन (२) कविवर सुमित्रानन्दन पंत व्यक्तित्व एवं कृतित्व (३) रसखान और उनका काव्य (४) सूर साहित्य विमर्श (५) रसलीन और उनका काव्य (६) संत रोहल की बानी'।

डॉ० दशरथराज को उनके शोध प्रबंध 'दक्खिनी हिन्दी प्रेम काव्य-गाथा' पर पूना विश्वविद्यालय ने पी एच्. डी. की उपाधि से सम्मानित किया। शोध के क्षेत्र में डॉ. दशरथराज ने प्रशंसनीय कार्य किया है। 'प्रेम नामा' (मध्य कालीन सूफी कवि हाजी वाली मुहम्मद कृत), शाह मीरांजी कृत 'खुशनामा और खुश नाज', त्रिट्टल बिपुल की बानी' उनके अन्य शोध प्रबंध हैं। उनके साहित्यिक निबंधों का संग्रह भी प्रकाशित हुआ है। उनके दो सामाजिक उपन्यास 'पंखों की छांव' एवं 'सफर और सपने', और मनोविज्ञानिक उपन्यास 'अंतिम पत्र' भी प्रकाशित हुए हैं।

डॉ. परसराम गिदवाणी :-

डेक्कन कालेज में सिन्धी विभाग के अध्यक्ष डॉ० परसराम गिदवाणी ने हिन्दी भाषा में 'सिन्धी-हिन्दी सूफी कवियों का तुलनात्मक अध्ययन' शोध प्रबंध पर सागर विश्वविद्यालय से पी एच्. डी. की उपाधि प्राप्त की; साथ साथ उन्होंने कुछ गवेषणात्मक एवं भाषा विज्ञान सम्बंधी निबंध भी लिखे हैं।

डॉ. मोतीलाल जोतवाणी :-

डॉ. मोतीलाल जोतवाणी ने 'सिन्धी भाषा, लिपि और साहित्य' पुस्तक लिखकर हिन्दी जगत को सिन्धी साहित्य, भाषा व लिपि सम्बंधी विषय से परिचित किया है। उन्होंने प्रसिद्ध सिन्धी साहित्यकार मिरज़ा कलीच बेग के उपन्यास 'ज़ीनत' का हिन्दी में अनुवाद किया है, जिस पर उन्हें केंद्रीय हिन्दी निदेशालय से १००० रुपये का पुरस्कार भी प्राप्त हुआ है। उन्होंने 'पीली बत्ती पर' लघु उपन्यास एवं कहानियां भी लिखी हैं। यह पुस्तक सन्मार्ग प्रकाशन दिल्ली द्वारा प्रकाशित हुआ है। उन्होंने हिन्दी में कई आलोचनात्मक निबंध लिखे हैं जो विभिन्न पत्र पत्रिकाओं प्रकाशित में हुए हैं।

डॉ. दयाल 'आशा' :-

डॉ. दयाल 'आशा' ने हिन्दी में 'सिन्धी कवियों की हिन्दी साधना' शोध प्रबंध स्तुत कर बम्बई विश्वविद्यालय से पी एच्.डी. की उपाधि प्राप्त की है।

उन्होंने इस शोध–प्रबंध में १९ शती तक के सिन्धी कवियों का हिंदी में योगदान पर प्रकाश डाला है। उन्होंने प्रसिद्ध सिंधी संत साहित्यकार तत्त्वज्ञानी शिक्षा शास्त्री साधु वास्वाणी के जीवन एवं उनके योगदान पर हिंदी में 'भारत के महापुरुषः साधु वास्वाणी' पुस्तक लिखी है। वे विभिन्न विषयों पर हिंदी में लेख लिखते रहते हैं जो विभिन्न पत्रिकाओं में प्रकाशित होते रहते हैं। उनके कुछ लेख आकाशवाणी के विविध भारती केंद्र से भी प्रसारित हुए हैं। यह शोध ग्रन्थ '२० शती के सिंधी कवियों का हिंदी में योगदान' भी इनके अध्ययन, अभ्यास, गवेषणात्मक रुचि एवं साहित्यिक साधना का द्योतक है।

स्वर्गीय अशोक कुमार भारती :

श्री अशोक कुमार भारती सिंधी होते हुए भी हिंदी के उदीयमान उपन्यासकार थे। सुप्रसिद्ध साहित्यकार कृष्णचन्द्र के संसर्ग में उन्होंने हिंदी उपन्यासों का सृजन किया। उनके तीन उपन्यास 'चंदन की राहें', 'चिराग बुझ गए', 'पत्थर के देवता' एवं कुछ हिन्दी कहानियां प्रकाशित हुए हैं। जीवन के वसंतकाल में ही वे संसार से चल बसे वरना वे हिंदी जगत् को अपनी कृतियों से मालामाल करते।

प्राचार्य विश्नदास शिवदासाणी :-

स्व: प्राचार्य विश्नदास शिवदासाणी ने रंगमंचीय एकांकी नाटक लिखे हैं। उनका हिन्दी में एकांकी संग्रह 'जीवन रेखा' प्रकाशित हुआ है। उन्होंने सामाजिक, राष्ट्रीय एवं सांस्कृतिक विषयों पर एकांकी नाटक लिखे हैं।

गोवर्धन भारती :

प्रसिद्ध सिंधी गीतकार श्री गोवर्धन भारती ने हिंदी में 'उमरु मारुई' नाटक लिखा है, साथ साथ उन्होंने कुछ एकांकी नाटक भी लिखे हैं।

संत आशाराम :

संत श्री आशाराम ने आध्यात्मिक विषय सम्बंधी 'सुख दुःख से परे' एवं 'आनंद का स्रोत' पुस्तकें लिखी हैं, जो योग वेदान्त सेवा समिति मोटेरा आश्रम साबरमती अहमदाबाद द्वारा प्रकाशित हुई हैं।

ईश्वरचन्द्र :

अजमेर राजस्थान में रहने वाले श्री ईश्वरचन्द्र का हिन्दी उपन्यास 'अंदर का बौनापन' एवं कहानी संग्रह प्रकाशित हुए हैं। उनकी हिंदी कहानियां विभिन्न पत्रिकाओं में प्रकाशित होती रहती हैं।

श्रीमती बीना अमर :

श्रीमती बीना अमर ने हिंदी में 'इन्तखाब', 'बूंद और सागर', 'स्पर्श' एवं 'घाव' चार उपन्यास लिखे हैं। उपन्यासों के साथ साथ उन्होंने कुछ कहानियां भी लिखी हैं। उनकी भाषा में सरलता, भाव-प्रवणता और स्पष्टता आद्यंत मिलते हैं। चरित्र चित्रण भी स्वाभाविक होता है।

प्रा. जीवतराम सेतपाल :

प्रा. सेतपाल कवि के साथ साथ गद्यकार भी हैं। वे हिंदी त्रिमासिक पत्रिका 'प्रोत्साहन' का सम्पादन कर रहे हैं। विभिन्न पत्रकाओं में उनके लेख प्रकाशित होते रहते हैं।

प्रा. सेतपाल का कहानी संग्रह 'रेत के कगार पर' एवं एक उपन्यास 'तुम्हारे नाम' भी प्रकाशित हुए हैं। 'कलंक का टीका' (कहानी संग्रह) 'बलिदान की वेदी पर' (एकांकी संग्रह) 'आकाश उड़ान और कटते हुए पर' एवं उत्सर्ग (उपन्यास) श्री सेतपाल जी की ये रजनाएं प्रकाश्य हैं। उनकी भाषा में सरसता एवं प्रवाह है।

डॉ. सतीश रोहड़ा :

डॉ० सतीश रोहड़ा हिन्दी के विद्वान हैं। उनकी पुस्तक 'भाषा 'हन्दी भाषा' प्रकाशित हुई है। उनके भाषा विज्ञान सम्बंधी लेख भी प्रकाशित हुए हैं।

श्री गोवर्धन शर्मा :

भाई गोवर्धन शर्मा ने हिन्दी में 'नया रास्ता', 'भाई बहन', 'मां बुलाती है' एकांकी नाटक लिखे हैं एवं कवि 'किश्नचन्द बेवसि', 'हेमू कालाणी', 'चेटी चंड' विषयों पर लेख लिखे हैं।

उपर्युक्त लेखकों के अतिरिक्त श्री टहलराम आज़ाद, श्री हरेश पंजाबी, श्री जयंत रेलवाणी.प्रा. प्रियतमदेव पमनाणी, प्रा. हीरो शेवकाणी, प्रा. जगदीश लछाणी, श्री कृष्णलाल बजाज, कु. कृष्णा भम्भाणी, कुमारी तुलसी अनंदाणी श्री बचाराम लेडवाणी, आदि सिन्धी भाषियों के लेख, हिन्दी पत्र पत्रिकाओं में प्रकाशित होते रहते हैं।

सिन्धी कवियों का हिन्दी में काव्य-सृजन

सिन्ध प्रदेश भौगोलिक दृष्टि से हिन्दी की मूल सृजन–भूमि से दूर होते हुए भी भावना, चिंतन और आध्यात्मिक साधना की कलात्मक अभि–व्यक्ति की दृष्टि से हिन्दी से जुड़ा हुआ है। सिन्धी के कतिपय कवियों एवं संतों ने अपनी मातृभाषा सिन्धी के साथ साथ हिन्दी में भी काव्य रचना की। विदेशी शासन के कारण सिन्धी भाषा एवं साहित्य पर विभिन्न युगों में फारसी अरबी एवं अंग्रेजी का प्रभाव रहा हे। किन्तु सिन्धी साहित्य की अंतश्चेतना इस प्रभाव के बावजूद देश की उसी परम्परा से जुड़ी हुई है, जिस से हिन्दी का अटूट और अनिवार्य सम्बंध रहा है।

व्यापारिक दृष्टि से सिन्ध का आदान–प्रदान भारत के अन्य पश्चिमी प्रदेशों से रहा है, जिन में अंतर्प्रादेशिक व्यवहार एवं व्यापार में अधिकतर हिन्दी का प्रयोग होता था। विभिन्न प्रांतों के संत और सूफी सिन्ध में आते थे और सिन्ध के संत एवं सूफी भी भ्रमणार्थ भारत के अन्य भागों में जाते थे। इनके पारस्परिक विचार–विनमय और धर्म-चर्चा भी हिन्दी के माध्यम द्वारा होती थी। इन परिस्थितियों के कारण यह स्वाभाविक था कि सिन्ध के संतोंने अपनी मातृभाषा के साथ राष्ट्र की व्यापकतर भाषा हिन्दी को अपनी अभि–व्यक्ति का माध्यम बनाया।

अठारहवीं एवं उनीसवीं शती में संत रोहल, मुराद, शाह, गुलामअली, दरियाखान, दलपतराय, निहालचन्द, बेदिल, जीवतसिंघ, ईसरलाल, रोशन अली,

सचल सरमस्त, स्वामी धर्मदास, भोजल, महाराज नयनाराम, दीवान सूरतसिंह, महाराज जयकृष्णदास, महाराज ठाकुरदास, महाराज बसंतराम, महाराज जवाहर-लाल, महाराज भगवानदास, मिसरी शाह, सेठि विशनदास, सेठि श्रीचन्द ने सिन्धी भाषी होते हुए भी हिन्दी में काव्य साधना की है। इन कवियों का विस्तृत वर्णन मैंने अपने शोध प्रबंध 'सिन्धी कवियों की हिन्दी साधना' में किया है।

जो संत काव्य-धारा सिन्ध में प्रवाहित हुई वह केवल १९ शती तक सीमित न रही। बीसवीं शती के पूर्वार्द्ध में भी सिन्ध में कुछ संत एवं सद्-गृहस्थी हुए जिन्होंने सिन्धी के साथ हिन्दी भाषा में भी संत काव्य का सृजन किया, जिनका उल्लेख इस शोध प्रबंध में किया गया है। ये संत अधिकतर वेदांत, संत कबीर, मीराबाई, श्री गुरु नानकदेव एवं उनकी परम्परा से प्रभावित दीख पड़ते हैं।

देश विभाजन के बाद अधिकतर सिन्धी विवश होकर अपनी जन्मभूमि सिन्ध छोड़कर भव्य भारत भूमि में आये। भौतिक पदार्थों की दृष्टि से अपना सर्वस्व भारतीय स्वतंत्रता संग्राम में स्वाहा कर के आये, किन्तु वे अपनी सभ्यता संस्कृति, साहित्य और भाषा साथ लाये। उनके जीवन में एक नया मोड़ आया। अपने को बसाने के लिए उन्हें कई कष्टो और कठिनाइयों का सामना करना पड़ा। इस संघर्षमय जीवन ने कई नये साहित्यकारों को जन्म दिया। सिन्धी भारत के विभिन्न प्रांतों में जा बसे, जिन परिस्थितियों और वातावरण में सिन्धी पनपे उनका उनके जीवन और साहित्य पर बड़ा प्रभाव पड़ा। सिन्धी साहित्य में नयी चेतना, नये विचारों की सृष्टि हुई। सिन्धी भाषा में भी परिवर्तन हुआ। सिन्ध में सिन्धी भाषा में अरबी-फारसी शब्दों की बहुतायत थी किन्तु यहां की सिन्धी में हिन्दी संस्कृत सब्दों का प्रयोग होने लगा। हिन्दी जन मन की भाषा है, साथ साथ वह एक ऐसी भाषा है जो सारे भारत वर्ष में बोली व समझी जाती है। विभिन्न प्रांतों में बसने के कारण सिन्धियों ने अपने व्यवहारिक एवं शैक्षणिक जीवन में हिन्दी का प्रयोग किया। कुछ सिन्धी साहित्यकारों ने राष्ट्रभाषा हिन्दी को अपने विचारों को व्यक्त करने का माध्यम बनाया।

बीसवीं शती के उत्तार्द्ध में भी कुछ सिन्धी कवि ऐसे हुए जिन्होंने

भक्ति, मानवता, भूदान आंदोलन, सर्वोदय, राष्ट्रीय विचार धारा से ओतप्रोत हिन्दी काव्य का सृजन किया। कवि हूंदराज दुखायल ऐसे कवियों में अग्रणीय हैं। कुछ सिन्धी कवियों ने देश का यथार्थ चित्र अपने हिन्दी काव्य में प्रस्तुत किया। कुछ नयी पीढ़ी के सिन्धी कवियों ने हिन्दी में नई कविता के क्षेत्र में योगदान दिया। इन कवियों ने नएं प्रतिमान एवं प्रतीकों का प्रयोग किया। इन कवियों का जीवन परिचय एवं काव्य विवेचन इस पुस्तक में प्रस्तुत किया गया है।

कुछ सिन्धी कवि सिर्फ सिन्धी समुदाय तक सीमत रहना नहीं चाहते थ, वे अपने काव्य का रसास्वादन भारतीय जनता को कराना चाहते थे, वे विस्त्रित क्षेत्र में अपनी विचार धारा फैलाना चाहते थे। वे विशाल जन समुदाय को अपने काव्य द्वारा संदेश देना चाहते थे।

उपर्युक्त परिस्थितियों के कारण सिन्धी कवियों ने हिन्दी में काव्य सृजन किया।

स्वामी गंगाराम

स्वामी गंगाराम का जन्म सिन्ध प्रांत के सक्खर ज़िला के चक तालुका में सन् १८६० में श्री भावनदास के घर में हुआ था। उनकी माता का नाम अङणबाई था। श्री भावनदास को अपनी दुकान थी। छुटपन में गंगाराम को उनकी दुकान पर बिठाया गया, किन्तु धंधे व्यवसाय में उनका मन नहीं लगता था। उनके पूर्वजन्म के ऐसे अच्छ संस्कार थे जो श्री गंगाराम ब्रह्ममुहूर्त को उठकर नाम स्मरण करते थे। जैसे ही उन्होंने युवावस्था में पदार्पण किया तो प्रभु की प्यास बढ़ती गयी। वे प्रतिदिन दुकान पर सत्संग करने लगे, जहां कुछ प्रेमी भी कथा कीर्तन श्रवण करने लगे। जब उनके पिता ने उनके सगाई की वात चलाई तब उन्होंने विवाह करने से आनाकानी की। माता पिता के समझाने पर विवश होकर उन्होंने विवाह किया। उनके पत्नी का नाम धर्मी था। श्री गंगाराम को तीन पुत्र संतान हुई।

श्री गंगाराम गृहस्थ में रहते हुए भी आध्यात्मिक प्यासी थे। उन्हें बहावलपुर के संत चांडूराम गुरू रुप में प्राप्त हुए। श्री गंगाराम अपने गुरू की असीम श्रद्धा के साथ सेवा करते रहे। गुरुदेव की कृपा दृष्टि हुई, अब गंगाराम को ब्रह्मज्ञान की उपलब्धि हुई। वे सांसारिक प्रपंचों का परित्याग कर 'स्मरण' में तल्लीन रहे। भाइयोंने अनुरोध किया कि ऐसे संसार का त्याग न करे, किन्तु वे प्रभु प्रेम के पथ पर अडिग रहे। उन्होंने चक नगर में 'सचखंड दरबार' मन्दिर की स्थापना की, जहां वे प्रेमियों को नाम का अमृत-पान कराने लगे।

साधकों के अनुरोध पर वे सिन्ध के विभिन्न नगरों में जाकर जिज्ञासुओं को नाम का संदेश देने लगे। श्रधा के कारण मुमुक्ष अब उन्हें स्वामी गंगाराम कहने लगे।

स्वामी गंगाराम बहुत समय मौन और एकांत में व्यतीत करने लगे, केवल रात के समय प्रेमियों के साथ ज्ञान गोष्ठी करते थे। सन् १९५० में एक दिन उन्होंने अपने एक प्रेमी श्री कुंदनदास से कहा "आज हम यहां से चल बसेंगे, आंसू नहीं बहाना।' वे घोड़े पर सवार होकर निकले और गैब में गायब हो गये।

काव्य रचना:

श्री गंगाराम सच्चे साधक थे, साधक से संत हुए। भक्ति साधना करते हुए उन्होंने भगवद् प्रेम, ज्ञान, वैराग्य इत्यादि विषयों पर श्लोक एवं पद लिखे। इनके पदों से प्रतिभासित होता है कि इन्हें भारतीय राग-रागनियों की भी जानकारी थी। इनकी अधिकतर वाणी सिन्धी भाषा में है किन्तु इन्होंने कुछ पद हिन्दी भाषा में भी लिखे हैं।

गुरू महिमा:

कवि अपने गुरु का बड़ा उपकार मानते हैं जिन्होंने उन्हें आतम साक्षात्कार का ज्ञान दिया। इस ज्ञान के कारण जन्म मरण का संशय भी नष्ट हो गया। गुरु ने उन पर ऐसी अनुकम्पा की जिस के कारण उनकी सुरति शब्द में समाहित हो गई और उन्हें अलौकिक परम आनंद की प्राप्ति हुई। कवि के मूल शब्दों में :-

आतम दरसी गुर ज्ञान बताया, जन्म मरण का संसा मिटाया।
शब्द अनाहद सुरति मिटाई, मन मस्त हुआ परम शान्ति पाई॥[1]

दार्शनिक विचार:

कवि गंगाराम वेदान्त दर्शन से प्रभावित दीख पड़ते हैं। वे जीव-ब्रह्म में अभेद मानते हुए कहते हैं कि जैसे आभूषण स्वर्ण का ही रूप है उसे स्वर्ण

---

१ सदा बहार गुल स्वामी गंगाराम पृष्ठ २७

से अलग नहीं मान सकते वैसे जीव भी ब्रह्म रूप है। जो भेद है वह नाम और रूप का। कवि गंगाराम जीव और ब्रह्म की एकता प्रतिपादित करते हुए कहते हैं :–

जीव ब्रह्म अनादि आतम राम सत् चित् आनंद सार, वे सत् मानो।
अद्वैत अक्रय अखंड अविनासी अभेद ओअंकार वे सत् मानो।
सोना गहना, गहना सोना, फोटा पानी सार, वे सत् मानो।
आप अल्पज्ञ आपे सर्वज्ञ, आपे सर्वाधार, वे सत् मानो।
नाम रूपी जाति भ्रम निवारो, खोजो तत् विचार, वे सत् मानो।
गंगाराम एकता जीव ब्रह्म की एको बोलण हार, वे सत् मानो।[१]

कवि गंगाराम की यह धारणा है ब्रह्म सर्वत्र विद्यमान है। वह भिन्न भिन्न रूप धारण कर लीला दिखा रहा है। बाहर भी वह है और काया नगर में भी वह ही विद्यमान है। कवि के मूल शब्दों में :–

सर्व के अंतर, सर्व के बाहर, बैठा बीन बजाए,
साखी चेतन सर्व समाना, सर्व में एक समाए।
काया नगर में कृष्ण कनैयो मोहन मुरली बजाए,
नाचे गावे ताल बजावे सखियां संग नचावे।
वृन्दावन में रास रचाए, सहसें रूप बनाए,
रूप रूप में रमियो नियारो साखी संग बजाए।[२]

जगत् में ब्रह्म का ही केवल विराट अस्तित्व है। जैसे कठ पुतली को नचाने की डोर सूत्रधार के पास होती है वह अपनी इच्छानुसार उसे नचाता है, उसी प्रकार जगत् की बाग डोर ब्रह्म के हाथ में है वह इच्छानुसार जगत् को चलाता है।

जैसे नट दी पुतली नाचे, तैसे नाचे संसार।[३]

---

१ सदा बहार गुल — पृष्ठ १२
२ वही — पृष्ठ ३
३ वही — पृष्ठ १७

जीव अपनी काया पर कितना अभिमान करता है? यह काया तो मिट्टी की है और एक दिन मिट्टी में मिल जायेगी। कवि गंगाराम ऐसे दार्शनिक विचार प्रस्तुत करते हुए कहते हैं :–

यह तन खाके खाक दा पुतला, होसी भस्म छार।
रत बोइ दा ही पेंडा बनिया, पांच ततों का पसार।
मिटी मूं उपजा मिटी समाया, मिटी सब सींगार।[1]

जीव माया के प्रपंच में फंसकर किंकर्तव्य विमूढ़ हो जाता है। उसे मनुष्य की देह नाम स्मरण के लिए प्राप्त हुई है किन्तु वह माया के प्रलोभन में नाम को बिसार बैठा है। कवि गंगाराम कहते है :–

मानुष जन्म तो पाया, कैसी सुंदर तेरी काया।
भजन लिए तू आया मत भूल, गए विच माया ।।[2]

कवि माया में भटके हुए मनुष्य को परामर्श देते हुए कहते हैं कि प्रभु के बिना तेरा और कोई नहीं, उसके साथ नाता जोड़ो, माया से नाता तोड़ो।

हरि बिन तेरा मित्र न कोई करलो नाम व्यापार।

मोक्षः

माया से मुक्ति प्राप्त करने के लिए कवि संतों की शरण लेने का परामर्श देते हैं।

गंगाराम संत की शरना लेवो, पावो मोक्ष द्वार। [4]

श्री गंगाराम के अनुसार संतों का संग ही मोक्ष का द्वार है वे कहते हैं :–

साध को संगति मुक्ति की पोड़ी और नहीं कोई ठोर।[5]

दास्य भावनाः

कवि गंगाराम के काव्य में सूरदास की भांति दास्य भावना भी है। वे प्रभु से विनय करते हुए कहते हैं कि प्रभु तुम्हारे विना मेरा और कोई नहीं।

---

१ सदा बहार गुल — पृष्ठ १६
२ वही — पृष्ठ २२
३ वही — पृष्ठ १४
४ वही — पृष्ठ १७
५ वही — पृष्ठ ७

तीनों कालों में तूही मेरा आधार हो, तूने ही भरी सभा में द्रौपदी की लाज राखी और दूर्योधन का संहार किया, गज की पुकार सुनकर उसकी रक्षा की। अपने भक्तों की तो रक्षा की किन्तु तू ने कितने पतितों का भी उद्धार किया। कवि के मूल शब्दों में :–

प्रभुजी तुम हो मेरी पनाह।
आदि मध्य अन्त तेरा भरोसा, और नहीं का।
द्रौपदी की लाज तो सभा में राखी, दुर्योधन कीनो दाह।
गज की पुकार सुनी तू मुरार मार डारियो तो ग्राह :
नाम भक्त को भीड़ ते राखियो मुया गऊँ जीवाह।
जितने पापी तू अपराधी तारिया, बख्शे सब गुनाह।
दास गंगाराम सरन तिहारी सगले दर्द मिटाई।[1]

कला पक्ष :

स्वामी गंगाराम के सात हिन्दी पद उपलब्ध हैं। इन पदों में संगीतात्मकता है, दर्शन की ऊंचाई है। सहज रूप से इसके पदों में छेकानुप्रास, उपमालंकार, रूपक अलंकार एवं उदाहरण अलंकार का अच्छा प्रयोग हुआ है। कुछ उदाहरण प्रस्तुत हैं :–

छेकानुप्रास :

अद्वैत अक्रय अखंड अबिनासी, अभेद ओअंकार।
अमुल अडोल सिद्ध सरूपा साखी सोहंकार।[2]

उपमालंकार :

जैसे नट की पुतली नाचे तैसे नाचे संसार।[3]
देह होते विदेह मुक्ता ज्यों संसार सागर में गुल तरता।[4]

१	सदा बहार गुल	पृष्ठ ६
२	वही	पृष्ठ १२
३	वही	पृष्ठ १७
४	वही	पृष्ठ ३

साधु टी. एल. वास्वाणी

१९ वीं शती के उत्तरार्ध में सिन्ध में ज्ञान–भक्ति–प्रेम और करुणा के चन्द्र का उदय हुआ, जिसने न केवल सिन्ध भूमि को अपने प्रकाश से आलोकित किया परन्तु विश्व को अपनी ज्योति और सुधा से विभोर किया। ये चांद थे श्री थांवरदास लीलाराम वास्वाणी जो दादा साधु वास्वाणी के नाम से प्रसिद्ध हुए। इनकी सामाजिक, साहित्यिक, शैक्षणिक एवं राष्ट्रीय सेवाओं के कारण भारत सरकारने इनकी स्मृति में २५ नवम्बर १९६९ में एक डाक टिकट निकाला।

दादाजी का जन्म २५ नवम्बर सन १८७९ इ. में कार्तिक एकादशी के पवित्र दिन हैदराबाद सिन्ध में हुआ। उनके पिता श्री लीलाराम वास्वाणी देवी माता के अनन्य भक्त थे और माता वरांबाई ईश्वर आराधिका थी। श्री जप साहब और श्री सुखमनी साहब उसे कंठस्थ थे। वह प्रातःकाल उठकर गुरुवाणी का जाप करती थी और घर का कामकाज भी करती। ऐसे वातावरण में दादाजी का पालनपोषण हुआ।

दादा जब स्कूल में जाने लगे तब माँ ने आज्ञा दी कि तुम स्कूल में जाने से पहले प्रार्थना करो, पूजा पाठ करो, बाद में नाश्ता खाओ। तब बालक दादा ने पुछा यदि नाश्ता तैयार न हो तो नाश्ता किए बिना ही स्कूल में जाऊँ? माता ने कहा, "बेटा, अगर नाश्ता तैयार न हो तो नाश्ता किये बिना स्कूल में जाओ, परन्तु प्रार्थना के बगैर नहीं। पूजा-पाठ और प्रार्थना करने के

पश्चात् स्कूल में जाओ। दादाजी ने मां को इस आज्ञा का पूरा पूरा पालन किया।

स्वभाव से बालक दादा अन्य विद्यार्थियों में भिन्न थे। उनको जो पैसे खर्ची के लिए मिलते थे, उन में थोड़ा कुछ खर्च कर शेष पैसे अपाहिजों में बांट देते थे। किसी से अधिक बातचीत नहीं करते थे। वे शान्त चित्त और हंसमुख थे। वे पढ़ने लिखने में भी प्रवीण थे। गुरुजनों के लिए भी इनके मन में आदर था; इसलिए गुरुजन भी इनको प्यार करते थे।

दादाज़ी बाल्यावस्था में भी मां–बाप की सेवा करते थे। प्रभात को मां के साथ गुरुवाणी का उच्चारण करते थे। स्कूल एवं घर का कामकाज पूरा करके बालक दादा घर के ऊपर एकांत में बैठकर संतों–महात्माओं के जीवन चरित्र पढ़ते थे। कहते हैं कि दादा आठ वर्ष के थे तो उन्हें ज्योति का दर्शन हुआ और आवाज़ आई "हे बालक तुम्हें इस संसार में बड़ा काम करना है।" दादाजी ने आत्म–कथा में लिखा है कि उनका सच्चा जन्म तो उसी रात्री को हुआ जिस रात्री को उन्हें दिव्य ज्योति का दर्शन हुआ। उस घटना के बाद वे संतों–महात्माओं के संसर्ग में आये।

एक दिन बालक दादा स्कूल जाते हुए रास्ते से गुजरते हैं तो देखते हैं कि कुछ दुकानों पर मांस के टुकड़े लटके हुए हैं और उनमें से रक्त की बूंदें नीचे गिर रही हैं। दादाजी साथियों से पूछते हैं कि यह क्या है? सहपाठी उनके इस प्रश्न पर हंसते हुए उत्तर देते हैं कि ये मांस के टुकड़े हैं, बकिरियों को मार काटकर उनका मांस निकालकर वे कसाई लोग बेचते हैं। लोग इस मांस को खरीदकर घर में इस को भुनकर नमक मिर्ची डालकर खाते हैं। तुम भी तो खाते होंगे। क्या तुम्हें यह जानकारी नहीं! यह सुनकर दादाजी की आंखों में आंसू आ गए। हमदर्दी के आंसू, करुणा के आंसू पश्चाताप के आंसू।

स्कूल से लौटते ही बालक दादाजी ने रोते हुए मां से कहा, "मां भविष्य में मूझे मांस मत खिलाना। मैं मांस कभी नही खाऊँगा।"

प्राथमिक सिन्धी शिक्षण के पश्चात् बालक दादा अंग्रेजी स्कूल में दाखिल हुए; जहां साधु हीरानंद आडिवाणी जैसे महान समाज सुधारक, शिक्षाशास्त्री

और निष्काम सेवक का गुरु रूप में उन्हें सान्निध्य प्राप्त हुआ। उनके विचारों और ऋषितुल्य जीवन का भी इनके जीवन पर बड़ा प्रभाव पड़ा।

अब दादाजी के पिताजी श्री लीलाराम वास्वाणी ब्रह्मलीन हुए। घर की आर्थिक स्थिति ठीक न होने के कारण दादाजी के बड़े भाई श्री पहिलाजराइ कालेज छोड़कर नौकरी करने लगे और दादाजी की पढ़ाई और पालन-पोषण की पूरी देखभाल करने लगे। दादाजी को उनकी प्रवीणता के कारण चौथी अंग्रेजी कक्षा में ही छात्र वृत्ति मिली। बालक दादा बड़े परिश्रमी थे। पिताजी के ब्रह्मलीन होने के कारण इनके मन में त्याग वृत्ति उत्पन्न होती है। उनके मन में संसार की नश्वरता सम्बंधी विचार उत्पन्न होते हैं और प्रभु के लिए प्यास उत्पन्न होती है। परन्तु मां को प्रसन्न करने के लिए दादा विद्याध्ययन का परित्याग नहीं करते। वे दत्तचित्त होकर विद्याध्ययन करते हुए छोटे छोटे सेवा के कार्य भी करते हैं, और रसना से 'कृष्ण कृष्ण' का जाप करते हैं। दादाजी मैट्रिक परीक्षा में सारी सिन्ध में प्रथम श्रेणी में प्रथम आए और उन्हें मेकलियूड स्कॉलरशिप प्राप्त हुई।

मैट्रिक उत्तीर्ण होने के बाद दादाजी कराची कालेज में दाखिल हुए। अपने विनम्र स्वभाव प्रवीणता एवं अन्य चारित्रिक गुणों के कारण दादाजी कालेज में सब के प्रिय बन गये। अंग्रेजी में बड़े हुश्यार थे। एक दिन कालेज के प्राचार्य हैज़िकीथ ने कॉलेज के विद्यार्थियों को किसी विषय पर निबंध लिखने के लिए कहा। दादाजी ने भी निबंध लिखा। दादाजी का लिखा निबंध पढ़कर प्राचार्य मन्त्रमुग्ध हो गये और दादा से कहने लगे कि तुम्हारी अंग्रेज़ी तो एनी बेसंत जैसी लगती है।

दादाजी ने उच्चस्तरीय विद्याध्ययन के साथ साथ गुरुवाणी और श्रीमद् भगवद्गीता का अभ्यास एवं अनुशीलन किया। वे जवानों को सत्मार्ग पर आकर्षित करना चाहते थे। अपने सहपाठियों को प्रार्थना करने के लिए प्रेरित करते थे।

दादा ने विद्यार्थी जीवन में विद्याध्ययन के साथ अपने सहपाठियों में प्रार्थना, सेवा, सादगी, सत्य, स्नेह के बीज बोए। इनके संसर्ग में विद्यार्थियों ने मांस भक्षण का त्याग किया।

दादा बी. ए. की परीक्षा देने के लिए बम्बई में आए। वे बम्बई विश्वविद्यालय की बी. ए. परीक्षा में अंग्रेजी विषय में प्रथम श्रेणी में प्रथम आए। इसी कारण विश्वविद्यालय की ओर से उन्हें ,एलिस' स्कॉलरशिप प्रदान की गयी।

अध्यापन कार्य : अपनी प्रतिभा और प्रवीणता के कारण दादाजी कराची कालेज में लेक्चरर नियुक्त किये गये। साथ साथ वे अध्ययन भी करते रहे। दो वर्ष के बाद उन्होंनें एम. ए. की परीक्षा उत्तीर्ण की। कराची में दादा ब्रह्मो समाज के संपर्क में भी आए। ब्रह्मो समाज वाले उन्हें व्याख्यान देने के लिए निमंत्रण देते थे। उनके व्याख्यान में एक अजीब तासीर था, जादू का असर था। लोग व्याख्यान सुनकर मंत्रमुग्ध हो जाते थे।

ब्रह्मो समाज के साथ अच्छे सम्बंध होने के कारण उन्हें तार आई कि वे कलकत्ता के विद्यासागर कालेज में इतिहास एवं तत्वज्ञान के प्राध्यापक नियुक्त किए गये हैं। सन् १९०३ में कलकत्ता गये। उन्हों ने अपने व्याख्यान से न केवल विद्यासागर कालेज के विद्यार्थियों को विमुग्ध कर दिया परन्तु अपनी विद्वता एवं आदर्शों के कारण कलकता के कोने कोने में प्रसिद्ध ए। दादाजी के मन में सब ही धर्मों, अवतारों, महापुरुषों के प्रति श्रद्धा थी, सब को समान रूप से प्यार करते थे। वे समन्वयवादी थे। दादाजी छुट्टियों में सिन्ध में अपने घर में आए अब मां की इच्छा थी कि उनका बेटा थांवर (दादाजी) विवाह योग्य है, उसे अच्छी नौकरी भी है, क्यों न अब उस का विवाह किया जाय। मां ने उनसे विवाह के लिए कहा परन्तु दादाजी ने बातों बातों में शादी की बात टाल दी। मां ने कई बार उन्हें समझाया परन्तु दादाजी आनाकानी करते रहे। वे मां से कहते थे, "मुझे तो प्यास है पिया मिलन की, अखियां हरिदर्शन की प्यासी, मुझे तू आशीर्वाद करो कि मैं जिस प्रियतम की खोज में हूं, उसे पाऊँ, उसके गीत गाऊँ!"

छुट्टियों के बाद जब दादा कलकत्ता आये तब वहां उन्हें श्री नालूदा सद्गुरू के रूप में प्राप्त हुए। उनके चरण-कमलों में बैठकर दादाने आध्यात्मिक ज्ञान की उपलब्धि की। श्री नालूदा एक महान दार्शनिक, वरिष्ठ विद्वान, ब्रह्मज्ञानी, एवं संस्कृत के प्रकांड पंडित थे। साथ वे अत्यंत सरल प्रकृति के सत्पुरुष थे। आडंबर से दूर, दादाजी गुरू की असीम अनुकम्पा से भक्ति एवं ज्ञान के पथपर

अग्रसर होते रहे। कई लोग उनका प्रवचन सुनने के लिए आते थे। माताजी से स्नेह और ममतापूर्ण कई पत्र इनके पास आते रहे परन्तु दादाजी अपनी साधना में तल्लीन रहे।

माँ नहीं चाहती थी कि उसके जीते जी उसका बेटा (दादाजी) साधु का भेष धारण करे। जब दादाजी फिर कलकत्ता से सिन्ध में आए तब मां ने उन्हें कहा, "बेटा जब तक मैं जीवत हूँ तब तक तू साधु का भेष मत धारण करना। दादाजी ने मां की आज्ञा शिरोधार्य की। दादाजी ने माताजी के देहा-वसान के पश्चात् साधु का भेष धारण किया।

सन् १९०८ में दादाजी डी. जी. कालेज कराची में दर्शन के प्राध्यापक नियुक्त किये गये। वहां उन्होंने एक आश्रम की स्थापना की, जहां वे विद्यार्थियों को श्रीमद् भगवद्गीता, श्री सुखमनी साहब एवं अन्य धार्मिक ग्रंथों का संदेश देते थे। उनके चरित्र निर्माण, शारीरिक एवं मानसिक विकास के लिए वे प्रयत्नशील थे। उन्होंने न केवल विद्यार्थियों को प्रभावित किया परन्तु जनता में भी लोकप्रयता प्राप्त की।

२९ वर्ष की आयु में दादाजी को बर्लिन में विश्वधर्म सम्मेलन में सम्मिलित होने के लिए निमंत्रण मिला। यह सिन्ध के लिए भी गौरव की बात थी कि सिन्धी युवा प्राध्यापक को विदेश होनेवाले सम्मेलन का निमंत्रण मिले। दादाजी ने बर्लिन के लिये प्रस्थान किया।

विदेशी दादाजी का विद्वतापूर्ण व्याख्यान सुनकर मंत्रमुग्ध हो गये। दादाजी ने अपने भाषण में वेदों और उपनिषदों का संदेश दिया। आध्यात्मिक उन्नति पर विशेष बल दिया। उन्होंने ६ मास यूरोप की यात्रा की। उस यात्रा के दौरान दादाजी ने वहां भारतीय संस्कृति, सभ्यता, ज्ञान, भक्ति, कर्म इत्यादि विषयों पर विद्वतापूर्ण व्याख्यान दिये। बहुतेरे लोग उनकी प्रेम की डोरी में बंध गये।

सन् १९१२ में दादाजी को लाहौर के दयालसिंघ कालेज के प्राचार्य के पद के लिए विनय की गयी। उन्होंने निमंत्रण स्वीकार कर लिया। उन्होंने पद

लालसा के लिए यह पद ग्रहण नहीं किया, परन्तु वे चाहते थे कि भारत के विभिन्न प्रांतों एवं नगरों में प्रभु के प्रेम का पैगाम दें। दयालसिंह कालेज में प्राचार्य के पद पर रहते हुए उन्होंने अपनी विद्वता, वाचस्पत्य, प्रतिभा और प्रभु प्रेम का परिचय दिया। न केवल कालेज के विद्यार्थी उनके व्यक्तित्व एवं विचारधारा से प्रभावित हुए परन्तु लाहोर के नागरिकों के मन में दादाजी के प्रति अगाध श्रद्धा उत्पन्न हुई। जब दादाजी वहां श्री गुरु ग्रंथसाहब के वाणी का विवेचन करते थे तो पंजाबी लोग चकित हो जाते थे।

सन् १९१५ में फिर दादाजी कूच विहार के विक्टोरिया कालेज के प्राचार्य हुए।

सन् १९१६ फिर दादाजी को महेंद्र कालेज पटियाला के प्राचार्यपद के लिए विनय की गयी। दादाजी अब पटियाला में आ गये। वहां भी उन्होंने सेवा स्मरण एवं भारतीय सिद्धांतों का संदेश दिया। उन्हें पूज्य माताजी के बीमार होने की तार आयी। उस समय कराची में हैजा का रोग फैल गया था, दादाजी की मां भी इस रोग से पीडित थी। दादाजी शीघ्र ही कराची में माताजी के यहां पहुँचे।

वे रात–दिन माताजी की सेवा करने लगे। पूज्य माताजी का इस बीमारी के परिणाम स्वरूप देहावसान हुआ। अब दादाजी सांसारिक बंधनों से मुक्त हुए। उन्होंने पटियाला कालेज के कार्यकर्ताओं को तार द्वारा अपना त्यागपत्र भेजा।

सन् १९१८ दादाजी ने अमीरी वस्त्रों का त्याग कर स्वदेशी खादी के वस्त्रधारी बन गये और अपने पूर्व वस्त्र गरीबों में बांट दिये। उन्होंने लोक–कल्याण के लिए उपासना वर्ग आरंभ किया, साथ साथ 'न्यूटाईम्स' पत्रिका का प्रकाशन किया। इस पत्रिका में विशेषकर धार्मिक विषयों पर लेख दिये जाते थे। दादाजी अलग अलग स्थानोंपर ज्ञान–भक्ति कर्म इत्यादि विषयों पर व्याख्यान देकर लोगों का मार्गदर्शन करने लगे। उन्होंने कई साधकों को आत्मोन्नति–पथपर अग्रसर किया और प्रभु प्राप्ति के लिए पथ प्रशस्त किया।

स्वतंत्रता संग्राम में भाग:

सारे देश में आजादी का आंदोलन जोरशोर से चल रहा था। अब

दादाजी न केवल भक्ति के क्षेत्र में परन्तु राष्ट्र की सेवा के लिए भी तत्पर हुए। देश के स्वतंत्रता संग्राम में उन्होंने सक्रय भाग लिया। वे राष्ट्र नायक श्री लोकमान्य तिलक एवं राष्ट्रपिता महात्मा गांधी की विचारधारा से अत्यंत प्रभावित हुए। दादाजी ने अपने लेखों एवं व्याख्यानों द्वारा लोगों में आज़ादी के प्रति जागृति पैदा की एवं उनमें राष्ट्रीय चेतना फूंकी। उन्होंने विदेशी वस्तुओं का बहिष्कार किया और स्वदेशी–वस्तुओं का प्रचार किया। श्री लोकमान्य बालगंगाधर तिलक जब सिन्ध में आये तव उन्होंने कराची में खालिकडिने सभाग्रह में अत्यंत उत्साहवर्धक व्याख्यान दिया। उस सभा के अध्यक्ष भी दादाजी थे। दादाजी ने वहां श्री लोकमान्य तिलक का हार्दिक स्वागत करते हुए उनकी अमूल्य राष्ट्रीय सेवाओं का उल्लेख किया और देश–वासियों को स्वतंत्रता संग्राम में जुट जाने के लिए प्रोत्साहित किया। दादाजी ने स्वयं खादी के वस्त्र पहने और आजीवन खादी की पोशाक पहनते रहे। दादाजी ने अपनी सिन्धी एवं अंग्रेजी कविताओं द्वारा भी भारतीयों में राष्ट्रभक्ति की भावना फूंकी। वे बंग–भंग के विरुद्ध चलाए गए आंदोलन से भी सम्बद्ध थे। उन्होंने भारत के भिन्न भिन्न नगरों में जाकर भारतीयों को राष्ट्रीयता और निर्भयता का संदेश दिया।

दादाजी के नेतृत्व में एक स्वराज्य टोली की स्थापना भी हुई। दादाजी ने उस टोली के सदस्यों को आज्ञा दी कि किसी के विरुद्ध कटु वचन मत बोलो और नारे लगाते हुए भी खराब शब्दों का प्रयोग मत करो। जब राष्ट्र पिता महात्मा गांधी सिन्ध से आए तब वे दादाजी के साथ अत्यंत प्रेम के साथ मिले। बापूजी ने दादाजी के संबंध में बहुत कुछ सुना और पढ़ा था। उनके मन में दादाजी के प्रति श्रद्धा थी। महात्मा गांधी ने जब "यंग इंडिया" पत्रिका का संपादन किया तब उनके प्रथम अंक के मुखपृष्ठ पर उन्होंने दादाजी का लेख दिया। दोनों महापुरुषों के विचारों में समानता थी।

दोनों ही सत्य अहिंसा, श्रीमद्भगवद्गीता एवं रामायण के उपासक थे। दोनों ही राम और कृष्ण के भक्त थे। दोनों ही राष्ट्र भक्त एवं राष्ट्रसेवी थे। दोनों ही मानव मात्र के हितकारी और परोपकारी पुण्यात्मा थे। दोनों का जीवन कुरबानी का जीवन था। दोनों के दिल में दुखियों दरिद्रों के लिए दर्द थी।

जब बापूजीने 'अछूत उद्धार' हलचल शुरू की तब दादाजी ने भी उस हलचल में सक्रय भाग लिया। सखी सत्संग की ओर से अछूत बालकाओं और बहनों को सत्संग में आमंत्रित किया गया, उन्हें प्रसादी दी गई। दादाजी ने अछूत उद्धार पर कई बार व्याख्यान भी दिये और जनता से अनुरोध किया कि वे अछूत नहीं ये हरिजन हैं, प्रभु के प्यारे हैं। इन के लिए न केवल मन्दिरों के दरवाज़े खोल दो, किंतु अपने दिल के द्वार भी खोल दो। प्रभु जाति पाति नहीं देखता, वह देखता है प्रेम। हमने लाखों हिन्दु भाइयों को अछूत कहकर उनका तिरस्कार किया है। आओ आज उन्हें अपने गले लगाएं। बापूजी को इस हलचल में पूर्ण सहयोग दें।

कर्मयोगी ऋषितुल्य जीवन

दादाजी के ऋषितुल्य जीवन के कारण जनता में इनके प्रति श्रद्धा व प्रेम बढ़ता गया और जनता ने उन्हें "दादा वास्वाणी" और "साधु वास्वाणी" शब्दों द्वारा संबोधित किया। महर्षि कर्वे जब सिन्ध में आये तब एक उत्सव का आयोजन किया गया, उस की अध्यक्षता भी दादाजी ने की।

दादाजी सिन्ध के विभिन्न नगरोंमें प्रेमियों को नाम रूपी अमृत का पान कराने लगे। वहां उन्होंने स्मरण और सेवा का संदेश देकर मार्गदर्शन किया।

दादाजी सदैव रेल के तीसरे दरजे में यात्रा करते थे। जनसाधारण और गरीबों का संपर्क तीसरे दरजे में ही सम्भव है, वे उनके साथ संपर्क स्थापित करना चाहते थे। दादाजी जब रेल के डब्बे में बैठते तो वह रेल का डब्बा भी सत्संग स्थल बन जाता था, वहां राम नाम की गूंज होती थी। प्रभु प्रेम के गीतों की गुंजार से सारा डब्बा गूंज उठता था। खाने के समय दादाजी डब्बे में बैठे अन्य यात्रियों को खिलाकर बाद में स्वंय खाते थे। कैसा न प्रेम का वातावरण! अपनेपन का वातावरण।

दादाजी सोए हुए लोगों को जगाने से लिए प्रभात के समय संकीर्तन की टोली निकालते थे। भाई बहने भक्ति रस से ओतप्रोत भजन गा गा कर जनता को प्रभु पथ के लिए प्रेरित करते, उन्हें मोह और अज्ञान की नींद से जागृत करते थे।

दादा सप्ताह में एक दिन मौन धारण करते थे। वे उसी दिन उपवास

भी रखते थे। हैदराबाद में गुरु संगत, थियासाफी सोसाइटी, ब्रह्मो समाज, भाई ईसरदास के मंदिर एवं अन्य स्थानों पर दादाजी के व्याख्यान होते रहते थे। दादा श्रीमद्भगवद् गीता एवं श्री सुखमनी साहब के विशेष वर्ग चलाते थे, जहां वे इन दोनों ग्रंथों के रहस्यात्मक एवं गूढ़ विषयों को सरल भाषा में समझाते थे।

दादाजी बहनों से कहते थे घर का कामकाज पूरा करके बाद में सत्संग में आओ। अपने अपने कर्तव्यों का पालन करो, घरों को स्वर्ग बनाओ, घर सुखी हैं तो देश सुखी होगा। अपने बाल बच्चों को प्रभु का रूप समझकर प्रेम से उनकी सेवा करो परन्तु आसक्ति नहीं रखो।

दादाजी कुछ समय के लिए राजपुर के शक्ति आश्रम में भी रहे। दादाजी ने वहां भी भक्ति और शक्ति का संदेश दिया। दादाजी के कारण उस आश्रम में नया वातावरण पैदा हुआ उन्होंने साधकों के शंकाओं का समाधान भी किया।

जीवदया सम्मेलन:

बम्बई में अखिल भारतीय जीवदया सम्मेलन होने वाला था। कार्यकर्ताओं ने दादाजी को उस सम्मेलन का सभापति होने के लिए विनय की। दादाजी ने इनकी विनय स्वीकार की। वे सम्मेलन में पधारे। वहां अध्यक्ष पद से भाषण करते हुए उन्होंने कहा "भाईयो और बहनों सम्मेलन का अर्थ है स्नेह का मिलन। सभी प्राणियों को अपना स्नेह दो।

"दया धर्म का मूल है"

आज संसार को दया की जरूरत है। तुम्हारे दिल दया से भरपूर हैं केवल अपने दया के द्वार खोलो। इस सम्मेलन का संदेश है :

"अहिंसा परमो धर्म"

अपने जीवन में दया और करुणा की, प्रेम और अहिंसा की ज्योति जगाओ।

दादाजी के ऐसे हृदय द्रवित वचन सुन कर श्रोतागणों की आंखो में आंसू आ गए।

इस अवसर पर अखिल भारतीय जीवदया सम्मेलन की रजत जयंती

मनाई जा रही थी। कांग्रेस के अध्यक्ष बाबू राजेंद्र प्रसाद, पंडित मदन मोहन मालवीय, सरोजनी नैडू और देश के कई बड़े बड़े विद्वान ओर महापुरुष वहां पधारे। इस उत्सव में दादाजी को जीवदया सम्बंधी सेवाओं के कारण 'सन्मान पत्र दिया गया।

दादाजी कोलंबो में :

अब दादाजी को कोलंबो में होनेवाली "एशया शांति सम्मेलन" में सम्मिलित होने के लिए निमंत्रण आया। दादाजी तो विश्वशांति के अलम्बरदार थे। वे इस सम्मेलन में सम्मिलित होने के लिये कोलंबो आए। वहां उन्होंने गौतम बुद्ध का संदर्भ देते हुए शान्ति और प्रेम का संदेश दिया। कोलंबो के आनंद कालेज में उनका स्वागत किया गया। दादाजी ने कोलंबो में अलग अलग स्थानों पर व्याख्यान दिये। उनकी विद्वता, वाचस्पत्य एवं वाग्मिता से लोग अत्यंत प्रभावित हुए।

दादाजी कोलंबो से लौटे, तो फिर भारत के भिन्न भिन्नि नगरों ने उन्हें निमंत्रण आए। दादाजी फिर मद्रास एवं अन्य नगरों में गए और वहां प्यासियों की प्यास पूरी की। कलकत्ता में गीता जयंती उत्सव में भी दादाजी ने विद्वता पूर्ण व्याख्यान दिये।

मीरा विद्या हलचल :

विद्या मनुष्य का तीसरा नेत्र है। दादाजी चाहते थे कि विद्यार्थियों को सच्ची विद्या मिलनी चाहिए, जैसे वे देश के आदर्श नागिरक हों, वीर हों, ज्ञानी और गंभीर हों। इन आदर्शों को विचार में रखकर दादाजी ने हैदराबाद सिन्ध में 'मीरा विद्या हलचल' आरंभ की और उस सिलसिले में मीरा हाइ-स्कूल की भी स्थापना की। विद्या-मंदिर में विद्यार्थियों को न केवल पुस्तकीय ज्ञान दिया जाता था, परंतु विद्यार्थियों में प्रार्थना, पवित्रना, सत्य, स्नेह, सेवा सादगी के बीज बोए जाते थे।

दादाजी के नेतृत्व में हलचल प्रगति के पथपर अग्रसर होती रही। हज़ारों विद्यार्थियों के जीवन को नया मोड़ मिला। न केवल हैदराबाद में परंतु सिन्ध के अन्य नगरों में भी दादाजी की इस मीरा हलचल का प्रभाव पड़ा।

दादाजी भारत में :

देश के विभाजन के कारण सिन्ध की फिज़ा बदल गई। अपनी मातृभूमि

सिन्ध में ऐसी कट्टरता एवं अत्याचार देखकर, दादाजी ने अपने वतन को छोड़ने का फैसला किया,दादाजी अब हैदराबाद से कराची में आए फिर कराची से दादाजी, दादा जशनजी, बहन हरी, दादी शान्ति और बहन सती श्री दुर्गादास के साथ वायुयान द्वारा बम्बई आए।

विभाजन के पश्चात् अनेक सिन्धी हिंदू अपना सर्वस्व सिन्ध में छोड़कर भारत के भिन्न भिन्न नगरों में आकर बस गये। कई लोग जलयान द्वारा बम्बई आए। सरकार की ओर से उन लोगों को अलग अलग कैम्पों में बसाया गया। दादाजी उन दुखी भाइयों की देखरेख करने के लिए कुर्ला कैम्प, मुलुंड कैम्प, अकबर कैम्प, कल्याण कैम्प एवं अन्य कैम्पों में गये, जहां उन्होंने पीड़ित सिन्धी समुदाय को सांत्वना दी, स्नेह दिया और कुछ जरुरतमन्दों को सहायता भी की।

बम्बई में दादाजी सप्ताह में दो दिन श्री दुर्गाप्रसाद के घर में सत्संग करते थे, जहां कई सत्संग–प्रेमी आकर अपनी प्यास पूरी करते थे। दीवान तनूमल एवं अन्य प्रेमी पूना आकर बसे। उन्होंने दादाजी से अनुरोध किया कि वे पूना में आकर बसें। १३ फरवरी सन १९४९ को दादाजी पूना की पुण्य भूमि में पधारे। अब उन्होंने वहां सत्संग और विभिन्न कार्य प्रारंभ किये।

पूना की पुण्य भूमि में दादाजी की आज्ञा एवं प्रेरणा से फिर मीरा स्कूल प्रारंभ किया गया। दादा साधु वास्वाणी एवं दादा जे. पी. वास्वाणी जैसे महान आत्माओं के मार्गदर्शन एवं आशीर्वाद से ब्रदरहुड के मंत्री एवं स्कूलों के व्यवस्थापक श्री गंगाराम साजनदास जो एक कर्मठ व्यक्ति हैं, के पुरुषार्थ एवं परिश्रम से ये विद्या का वृक्ष फलता रहा है।

प्रेमियों और शिक्षा शास्त्रियों के अनुरोध पर दादाजी ने "मीरा कालेज फार गर्ल्स्" प्रारंभ किया जहां बहनों को पवित्र वातावरण में उच्च शिक्षा दी जाती है। वे अत्यंत भाग्यशाली हैं कि उन्हें दादा जशन वास्वाणी जैसे प्राचार्य प्राप्त हुए हैं जो करुणा और प्रेम की मूर्ति हैं, भक्ति, ज्ञान और कर्म की त्रिवेणी हैं। उनका ओजस्वी चेहरा, स्नेहस्निग्ध मुस्कान, मंत्रमुग्ध करने वाली वाणी विद्यार्थियों में नवजीवन का संचार करती है। बैरिस्टर श्री होतचंद आडिवाणी भी इस मीरा हलचल में महत्त्वपूर्ण योगदान दे रहे हैं। साधु वास्वाणी विद्यानगर की योजना बनाई गई है जो शीघ्र ही कार्यान्वित होगी।

साधु वास्वाणी मिशन के तत्त्वावधान में अब पूना की पुण्य मीरा भूमि में एक प्राथमिक सिन्धी शाला, दो माध्यमिक शालाएं (एक सिन्धी माध्यम और दूसरी अंग्रेज़ी माध्यम) बाल मंदिर और बहनों के लिए मीरा कालेज चल रहे हैं। इन शैक्षणिक संस्थाओं में विद्यार्थियों के चरित्रनिर्माण, बौद्धिक, मानसिक एवं शारीरिक विकास पर विशेष ध्यान दिया जाता है। प्रतिदिन प्रभु प्रार्थना के साथ ही स्कूलों एवं कालेजों का कार्य आरंभ होता है।

दादाजी की संकल्प शक्ति से इस पुण्य स्थल पर न केवल सत्संग होने लगा किन्तु यह स्थल "मीरा हलचल" का मुख्य केन्द्र बन गया, सेवा और स्नेह का क्षेत्र बन गया। यह स्थान तो वृन्दावन लगता है, जहां श्याम के भक्त दादाजी ने कई लीलाएं की, जहां श्यामसुंदर मुरारी वहां अवश्य होंगे गोपी ग्वाल बनवारी। दादाजी के भी अनेक प्यासे प्रेमी सदैव दादाजी के पास आते, उनका उपदेश सुनते, उनके गीत सुनते, उनका दर्शन पाकर आत्म-विभोर हो जाते। यह स्थान सचमुच एक तीर्थस्थान बन गया। न केवल भारत के विभिन्न नगरों से प्रेमी दादा के दर्शनार्थ आते, परन्तु विदेश से भी कई विद्वान एवं प्रेमी इस पुण्य भूमि में यात्री के भाव में आते थे। मीरा भूमि का स्नेहसिक्त पवित्र वातावरण देखकर मंत्रमुग्ध हो जाते थे।

भारत के भूतपूर्व राष्ट्रपति एवं विश्व के महान विचारक और तत्त्वज्ञानी डॉ. राधाकृष्णन् सर्वपल्ली जब दादाजी से मिलने के लिए मीरा भूमि में पधारे तो उन्होंने कहा, "यह स्थान मेरे लिए एल महत्त्वपूर्ण तीर्थस्थान है और मैं एक यात्री के भाव में यहां आया हूं। दादा वास्वाणी जी भारत के एक महापुरुष हैं जो लाखों लोगों का मार्गदर्शन कर रहे हैं।

दादाजी महान कर्मयोगी थे। उनकी प्रेरणा से मीरा भूमि कर्म भूमि बन गई है, जहां 'मीरा बाल मंदिर', 'मीरा स्कूल', 'मीरा कालेज', 'मथुरीबाई महबूबाणी छात्रावास', 'राधाकृष्ण दया दवाखाना', 'मंघाराम खेमलानी दवाखाना' 'शान्ति क्लिनिक', 'मूलचन्द उद्धवदास थधानी पैथालाजीकल क्लिनिक' 'होम्योपथी दवाखाना', 'कल्याण नारी शाला', जीव–दया एवं अन्य सेवा के कार्य चल रहे हैं। सेवा के साथ साथ उच्च कोटि का साहित्य भी प्रकाशित हो रहा है।

१६ जनवरी १९६६ ई. में दादा वास्वाणी ब्रह्मलीन हुए।

दादा, भगवान कृष्ण के अनन्य उपासकः

दादाजी यद्यपि समन्वयवादी थे फिर भी वे भगवान श्री कृष्णचन्द्र आनंद कंद मुरली मनोहर के अनन्य उपासक थे। वे भगवान राम, भगवान गौतम बुद्ध, श्री गुरुनानक शाह एवं अन्य गुरुओं श्री ईसा और अन्य अवतारों, पुरुषों, संतों, महात्माओं से प्रभावित हुए थे। उन्होंने अपने पद्य में चाहे गद्य में इन सब ही महापुरुषों का गुणगान गाया है। अपने व्याख्यानों में भी समय समय पर इन महान–भावों के संदर्भ देते थे। दादाजी के मन में मीरा जैसी भक्ति भावना, भगवान श्री कृष्ण के प्रति लगाव, तड़प, दर्द और मस्ती भी थी। कई रातें जागते जागते बीत जाती थी। आखों में प्यास के आंसू और वाणी में विरह वेदना। उनकी वाणी, वचनों, व्याख्यानों से भी परिलक्षित होता है कि वे भगवान मुकंद मुरारी गोपाल गिरधारी के अनन्य उपासक थे। मीरा उनका आदर्श थी, इसी लिए उन्होंने विद्या हलचल एवं विद्या मंदिरों पर मीरा का नाम रखा।

समाज सुधारकः

दादाजी न केवल महान संत थे किन्तु वे समाज सुधारक भी थे। दहेज की कुप्रथा ने समाज की सत्यानाश की है। दादाजी ने इस समस्या को हल करने के लिए भी प्रयत्न किया। सिन्ध के भिन्न भिन्न नगरों में इस कुप्रथा के विरुद्ध मार्मिक व्याख्यान दिये। बहनों से अपील की कि अपनी बहुओं को मत सताओ, उन्हें अपनी बेटी सरीखा स्नेह दो। अपने बेटों को बेचना बंद करो।

दादा एक साहित्यकार के रूप में

दादाजी एक औजस्वी लेखक एवं उच्च कोटि के कवि भी थे। उन्होंने सिन्धी एवं अंग्रेजी भाषा में आध्यात्मिक, भक्ति–परक राष्ट्रीय एवं जीवन उपयोगी विषयों पर अनेक पुस्तकें लिखी हैं। मद्रास की गणेश कंपनी ने दादाजी की कई अंग्रेजी पुस्तकें प्रकाशित की। उच्च कोटी की पत्रिकाओं में दादाज़ी के लेख प्रकाशित होते थे। न केवल भारतीय परंतु विदेशी लोग भी दादाजी का साहित्य पढ़कर प्रशंसा करते थे। उनके साहित्य में सत्यम् शिवं सुन्दरम् तीनों गुण विद्यमान हैं। उनकी शैली भी अनोखी है।

सिन्धी काव्य में दादाजी का "नूरी ग्रंथ" एक अनमोल कृति है। उनका सारा सिन्धी काव्य इस ग्रंथ में संग्रहीत है। किसी भी सिन्धी कवि ने इतना

सिन्धी काव्य नहीं लिखा जितना दादाजी ने लिखा है। सिन्धी भक्ति साहित्य के वे मूर्धन्य कवि हैं। वे जब प्रभु के प्रेम में तल्लीन होकर गुनगुनाते थे तो काव्य मंदाकनी उनके मुख से प्रवाहित होती थी। उनके काव्य पर श्रीमद् भगवद्गीता श्री गुरु ग्रंथसाहब, संत कबीर, सूर एवं मीरा के काव्य का प्रभाव परिलक्षित हैं। उन्होंने, हिन्दी में भी कुछ फुटकर पद लिखे हैं जो नूरी ग्रंथ में संग्रहीत हैं। प्रस्तुत है संक्षेप में उनके हिन्दी पदों का विवेचन।

साधना के निर्देशक गुरू :

संत कवियों की भांति साधु वास्वाणी भी गुरु की स्तुति गाते हुए कहते हैं कि मेरे परिपूर्ण गुरु ने ही मुझे ज्ञान की दीक्षा दी। उन्होंने ही मुझे शरीर और आत्मा, ब्रह्म और जीव का भेद बताया और तत्पश्चात् मैंने अपने आत्मस्वरूप को पहचाना :–

पूरे गुर ने भेद बताया,
खोले सरूप सहज समझाया,
आतम रूप मैं ने पाया। [१]

गुरूने ही मुझपर दया दृष्टि कर मेरे मन में ज्ञान का दीपक जगाया, जिसके कारण अज्ञान–तम दूर हो गया।

उसने दिल में दीपक जलाया,
अज्ञान अंधेरा अंदर भगाया। [२]

कवि कहते हैं मैं ऐसे गुरु पर अपना सर्वस्व न्योछावर करूं जिन्होंने सदैव मेरा अज्ञान अंधेरा दूर किया :–

दमदम गुर पर मैं बलहारी,
जिन दम में दूर की अंधकारी। [३]

कवि गुरू चरनों की रज से नहाने की इच्छा प्रकट करते हैं।

"गुर चरनों धुली करूं इश्नान। [४]

---

१ फकीरां दी माल्हा साधु वास्वाणी पृष्ठ ७१
२ वही पृष्ठ ७१
३ वही पृष्ठ ७१
४ वही पृष्ठ ७२

कवि कहते हैं गुरदेव ने ही उन्हें अगम पंथ की राह बताई।

पंथ अगम की राह बनाई।

दादाजी के अनुसार सत्गुरू सर्वत्र विद्यमान है, वह निःकलंक, निषपाप एवं निर्मल है।

सत्गुर मोरे सर्वव्याप,
निःकलंक, निर्मल निष्पाप।[२]

दार्शनिक विचार:

दादाजी संत एवं कवि के साथ साथ दार्शनिक भी थे। उन्होंने अपने काव्य में कुछ दार्शनिक विचार भी व्यक्त किये हैं।

ब्रह्म :– दादाजी ब्रह्म सम्बंधी विचार व्यक्त करते हुए कहते हैं कि जल थल में, सूर्य और चांद में अर्थात् सर्वत्र एक ब्रह्म विद्यमान है। वह सर्वव्यापी ब्रह्म हमारे अंतःकरण में भी व्यापक है। कवि ब्रह्म ज्योति का साक्षात्कार कर तद्रूप हो गये हैं, वे कहते हैं :–

जल थल सूरज चांद और तारा
इक ज्योति जगे अलख आसमानी!
सोंई आतश विच दिल मन्दिर,
देखत नूरी है मस्तानी।[३]

कवि एक ब्रह्म की ही सत्ता को स्वीकार करते हुए कहते हैं कि प्रकृति में जो विभिन्न वस्तुएं, एवं जीव दीख पड़ते हैं उन सब में एक लासानी सूरत (अतुलनीय रूप) ब्रह्म का ही साक्षात्कार करो :–

कुदिरत की यह कसरत किसकी?
देखो देखो सूरत लासानी।[४]

---

१ पुष्पमाला पृष्ठ ८६
२ पुष्पांजलि पृष्ठ ८९
३ फकीरों दी मालहा पृष्ठ ८
४ वही पृष्ठ ८

सब में एक ब्रह्म विद्यमान है :–

एक साहब सब में जान ।[1]

जगत् में जो कुछ दृश्यमान है वह अनित्य है, एक ब्रह्म ही सत्य है। कवि के मूल शब्दों में :–

सगल पसारा जूठ जूठ,
इक नाम सचो, इक नाम निहार ।[2]

जीव :– दादा वास्वाणी जीव को ब्रह्म रूप मानते हुए कहते हैं, कि ब्रह्म जगत् में जीवात्मा के रूप में अवतरित हुआ है।

आदम आदम बनके आया,
पाए पाए चोलो इन्सानी [3]

जीव स्वयं को भूल कर, जगत् को, और देह को सत् समझकर भटकता रहता है, इस लिए साधु वास्वाणी उसे कहते हैं कि मिथ्या में मोह रखकर तू बहुत जन्म भटके हो, अब जाग्रत होकर साक्षात्कार करो :–

भटक रहे क्यों जन्म जन्य तू,
अब छोड़ प्यारे! इह परेशानी।

जीव स्वयं को देह समझकर बैठा है, देह तो नश्वर है। यह कंचन जैसी काया माया का खेल है। यह क्षणभंगुर है। छाया की तरह बेबका है। जैसा तंबूरा बजते बजते अचानक टूट जाता है, वैसे यह देह भी नश्वर हैं। जीव को अपनी बुद्धिमता, विद्वता पांडित्य पर कितना गर्व रहता है, परंतु जैसे ही वह आतम–सत्ता चली जाती है। तो उस देह का कुछ भी मूल्य नहीं होता। रुपया सोना चांदी सब यहीं पर रह जाता है, दादाजी के शब्दों में :–

कंचन काया सभ इह माया,
आया गंवाया सभ यह छाया।

---

१ मन प्रबोध पृष्ठ १२
२ फकीरा दी मालहा पृष्ठ ७९
३ वही पृष्ठ ८

साधो इह देह ठाट तंबूरे का!
बाजत बाजत तूटे तार,
कहां बुद्धि गई कहां विचार।[१]

जगत्ः दादाजी के विचारों के अनुसार यह जगत् असार है, मिथ्या है। झूठ है। वे कहते हैं–

सगल पसारा कूड़ ही कूड़।[२]

जो कुछ दृश्यमान है वह असत्य एवं अनित्य है,

यह जयत् माया का खेल है। जिसे अपना कुछ अस्तित्व नहीं।

जग जूठा, जूठा माया का खेल।[३]

यह जगत् नश्वर है और जीव इस नश्वर जगत् में आसक्ति रखता है, वह स्वथं दो दिन का महिमान है। दादाज़ी के शब्दों में :-

जग सारा फानी फानी,
दो दिन की है मज़िमानी।[४]

दादाजी के अनुसार यह जगत् क्षण का खेल है, जो कुछ है वह नश्वर है, आत्मा रूपी पंछी उड़ जायेगा।

जग सारा प्यारे इक खिन का खेला,
फानी सब फानी पंखी जाइ अकेला।[५]

माया: कवि के विचारानुसार कंचन काया जो कुछ जगत् में दृश्यमान है वह सब माया है। कविने मायावी पदार्थों की तुलना छाया से की है। कवि के मूल शब्दों में :–

कंचन काया सब है माया
आया गंवाया सब यह छाया,
रुयया रोपा, इह बर्तन सोना,

---

१ फकीरां दी मालहा — पृष्ठ ७५
२ वही — तृष्ठ ७९
३ पुप्प माला — पृष्ठ ३३
४ फकीरां दी मालहा — पृष्ठ ३२
२ न्री ग्रंथ — पृष्ठ ६०१

सभ तज कर इक दिन रोना,
साधो सगल पसारा कूड़े का।[1]

मुक्ति:– दादा वास्वाणी के अनुसार प्रियतम का दर्शन ही मुक्ति है। जब जीव को ब्रह्म का साक्षात्कार होता है तब वह यम की फांसी से मुक्त हो जाता है। कवि का यह दृढ़ विश्वास है कि जब उन्हें मन मंदिर से प्रभु के दर्शन होंगे तब यम की फांसी कट जायेगी।

काटी काटी जम को फांसो, जब घर मोरे साजन आइ।[2]

साधना के तत्व:

नाम स्मरण:

नामस्मरण द्वारा जीव को आनंद की प्राप्ति होती है और सभी संकट टल जाते हैं, इसी लिए दादाजी नाम स्मरण पर बल देते हुए कहते हैं-

स्मर स्मर पाइ सुख साचा,
स्मर स्मर सब संकट जाइ,
नूरी गोबिन्द गाइ मना,
स्मर स्मर सचखंड तू पाइ॥[3]

नाम स्मरण की महत्ता प्रदिपादित करते हुए दादाजी कहते हैं -

गंगा जमना तीर्थ इश्नान,
सब वृथा कर तू जान;
नूरी गोबिंद गाइ मना!
बिन स्मरण नः फल तपस्या दान।[4]

जो नाम का स्मरण करता है, वह प्रियतम को प्राप्त करता है–

इक नाम जो जो जपीए,
सी सो पावइ प्रीतम रूप।

---

१ फकीरां दी मालहा — पृष्ठ १९
२ नूरी ग्रन्थ — पृष्ठ २६७
३ नूरी बाणी (मन प्रबोध) — पृष्ठ ४४६
४ वही — पृष्ठ ४३९

राम नाम ही नों निधि है
'राम नाम नव निधान'[1]

राम नाम के बिना जीवन अंधकारमय है, वह ही जीवन की ज्योति है–
"रामनाम जीवनज्योति"[2]

मनुष्य जगत् के नाना पदार्थों में आसक्ति रखकर प्रभू को भूल गया है, दादाजी मनुष्य को परामर्श देते हुए कहते हैं कि जगत् के झूठे पदार्थों का परित्याग कर एक ब्रह्म से नाता जोड़ो, उसका नाम स्मरण करो। कवि के मूल शब्दों में–

जूठा जूठा नाना छोड़, इक नाम में लिव लगाइ।
साहब साचा याद करि, स्मर स्मर सुख पाइ।[3]

प्रेम तत्त्व : दादाजी प्रेम की महत्ता प्रतिपादित करते हुए कहते हैं कि प्रेम और प्रियतम में कोई अंतर नहीं, प्रेम ही परमात्मा है। प्रेम ही उपासना है –

प्रम ई प्रियतम, प्रेम ई पूजा
प्रेम बिना ना को ठाकुर दूजा।[4]

प्रेम ही सारे विश्व का प्रकाश है, प्रेम ही ज्ञान है, प्रेम ही पुरान है। सब ही शास्त्रों ग्रंथों का मूल तत्त्व प्रेम ही है –

प्रेम ही ज्योति सारे जहान,
प्रेम ही ज्ञान, प्रेम ही पुरान।
प्रेम ही वेद अंजील कुरान,
प्रेम ही शास्त्र गीता ज्ञान।[5]

दादाजी प्रेम रूपी पुण्पों द्वारा श्री कृष्ण की पूजा करना चाहते हैं। वे ज्ञान की अपेक्षा प्रेम को अधिक महत्त्व देते हैं। वे श्री कृष्ण कन्हैया को

---

१ नूरी वाणी (मन प्रबोध) पृष्ठ ४३६
२ वही पृष्ठ ४२५
३ पुष्पांजलि पृष्ठ १३३
४ पुष्पांजलि पृष्ठ १३
५ वही पृष्ठ १३

सम्बोधित करते हुए कहते हैं–

कैसी करूं मोरे कनैया तेरी पूजा ?
प्रेम बिना ना पुष्प को दूजा !
ना कोई पोथी. ना कोई पूस्तक जानू,
प्रेम बिना ना कोई ग्रंथ पछानू।[१]

अन्तः साधना : दादाजी साधक से कहते हैं कि बाह्य साधनों का परित्याग कर अन्तः साधना करो। भीतर जाओ प्यारे। भीतर जाओ तो तुम्हें दिव्य ज्योति का दर्शन मिले। दादाजी के शब्दों में–

नूरी निमाणी, कर कुरबानी, तू अंदर जा,
जानब जलवो, साजन तजिलो, तू भीतर पा।[२]

एक दूसरी कविता में दादाजी साधक से कहते हैं कि अपने दिल का किवाड़ खोलकर स्वयं का साक्षात्कार करो। बाह्य जगत् में भटकने की कोई आवश्यकता नहीं है, तेरे अंदर में ही मका मदीना है, काशी, गंगा–यमुना, हरिद्वार एवं अमृतसर भी तेरे ही अन्तःकरण में हैं, श्याम और राम भी तेरे अंतःकरण में हैं। द्वैत की दीवार को तोड़ो, अज्ञानकी खिड़की खोलो तो तुम्हें सत् चित्त आनंद स्वरूप का साक्षात्कार हो। दादाजी के मूल शब्दों में–

खिड़की खोल देख दीदार,
अंदर मका, अंदर काशी,
क्यों तू भटको तीर्थ वासी?
अंदर गंगा अंदर जमुना,
अंदर रामा, अंदर श्यामा !
अंदर ग्रंथा, अंदर ज्ञानी,
अंदर अमृतसर का पानी,
अंदर सिन्धु, है हरिद्वार,
अंदर ठाकुर का दरबार।[३]

---

१ नूरी ग्रंथ पृष्ठ १४१२
२ पुष्पांजलि पृष्ठ १६
३ वही पृष्ठ ५१

मन मंदिर में ही बांके बिहारी श्याम सुन्दर ब्राजमान हैं, इस लिए कवि कहते हैं कि अन्तःसाधना द्वारा अनहद नाद सुनो, मुरली मनोहर की बीना की आवाज़ सुनो–

गुप्त गुफा में मोरे साजन राजे,
मोरे मोहन सोहन बीना बाजे।[१]

संतो का संग:

जैसा संग तैसा रंग। संतों महात्माओं का संग करने से मन पवित्र होता है, आनंद की प्राप्ति होती है, जो ही मानव जीवन का मूल ध्येय है। दादाजी साधक को संतों का संग करने का उपदेश देते हुए कहते हैं:

संत जना का पकरा पैरा,
संतन चरनन पाओ विसराम;
संत जना के संग निवास,
गाओ गाओ निर्मल नाम,[२]

साधक को न केवल संतों का संग करना चाहिए अपितु उनकी सेवा भी करनी चाहिए:

संत जनां की शेवा शेवा,
यह है जीवन का मुख्य काम।[३]

दादाजी कहते हैं कि संत जन तो उनके जीवन का प्रकाश हैं:

संत जना मेरी जीवन ज्योति।[४]

संत प्रभु के प्रतिनिधि हैं, उनकी शरण लेने से साधक संसार के सागर से पार हो जायगा। इस लिए दादाजी कहते हैं:

जागो! जागो! मोरे प्यारे जागो!
संत जना की शरना लागो।[५]

---

१ पुष्पांजलि पृष्ठ १६
२ पुष्प माला पृष्ठ ३५
३ वही पृष्ठ ३५
४ ववी पृष्ठ ३५
५ वही पृष्ठ ४६

सुन समाधि :

जब साधक सुन समाधि में तल्लीन हो जाता है, तब उसे पूर्ण गुरू अथवा ब्रह्म के अतिरिक्त कुछ दिखाई नहीं देता। सब सांसारिक व्यवहार, प्रकृति के दृश्य इत्यादि पदार्थों से मन हट जाता है, सुरति गुरु मंत्र अर्थात् शब्द के साथ मिल जाती है; दादाजी कहते हैं :-

सुन देस में ना कोई वहंवार,
ना मेरा तेरा, न कोई कम कार,
उति चिमके चिमके इक प्यार,
गुर पूरा मिलिया सुन में।
ना उति कुदिरत का निज़ारा,
उति चन्ड न चिमके ना कोई तारा,
उति आहै आहे शब्द की धारा,
गुरु पूरा मिलिया सुन में।[1]

कृष्ण काव्य : मीरां और सूर की भांति दादा वास्वानी के मन में भी भगवान श्री कृष्णचन्द्र आनंद कंद के प्रति अनन्य एवं उत्कट भक्ति-भावना थी। उन्हें किसी भी सांसारिक पदार्थ की इच्छा नहीं थी वे श्री कृष्ण के दर्शन के प्यासी थे। वे बांके बिहारी से विनय करते हुए कहते हैं -

बार बार करूं वेनती, मेरे घर मोहन आइ।
धन दौलत कछु ना मांगू, अपनी भक्ति लाइ।[2]

दादाजी भगवान श्री कृष्ण को प्रेम का अवतार मानते हुए कहते हैं:-

प्रेम ही श्याम मोहन मुरारी,
प्रेम ही ज्योति धाम अवतारी।[3]

दादाजी भगवान श्री कृष्ण के पधारने पर फूले नहीं समाते हैं, उनकी आंखों में प्यार के आंसू आ जाते हैं। वे स्वयं को अत्यंत भाग्यशाली समझते हैं

---

१ फकीरां दी मालहा — पृष्ठ ६३

२ नूरी ग्रन्थ — पृष्ठ ८२९

३ पुष्पांजलि — पृष्ठ १४

क्यों कि यमुना की ज्योति आज उनके घर में आ गई है।

आज मोरे घर घनश्याम आयो।
मैं तो सभागी साजन दर्शन पायो।
अखिड़ियां आली, मुख विच मुरली,
जमना ज्योति मोरे घर आई।[१]

दास्य भावना :— दादा वास्वाणी के काव्य में दास्य भावना कूट कूट भरी हुई है। वे प्रभु परमात्मा से विनय करते हुए कहते हैं कि आप एक महासागर हैं और मैं एक मछली हूं, आपकी कृपा से ही मैं जी रहा हूं, एक क्षण भी आपके विना मैं जी नहीं सकता। मैं आपके चरणों की रज की भिक्षा-याचना कर रहा हूं, कृपया अपने दास को चरणों की रज दें। दादाजी के मूल शब्दों में :—

तू दरियाह, मैं जल मीना,
इक रहम तुम्हारे, मोरे पल पल जीना,
दीजे चरणा रीना, मांगे दर पर नूरी निमाणी।[२]

कवि प्रभु से प्रार्थना करते हुए कहते हैं "हे प्रभु मैं अधम हूं, नीच हूं अब आपके द्वार पर आया हूं मेरी लाज राखो। सागर में जितनी लहरें हैं, उतने विकार मेरे मन में हैं, आकाश में अगिनत तारे हैं, मुझ में भी अगिनत् अवगुण हैं। हे कृपा सिन्धु मेरे अवगुणों को न देखकर, मुझ पर दया दृष्टि कर अपना दर्शन दिखाओ। कवि के मूल शब्दों में :-

द्वार तुम्हारे आई आज,
निधर अधम की तू ई लाज।[३]

.. ..

जितने लहरा सागरा, उतने मन का विकार
अगिनत मोरे अपराध गगन बीच जितने तार।[४]

---

१ नूरी ग्रन्थ पृष्ठ १०२०
२ पुष्पांजलि पृष्ठ १२५
३ पुष्पमाला पृष्ठ ५१
४ वही पृष्ठ ५७

देखन मेरे अवगुण प्यारे, दर्शन दीजे दीदार !
अवगुण मोरे न कथिया जाइ, जैसे तारा बेशुमार।[१]

उद्‌बोधन :–

दादाजी अज्ञानी जीव को अविद्या की नींद से जागृत करते हुए कहते हैं कि तू सुख सागर में आकर क्यों प्यासे रह जाता है? तू आध्यात्मिक आनंद रूपी अमृत का पान कर। अज्ञान की नींद से जागृत होकर नाम का स्मरण कर। इस मानव योनि का उत्तम अवसर मत गंवा! कवि के मूल शब्दों में:–

सुख सागर में आयके, मत जाओ रे प्यासा प्यारे !
निज सुख निर्मल सोई पावे, जो मन को मारे मारे !
उठ आग प्यारे ! जप नाम सवेला पी पी प्यारे! यह अमृत वेला
गफ़लत छोड़! देख संतन मेला जग सीं जावत इक इक अकेला! [२]

काव्य कला : दादाजी संत कवि थे। उनका हृदय भक्ति–भावना से ओतप्रोत था। वे भक्ति में ही सर्मपित थे। काव्य के नियमों को विचार में रखकर उन्होंने काव्य साधना नहीं की। उनके मन में जो उद्‌गार उत्पन्न हुए वे काव्य रूपी सरिता के रूप में प्रवाहित हुए। फिर भी कुछ कलात्मक विशेषताएं उनके काव्य में उपलब्ध हैं। वे संगीत के प्रेमी थे, स्वयं गुनगुनाते लिखते थे, इस लिये उनके काव्य में संगीतात्मकता है, लय है नाद सौंदर्य है। उनके काव्य में अन्त्यानुप्रास का तो पूरा प्रयोग हुआ है किन्तु मात्राएं कहीं कम कहीं ज्यादा आई हैं। ऐसे महानुभावों, भक्तों की वाणी को छन्दों की कसौटी पर कसना ठीक नहीं। यद्यपि इनके काव्य में वियोग श्रृंगार और करुण रस का संचार हुआ है परन्तु शान्त रस प्रधान है।

दादाजी के हिन्दी काव्य में कहीं कहीं सिन्धी, सराइकी शब्दों का समावेश हुआ है। उनकी भाषा में प्रवाह है। पनुरुक्ति तो उनके गद्य, पद्य एवं व्याख्यान की विशेष विशेषता है।

---

१ पुष्प माला — पष्ठ ७३
२ नूरी ग्रन्थ — पृष्ठ ७२५

वर्ण मैत्री :– दादाजी के काव्य में वर्ण मैत्री का भी अच्छा प्रयोग हुआ है, उदाहरण :

राम नाम मोरे तीर्थ काशी [1]

तन मन होया तुरंत मतवाला।[2]

दूख सूख में तू मेरे स्वामी।[3]

यहां राम नाम, तन मन, दूख सूख वर्ण मैत्री के उदाहरण हैं।

वर्ण संगति :– जग सारा जूठा जूठा।[4]

फिरत फिरत चक्र संसार।[5]

काटी काटी जम की फासी।[6]

यहां जूठा जूठा, फिरत फिरत, काटी काटी वर्ण संगति के उदाहरण हैं।

छेकानुप्रास : अलख आधार तू सब सृजणहार।[7]

सुख सागर में आइके मत जाओ रे प्यासा प्यारे।[8]

भूलत नूरी सगल संसारा।[9]

उपर्युक्त काव्य-पंक्तियों में अलख आधार, सब सृजनहार, सुख सागर, प्यासा प्यारे, सगल संसारा छेकानुप्रास के उदाहरण हैं।

वृत्यानुप्रास : शेवा साची निर्मल तू कमाइ - [10]

अंध कूप में मैं तो पड़ा हूं।[11]

१	नूरी ग्रन्थ	पृष्ठ १०४६
२	वही	,, ११९३
३	वही	,, ११७०
४	गीता मणी	,, २२
५	नूरी ग्रन्थ	,, ३८१
६	वही	,, २६७
७	वही	,, ८६१
८	वही	,, ७२५
९	वही	,, ७२५
१०	वही	,, ६०१
११	वही	,, ११३१

यहां शेवा साची, अंध कूप, वृत्यानुप्रास के उदाहरण हैं।

रूपक अलंकार: ज्ञान गली में गोबिन्द आयो।[1]

कवि ज्ञान रूपी गली में अपने प्रियतम श्री कृष्ण का दर्शन करते हैं।

चरन कमल ध्याओ ध्याओ ।[2]

कवि श्री कृष्ण के कमल रूपी चरणों का ध्यान करने का आदेश देते हैं।

सेठ ऊध्दवदास

सेठ उद्धवदास का जन्म सन् १८७९ ई. में मांझू गांव जिला दादू सिन्ध प्रांत में हुआ। उनके पिता सेठ विश्नदास भारवाणी तत्कालीन सिन्धी समाज के प्रभावशाली व्यक्ति थे। उद्धवदास उनके तृतीय एवं छोटे पुत्र थे। ऊद्धवदास ने प्राथमिक शिक्षा मांझू में ली और माध्यमिक शिक्षा कराची में ली। आंखों के रोग के कारण उन्हें शिक्षा से वंचित रहना पड़ा। उन्होंने घर में ही सिन्धी हिन्दी, उर्दू, फारसी भाषा का अभ्यास किया। अपने पिता की भांति साहित्य एवं संगीत में उनकी रुचि थी। वे संतों की वाणी गाते रहते थे। २४ वर्ष की आयु में ऊद्धवदास के मन में वैराग वृत्ति उत्पन्न हुई। कुछ समय के लिए वे सत्गुरू गुलाबदास जी के स्थान चठयानवाला पंजाब में गए और उस धर्मपीठ के तत्कालीन अधिकारी सत्गुरू तेगबहादुर जी से ज्ञान ग्रहण कर मानसिक शान्ति प्राप्त की।

---

१ पुष्प माला पृष्ठ १४

२ वही पृष्ठ १४

महर करे महराज गुरू निज नाम निरंजन जाम पिलायो।
पियो थी जिस सांत भई मन, पाप नसे निज आनंद आयो।
गावत रात द्रुने सत सोहंग रमऊं रोम सो दीप जगायो।
तेग बहादुर पाइ गुरू नित ऊद्धवदास यह गुन गायो।[१]

गृहस्थाश्रम में रहते उनकी आसक्ति भौतिक पदार्थों में नहीं थी। उन्हें चार पुत्र हुए, सेठ सुखदेव, लक्ष्मणदास, रामचन्द एवं भरतराज। उन्होंने अपने दादा, पिता एवं भाई की वाणी संग्रहीत की। सन १९२६ ई. में ४७ वर्ष की आयु में उनका निधन हुआ।

रचनाएं– सेठ उद्धवदास जी ने संतों की वाणी का अभ्यास किया साथ साथ अपने दादा, पिता एवं भाई से भी प्रेरित होकर उन्होंने काव्य रचना की सिन्धी एवं हिन्दी भाषा में दोहे, काफियां और भारतीय छन्द शास्त्र के आधार पर काव्य रचना की। उनका काव्य रत्न जोति भाग प्रथम में संग्रहीत है जिस का सम्पादन श्री मोतीराम रामवाणी ने किया है।

गुरू महिमा– सेठ उद्धवदास के मन में अपने गुरू के प्रति अगाध श्रधा थी। वे सर्वत्र अपने परिपूर्ण सत्गुरू का ही साक्षात्कार करते हैं, उनके अतिरिक्त उन्हें कुछ नहीं दीखता:–

पूरन हमरे सत्गुरू सर्वव्यापक सोइ।
ऊद्धवदास दृष्टि में और न दीसत कोइ[२]

कवि को सदैव सत्गुरू की ही प्यास है, उन्हें और कोई अभिलाषा नहीं:–

निस दिन तेरी प्यास तेग बहादुर सद्गुरू।
उर में और न आस, तुम बिन ऊद्धवदास को।[३]

गुरू ने ही कृपा कर नाम रूपी अमृत का आस्वादन कराया। नाम रूपी अमृत पीने से दुष्विचार और अशान्ति नष्ट हुई और आनंद एवं संतोष की

---

१ रत्न जोति भाग १– सम्पादक मोतीराम रामवाणी पृष्ठ १२४
२ वही ,, १२५
३ वही ,, १०६

उपलब्धि हुई। गुरू तेगबहादुर जी ने ही सोऽहम् शब्द अर्थात् गुरु मन्त्र दिया जिसके द्वारा अन्तःकरण में ज्ञान की ज्योति जगी :

महिर करे महराअ गुरू निज नाम निरंजन जाम पिलायो,
पीवयें जिस सांत भई मन, पाप नसे निज आनंद आयो,
गावत रात दिन सत् सोहंग रमऊं रोम सो दीप जगायो,
तेग बहादुर पाइ गुरु नित ऊद्धवदास यह गुन गायो।[1]

कवि गुरू की स्तुति गाते हुए कहते हैं कि गुरू महाराज चंद्रमा की भांति शीतल स्वभाव वाले एवं अति कृपालु हैं। उन्होंने ही मेरे मन में पड़ी हुई भ्रम की रज्जु को काट दिया।

ससि सम है सीतल सुभाव धारे, कृपा दृष्टि स्वामी महिरबान मेरे.
ऊद्धवदास हैं ऐसे गुरदेव साचा जिन काटिया भरम गुमान रे।[2]

कवि ऊद्धवदास अपने गुरू को सर्वकला संपन और सर्वत्र व्यापक मानते हैं :–

पूरन हमरे सतगुरू सर्वकला भरपूर।
वो ही ऊद्धवदास हैं हाज़िर हक हज़ूर।[3]

कवि ऊद्धवदास जी ने अपने काव्य में दार्शनिक विचार भी व्यक्त किये हैं। कवि ने अद्वैतवाद के सिद्धांत का निरूपण किया है –

सर्वग सो आप सर्वज्ञ होया,
झूठा ख़ियाल द्वैत दा कटिया जी।[4]

कवि ''अहम् ब्रह्म अस्मि' महावाक्य का भी अपने काव्य में प्रतिपादन करते हैं –

में तो आप ही परम परमात्मा हूं, ऐसा होए हुलास निहाल सद्[5]

---

१ रतन जोति भाङो १ पृष्ठ १२४
२ वही ,, १३६
३ वही ,, १२५
४ वही ,, १२८
५ वही ,, १२९

कवि कहते हैं सर्वत्र वे ही विद्यमान हैं उनके अतिरिक्त और कुछ नहीं-

हम बिन और न कोई प्यारा, जित किथ हमरा रूप पसारा।[१]
ऊद्धवदास हमीं जित किथ हूं, हम हूं सभ में समाया।[२]

मैं ही सत् चित् आनंद रूप ब्रह्म हूं–

ब्रह्म सरूप मैं आप होया।[3]

सारे जगत् में उस ब्रह्म की ही सत्ता विद्यमान है। जिस प्रकार स्वर्ण के भिन्न भिन्न आभूषण स्वर्णरूप ही हैं और तरंगे जल रूप ही हैं उसी प्रकार संसार के जितने भी चेतन एवं जड़ पदार्थ हैं उनमें ब्रह्म की सत्ता ही व्यापक है, ब्रह्म के अतिरिक्त उनका कोई अस्तित्व नहीं।

जानिया सच संसार सारा येही, ब्रह्म सरूप समाइ रहा,
जीवें भूषना विच है सोना सजा तरंग जल दे विच दिखाइ रहा।[४]

जीव– जीव स्वयं ब्रह्म स्वरूप है परन्तु अज्ञान आवरण के कारण वह अपने सत स्वरूप को भुला बैठा है। कवि कहते हैं:–

ऊद्धवदास हैं मूढ अज्ञानियानू नरा आपणा भ्रम भुलाइ रहा।[५]

जब जीव का हर्ष शोक नष्ट होता है तब उसे ज्ञात होता है कि वह स्वयं ब्रह्म स्वरूप है:–

ब्रह्म स्वरूप मैं आप होया, हर्ख सोग संसार दा हटिया जी।[६]

अज्ञान की निंद्रा से जाग्रत होने के पश्चात् जीव निर्भव आतम पद को प्राप्त करता है।

१	रत्न जोति भाङो १	पृष्ठ २००
२	वही	,, २३४
३	वही	,, १२८
४	वही	,, १३०
५	वही	,, १३०
६	वही	,, १२८

नींद अज्ञान सों आंख खुली जब, दीपक रोशन ज्ञान हुआ।
ऊद्धवदास निरन्तर निर्भव आतम पद आखिर पाया।[1]

जब जीव के अन्तःतल में विवेक का दीप ज्योतिर्मय होता है अर्थात् ज्ञान का प्रकाश होता है तब अज्ञान रूपी अंधकार हट जाता है, द्वैत की भावना दूर हो जाती है और वह अपने साक्षी स्वरुप को स्वयं देखता है–

जदूं बोध विवेक दा दीप जगा, अंधकार अज्ञान दा मिटयाजी,
सर्वगं सो आप सर्वज्ञ होया, जूठा ख़ियाल द्वैत दा कटिया जी।[2]

जगत्– कवि एक ओर संसार को सत् मानते हैं तो दूसरी ओर असत् मानते हैं। संसार सत् है और उस में ब्रह्म व्यापक है।

जानिया सच संसार सारा येही, एक ब्रह्म सरूप समाइ रहा।[3]

जगत झूठा है, असत् है उसका वर्णन करते हुए कवि कहते हैं:–

जूठा जग यह जूठ कहानी, जूठा सगल पसारा।[4]

... .

भजन करो हरि रंग रचो, यह झूठी दुनिया फानी हैं,
आखिर चलना यहां न रहना, कल्पत कूड़ कहानी है।[5]

कवि जगत् को स्वप्न सम मानते हैं–

खुवाब मिसाल है जग सारा, कई आवंदे ते कई जावंदे हैं।[6]

संत कबीरदास एवं सिन्ध के सूफी कवि सचल सरमस्त की भाँति सेठ ऊद्धवदास जी ने भी पाखंडियों एवं दम्भी हिन्दू और मुस्लमानों की कटु आलोचना की है, जो धर्म एवं ज्ञान के सच्चे तत्त्व को न समझकर धर्म की आड़ में अपना उल्लू सीधा करते है:–

---

१ रत्न जोति भाङो १ पृष्ठ १९२
२ वही ,, १२८
३ वही ,, १३०
४ वही ,, १४४
५ वही ,, २२७
६ वही ,, १३३

राम राम कर हिन्दू वोलें, तुरक रहीम भुलाई,
हिन्दू लेवत कर मूं माला तसबी तुरक फिराई,
हिन्दु चाड़हत चिक्षा फिरदे, मुस्ले गोर बनाई,
ऊद्धवदास शरम में डूबे, दोनों खबर न काई -[1]

मुस्लमान मज़हब का झूठा ढकोसला करते हैं, लिंग-छेद करवाते हैं, और हिन्दू दिखावे के लिए यज्ञोपवीत धारण करते हैं, चोटी रखाते हैं, दोनों ने धर्म के मर्म को नहीं जाना है। ऊद्धवदास तो सदैव नाम के रंग में रंगने का प्रयास करते हैं–

शरइ कीते कूड़ां कूकरां ने, जूठे बेख मज़हब बनाइ बैंठे।
नहीं समझ रही इना अंधियां नू काट लिंग ते मूछ मुनाइ बैठे।
गले पाइके जनिया जूठ वाला मथ रख चोटी हिन्दू कहाइ बैठें।
ऊद्धवदास सदा रहे मतवाला नित नाम दा रंग लगाइ बैठे।[2]

सचा वीरः– सचा वीर वही है जो विषयों विकारों पर नियंत्रण कर शब्द के साथ सुरति को मिलाता है :–

जो जन सुरत सुधीर कर, विखयन को वस जो,
सूर बली उत वीर ऊद्धवदास पछान ओ। [3]

प्रम तत्त्व

कवि ऊद्धवदास सूफियों के प्रेम तत्त्व से भी प्रभावित हुए। उन्होंने प्रसिद्ध सूफी साधक मन्सूर की भांति 'अनालहक' भी पुकारा –

लगाकर रंग फिरा मस्तंग अनालहक फिर यह पुकारा।[4]

कवि के तन मन में प्रियतम से मिलने की प्यास है।

मेरे मन लागो प्रेम प्यारो,
तन मन में मोहे प्यास पिया की रग रग रस रीझारो।[5]

१	रत्न जोति भाङो १	पृष्ठ १२४
२	वही	,, १३१
३	वही	,, १०६
४	वही	,, १५१
५	वही	,, १५२

कवि प्रियतम के प्रेम में इतने तो मग्न हो गए हैं कि उन्हें कुछ सुरति नहीं रही --

प्रेम पिया में मस्त भए हम, भूल गए सुध बुध सगरी।[1]

नाम की महत्ता :

कवि नाम की महत्ता प्रतिपादित करते हुए कहते हैं कि नाम स्मरण से पाप नष्ट हो जाता है, और प्रभु की प्राप्ति होती है :-

नाम जपत सभ पाप नसत हैं, प्राप्त हो सुख धाम।[2]

नाम स्मरण से प्रभु प्रसन्न होता है, और जीव निर्वाण पद को प्राप्त करता है :-

स्मर स्मर प्रभु रीझाओ, पाओ पद निर्बान।[3]

कला पक्ष– श्री ऊद्धवदास एक साधक थे। काव्य उनकी साधना का प्रतिफलन था। वे काव्य कला के प्रति संलग्न नहीं थे, फिर भी कुछ काव्य कलात्मक विशेषताएं इनके काव्य में हैं। प्रस्तुत हैं कुछ उदाहरण :-

वर्ण मैत्री– तन मन में मोहे प्यास पिया की।[4]

ऊद्धव नाम निरंतर निर्भव, अंग संग हैं हरिआन।[5]

कर चरनी धर कर, पहले मर कर नीवे सिर कर गुर आगे।[6]

यहां तन मन, अंग संग, धर कर, मर कर वर्ण मैत्री के उदाहरण हैं।

वर्ण संगति– राम राम कर हिन्दू भूले, तुरक रहीम भुलाइ।[7]

देखा दिलबर जानी दिल में पल पल में परवर पाया[8]

१	रत्न जोति भाङो १	पृष्ठ २५८
२	वही	,, १२८
३	वही	,, १५३
४	वही	,, १५२
५	वही	,, २०७
६	वही	,, १२६
७	वही	,, १२४
८	दही	,, १९१

यहां राम राम, पल पल वर्ण संगति के उदाहरण हैं।

छेकानुप्रास : माया मध में मस्त हुआ, तुम क्यों करता अभिमान।[1]

तुम अबिनासी अंतरयामी दीनानाथ दयाल।[2]

पूरन हमरे सतगुरु, सर्वव्यापक सोइ।[3]

पतित-पावन पारब्रह्म तुम नंद नंदन गोपाल।[4]

वहां माया मध में मस्त, अबिनासी, अंतरयामी, दीनानाथ दयाल, सतगुरू सर्वव्यापक सोई, पतित पावन पारब्रह्म, नंद नंदन छेकानुप्रास के उदाहरण हैं।

वृत्यानुप्रास :– राम रतन मुख श्याम सुन्दर के उचरो अमृत गीत :[5]

मन भ्रमत भिटकत माया मूं।[6]

सोहंग शब्द सुनो सुरती सीं देही के दरिम्यान।[7]

यहां श्याम सुन्दर, उचरो अमृत गीत, मन भ्रमित भटकत माया मूं, सोहंग शब्द सुनो सुरती सीं वृत्यानुप्रास के उदाहरण हैं।

उपमा :– ससि सम है सीतल स्वभाव धारे कृपा दृष्टि स्वामी
महरबान मेरे।[8]

कवि यहां अपमे गुरदेव के लिए शशि की उपमा देते हुए कहते हैं कि उनके सतगुरू चन्द्रमा के समान शीतल प्रवृत्ति के हैं। उनका दर्शन करने से भी शीतलता की प्राप्ति होती है।

होइ रहे कुर्बान हमेश प्रेम पतंग की चाली हम।[9]

---

१ रतन जोति भाङो १ पृष्ठ २२७
२ वही ,, २४४
३ वही ,, १२५
४ वही ,, १५५
५ वही ,, १५४
६ वही ,, १५५
७ वही ,, २०७
८ वही ,, १३६
९ वही ,, २६२

कवि यहां अपने लिए परवाने की उपमा देते हुए कहते हैं कि वे परवाने की भांति इश्क की आग में निसार हो रहे हैं।

रूपक – वतन हमारा इश्क हुआ और पाठ हमारा प्रेम हुआ।[1]

कवि कहते हैं कि वे अब इश्क रूपी देश में प्रेम रूपी पाठ पढ़ते हैं, अर्थात् उनका जीवन प्रेममय है।

भाषा – कवि ऊद्धवदास के काव्य में तद्भव, अरबी, फारसी, एवं कहीं कहीं सिन्धी सराइकी के शब्दों का प्रयोग हुआ है।

तद्भव - सुखोपत, अबिनासी, अंतरजामी, जुग जुग, जम, सच, निर्वाण ससि सीतल इत्यादि।

अरबी फारसी: ज़ाहिर बातन, दिलबर, गैब, महबूब, आश्क, ख़बर, खुश, इसरार, मुर्शिद, विजूद, राजिक, खुमारी इत्यादि।

सिन्धी :- अजाई, पढ़ंदा, जित किथ, दम दम, डिसदें इत्यादि।

वेदांत व तसव्वुफ :– कवि ऊद्धवदास के काव्य में वेदांत एवं तसव्वुफ का सुन्दर समन्वय हुआ है। एक ओर वे वेदांत से प्रभावित दीख पड़ते हैं और दूसरी और तसव्वुफ से। अद्वैतवाद का समर्थ करते हुए कवि ऊद्धवदास जी कहते हैं :-

जीव ईश का बंधन टोड़ा एक अखंड अद्वैत होइ।[2]

ऊद्धवदास प्रसिद्ध सूफी मन्सूर की भांति फिर अनालहक अर्थात् 'अहम् ब्रह्मोऽस्मि' का उद्बोध करते हैं।

लगाकर रंग फिरा मस्त मलंग अनालहक फिर यह पुकारा।[3]

---

१ रत्न जोति भाङो १ पृष्ठ २६२
२ वही ,, १९२
३ वही ,, १५१

संत स्वामी टेऊंराम महाराज

संत स्वामी टेऊंराम महाराज आधुनिक सिन्धी कवियों में विशिष्ठ स्थान रखते हैं। वे स्वातन्त्र्य तथा सात्त्विक जीवन के प्रबल समर्थक थे। उनकी साधना स्वानुभूति, स्वाध्याय, सद्विचार, सदाचार तथा आध्यात्मिक ज्ञान से सम्बंधित थी। उनका व्यक्तित्व एक संत, सुधारक, आध्यात्मिक मार्गदर्शक, दार्शनिक, कवि एवं संगीतज्ञ के रूपों में मुखरित होता है।

संत स्वामी टेऊंराम का जन्म सिन्ध प्रदेश के हैदराबाद ज़िले के खंडू ग्राम में सन् १८८८ के आषाढ़ मास के शुक्ल पक्ष में एक क्षत्रिय कुल में हुआ। उनके पिताजी का नाम श्री चेलाराम आसनदास व माताजी का नाम कृष्णादेवी था। श्री चेलाराम संत सेवी थे। वे कई संतों महात्माओं एवं योगियों को अपने घर में आमंत्रित करते थे। माता कृष्णादेवी इन महात्माओं का दर्शन पाकर एवं उनकी सेवा कर अत्यंत प्रसन्न होती थी। एक दिन उनके मन में यह इच्छा उत्पन्न हुई कि वह ऐसे ही तेजस्वी ओजस्वी महात्मा को जन्म देकर धन्य हो। यह इच्छा संकल्प में परिवर्तित हुई। माता कृष्णादेवी ने चालीस दिन की साधना की और ईश्वर की अनुकम्पा से उसकी साधना फलीभूत हुई। उसने स्वामी टेऊंराम महाराज जैसी महान विभूति को जन्म दिया।

माता कृष्णादेवी उन्हें बचपन में ही शिवोऽहं शिवोऽहं की लोरी देती थी। माता पिता के धार्मिक संस्कारों एवं घर के भक्तिमय वातावरण में बालक

टेऊंराम का पालन पोषण हुआ। बालक टेऊंराम का अन्य बालकों की भांति खेल कूद में मन नहीं लगता था। वे अपने बालक साथियों को बुलाकर राम नाम की धुनि लगाते थे। उन्हें पढ़ने के लिये पाठशाला में भेजा गया किन्तु उनका मन पढ़ने में नहीं लगता था। वे पाठशाला में भी भजन गाते रहते थे। उनके घर में जो संत महात्मा आते रहते थे, बालक टेऊंराम सदैव उनकी सेवा में लगे रहते थे, साथ साथ उनके प्रवचन भी सुनते रहते थे। एक दिन एक महात्मा ने सत्संग करते हुए गुरू की आवश्यकता पर बल दिया और गुरु–मंत्र का महत्त्व प्रतिपादित किया। बालक टेऊंराम उस महात्मा के उपदेश से प्रभावित होकर तत्कालीन प्रसिद्ध संत एवं सूफी श्री आसूरामजी के यहां आए और उनसे गुरु–मंत्र की दीक्षा ली। उस समय बालक टेऊंराम की आयु १४ वर्ष की थी।

भक्त चेलाराम प्रतिदिन घर में सत्संग करते थे। बालक टेऊंराम भी सत्संग में सम्मिलित होते थे। पूज्य पिताजी के देहावसान के बाद श्री टेऊंराम जी दुकान का कारोबार भी चलाते थे तथा स्वयं सत्संग भी करते थे। इकतारा लेकर जब वे गाते थे तो प्रेमी मंत्र मुग्ध हो जाते थे। उनके छोटे भाई स्वामी ग्वालानंदजी भी उनके आचरण से अत्यंत प्रभावित हुए। स्वामी टेऊंरामजी दुकान चलाते समय गरीबों, फकीरों को मुफ्त में वस्तुएं देते थे। धीरे धीरे उनका मन सांसारिक व्यवहार से ऊब गया और मन में भक्ति और वैराग्य की भावना तीव्र होती गयी। अब वे सिर्फ दो तीन घंटे दुकान खोलते थे, शेष समय भगवद् भजन में सफल करते थे। बड़े भाई श्री टहलराम ने अब उन्हें बगीचों और खेती बाड़ी की निगरानी का काम सौंपा। स्वामी टेऊंराम जी बगीचे में आकर भी भगवद् भजन में तल्लीन हो जाते थे। प्रेमा-भक्ति के प्रवाह में वे स्वयं भजन भी लिखते थे। उनके बड़े भाई श्री टहलराम स्वामी टेऊंरामजी का ऐसा व्यवहार देखकर क्रोधित होते थे। एक दिन स्वामी टेऊंरामजी श्मशान भूमि में एक वृक्ष के नीचे ध्यान में तल्लीन होकर बैठ गये। परिवार के सम्बंधी दो दिन उन्हें ढूंढते रहे, आखिर तीसरे दिन श्मशान भूमि में उनकी स्वामीजी से भेंट हुई। सम्बंधियों के अनुरोध पर फिर स्वामी टेऊंरामजी घर में जाकर सत्संग कीर्तन करने लगे। उनकी वाणी में सरस्वती थी, माधुर्य था। अब उनके सत्संग में श्रोता गण बढ़ते गये। बालक भी स्वामीजी के सत्संग में आते रहते थे। बढ़ती हुई कीर्ति को देखकर कुछ लोगों ने स्वामीजी के प्रति द्वेष

की भावना रखी- पंचायत ने भी विरोध किया, परन्तु कुछ ही दिनों के पश्चात् प्रतिभा संपन्न स्वामीजी के प्रेरक जीवन से प्रभावित होकर इन लोगोंने स्वामी जी से क्षमा याचना की।

स्वामीजी ने जिस आध्यात्मिक अमृत का रसास्वादन किया उस अमत का दूसरों को आस्वादन कराने के लिए 'प्रेम प्रकाश मंडली' की स्थापना की, जिसका आदर्श था जीव का अज्ञान अंधेरा दूर कर, उसे प्रेम व ज्ञान का प्रकाश देकर आध्यात्मिकता की ओर अग्रसर करना। स्वामीजी मंडली को लेकर कराची, हैदराबाद,सक्खर, शिकारपुर आदि नगरों एवं कई गांवों में सनातन धर्म, वेदांत एवं सत् सिद्धांतों का प्रचार व प्रसार करने लगे। भ्रम, भूत, प्रेत आदि से जो जीव डरते थे, स्वामीजी ने उन्हें अभय दान देकर निर्भय कर दिया। स्वामीजी किसी भी मत, मज़हब, भेष, पंथ. जाति की निंदा अथवा खंडन कभी नहीं करते थे। वे कहते थे कि अपने कर्मानुसार परमात्मा का नाम जपना चाहिए। अगर आप का धर्म आपके विचार से छोटा है, तो भी अपने ही धर्म से ही आपका कल्याण और उद्धार होगा।

स्वामीजी ३० वर्ष की आयु में अपनी जन्म नगरी खंडू को छोड़कर, अपनी शिष्य मंडली के साथ नवाबशाह जिले के 'टंडोआदम' नगर में पधारे। टंडोआदम नगर के बाहर दक्षिण दिशा की ओर भ्रमण करते हुए वे एक जंगल में आ निकले जहां पहाड़ी के समान बालु के टीले थे। वे वहां लाठी गाड़ के पद्म आसन लगाकर भगवद् भक्ति में तल्लीन हो गए। उनके भक्ति के प्रताप से उस जंगल में मंगल हो गये और वह स्थान 'अमरापुर' के नाम से प्रसिद्ध हुआ। कई साधक वहां आते थे और आध्यात्मिक आनंद का रसा-स्वादन कर तृप्त हो जाते थे। स्वामीजी की यश-कीर्ति बढ़ने लगी, यह बात कुछ संकुचित सम्प्रदायवादियों से सहन न हो सकी। उन्होंने स्वामीजी के विरुद्ध शोर मचाया कि संत टेऊंराम सनातन धर्म का खंडन करते हैं, ब्राह्मणों की निंदा करते हैं, स्वामीजी खाधी का झबा पहनते थे, विरोधियोंने जिलाधिकारी से शिकायत की कि ये साधु लोग महात्मा गांधी के शिष्य हैं और अंग्रेज सरकार के विरुद्ध कटु प्रचार करते हैं। जांच के लिए तहसीलदार अमरापुर स्थान पर आये। वे अमरापुर का वातावरण देखकर अत्यंत प्रसन्न

होकर लौट गये। द्वेषी लोगों ने फिर ज़िलाधिकारी से स्वामीजी के विरुद्ध शिकायत की। ज़िलाधिकारी स्वयं अमरापुर स्थान पर गया, उस समय स्वामी जी सत्संग में लीन थे। ज़िलाधिकारी स्वयं को अपमानित समझकर लौट आया। उसने तहसीलदार से आज्ञा की कि इन साधुओं की झोपड़ियों को आग लगा दी जाय ताकि वे साधु स्वयं डर कर भाग जायें। तहसीलदार ने आज्ञा का पालन किया और झोपड़ियों को आग लगवाई। स्वामीजी फिर भगवद् भजन में लीन रहे। तीन दिन तक आग जलती रही।

परन्तु सत्संग नियमानुसार होता रहा। एक दिन सवेरे एक अंग्रेज अपनी पत्नी के साथ वहां पधारे और उन्होंने स्वामीजी से पूछा कि ऐसे सुन्दर स्थल पर किसने आग लगाई है? स्वामीजी ने कहा आपने आग लगाई है। यह सुनकर वे हंसने लगे। उन्होंने स्वामीजी से अनुरोध किया कि आप इस ज़मीन के लिए कराची के जिलाधिकारी को अर्जी भेजें मैं आपको पूरी पूरी सहायता करूंगा और यह ज़मीन आपको मिल जायेगी। स्वामीजी ने उत्तर दिया कि अर्जी भी आप करें हम नहीं करेंगे। कुछ ही दिनों के पश्चात् वह ही तहसीलदार जिसने आग लगा दी थी स्वामीजी के यहां आया और आकर स्वामीजी से प्रार्थना की कि नये ज़िलाधिकारी का आदेश हुआ है कि आप संत लोग जितनी ज़मीन चाहें उतनी आपको दी जाय। यहां आपका स्थान सदैव स्थापित रहेगा। आज तक वह संतों का डेरा कायम है। गुरू अर्जनदेव जी महाराज ने अपनी वाणी में ठीक कहा हैं :–

भगतां के कार्ज प्रभु आप खलोया हरि कम करावन आया राम।

जनता में जनार्दन :–

स्वामीजी भगवद् भजन के साथ साथ गरीबों दीन दुखियों की सेवा भी करते रहे। वे प्रति दिन अन्न क्षेत्र चलाते थे, जहां कई भूखे प्यासे आकर अपनी भूख प्यास मिटाते थे। स्वामीजी कुम्भ मेलों के अवसर पर भी बड़े पैमाने पर अन्नक्षेत्रों का आयोजन करते थे, जहां कई संत महात्माएं और जिज्ञासु यात्री आकर भोजन करते थे और विश्राम लेते थे। उनके धर्मपीठ के अधिकारी स्वामी सर्वानंद महाराज, एवं उनकी परम्परा के अन्य संत स्वामी शांति प्रकाशजी महाराज, स्वामी बसंतराम, स्वामी चंदनराम, स्वामी माधवदास आदि आज तक ऐसे अन्न क्षेत्रों का आयोजन करते रहते हैं।

प्रभु में विश्वास :

स्वामीजी के घर में कई संत–महात्मा लोग आते जाते थे और उनकी प्रेम व श्रद्धा के साथ सेवा की जाती थी। एक दिन माता कृष्णादेवी ने स्वामीजी से कहा कि अब घर में चांवल, आटा व अन्य भोजन सामग्री ज़रा भी नहीं है, रूपये पैसे भी नहीं जो कुछ खरीद लिया जाय। घर में साधु लोग पधारे हैं, भोजन की व्यवस्था कैसे हो? स्वामीजी ने कहा, "मां आप चिंता मत करो। भगवान भला करेगा, उनका काम वो ही जाने। जब भोजन करने का समय हुआ तो अचानक तीन चार लोग पका पकाया बीस पच्चीस लोगों का भोजन ले आये और कहा कि भाई ईसरदास सालारे वाले के यहां उत्सव था, उन्होंने यह भोजन दिया है। आप कृपया स्वीकार करें। माता कृष्णादेवी यह कौतुक देखकर आश्चर्य में पड़ गई। उसने सभी संतों को भोजन खिलाया। संध्या-समय सालारे गांव के भाई आलूराम वहां आये। माता कृष्णादेवी ने उनसे पूछा कि आज भाई ईसरदास के यहां कौन सा उत्सव मनाया गया? भाई आलूराम ने उत्तर दिया कि भाई ईसरदास के यहाँ कोई भी उत्सव नहीं था, वे स्वयं चार दिन से दूसरे नगर गये हैं। माता यह सुनकर विस्मय में पड़ गई। भगवान भक्तों की सहायता एवं सेवा करता है।

स्वामीजी की दयालुता :–

एक दिन प्रातःकाल को स्वामीजी स्नान करने के लिए सिन्धु नदी की ओर जा रहे थे, तो रास्ते में एक गरीब वृद्ध माता स्वामीजी से कहने लगी, "महात्माजी मैं एक गरीब बुढ़िया हूं, काम काज करके गुजारा करती हूं। एक कुत्ता रात को मेरे द्वार पर मर गया है, इस मेहतरानी को इस मृतक कुत्ते को उठाने के लिए दो आना मेंहनताना भी दे रही हूं, फिर भी यह मेहतरानी मृतक कुत्ता उठाने से आनाकानी कर रही है और चार आने की मांग कर रही है, कृपया आप इसे समझायें। स्वामीजी ने मेहतरानी को समझाया कि यह बुढ़िया बेचारी गरीब है, दो आने ही लेकर कुत्ता उठाओ। मेहतरानी मनमानी करती हुई बोली मैं चार आनें से कम कदाचित नहीं लूंगी। मेहतरानी का ऐसा निष्ठुर उत्तर सुनकर स्वामीजी को उस बुढ़िया पर दया आई और उन्होंने स्वयं रस्सी से बंधे हुए मृतक कुत्ते को लेकर दूर कहीं किसी खड्डे में डाल दिया और तत्पश्चात् सिन्धु नदी में नहाकर प्रभु के ध्यान में मग्न हो गये। यह बात उस

मेहतरानी ने स्वामीजीके विरोधिथों से कही। विरोधियोंने पंचायत में शिकायत की कि श्री टेऊंराम जी ने शूद्रों जैसा कार्य किया है और वह अपने धर्म से भ्रष्ट हुआ है। पंचों में इस घटना पर बहुत ही वाद विवाद हुआ। पंचायत ने स्वामीजी को स्पष्टीकरण के लिए बुलाया। स्वामीजी ने बीती हुई घटना पर प्रकाश डालते हुए कहा कि मैंने स्वयं मेहतरानी से विनय की कि गरीब बुढ़िया से दो आने लेकर इस मृतक कुत्ते को उठाओ। जब मेहतरानी ने उत्तर दिया कि चार आने से कम नहीं लूंगी तब उस गरीब बुढ़िया पर मुझे दया आ गई और मैंने उस कुत्ते वाली रस्सी को खींचकर उस कुत्ते को दूर खड्डे में डाल दिया। किसी गरीब पर दया करना क्या कोई अधर्म है? पाप है? ये कुत्ते भी तो प्रभु की संतान हैं, केवल देह का अंतर है। 'सर्व खल्विंद ब्रह्म'।

नाम की शक्ति :–

स्वामीजी के हाथ में ऋद्धि सिद्धि थी। एक बार स्वामीजी का खाही गांव में सत्संग प्रवचन था। रात को एक बजे सत्संग समाप्त हुआ। प्रेमियों ने एक सौ लोगों के भोजन की व्यवस्था की थी, परन्तु सत्संग समाप्त होने के पश्चात् भोजन खाने वालों की संख्या करीबन चार पांच सौ देखकर प्रेमी घबरा गये कि अब अधिक लोगों के खाने की व्यवस्था कैसे की जाय। वे स्वामीजी के पास आकर कहने लगे, "सतगुरू महाराज हमने एक सौ प्रेमियों के भोजन की व्यवस्था की है और यहां अब पांच सौ प्रेमी हैं, अब जो आप की आज्ञा हो"। स्वामीजी भोजन भंडार में आए और जल का लोटा लेकर सत्नाम साक्षी कहते हुए भोजन पर जल छिड़काया और आयोजकों से कहा कि अब भोजन खिलाना आरंभ करो। चार पांच सौ प्रेमियों ने तो भोजन खाया फिर भी भोजन बच गया। स्वामीजी ने आज्ञा दी कि शेष भोजन भिखारियों को खिला दो, अगर फिर भी भोजन बच जाय तो सवेरे पक्षियों को खिलाना। आयोजक यह लीला देखकर विस्मय में पड़ गये। स्वामीजी ने कहा यह सब नाम की शक्ति है।

एक बार स्वामीजी का एक प्रेमी श्री भागचन्द स्वामीजी को अपने खेत में ले आया। वहां उसने स्वामीजी से प्रार्थना की कि प्रति वर्ष यह कपास की खेती बहुत अच्छी होती है, इस वर्ष कुछ कीड़े लग गये हैं जो फूल लगते ही झड़ जाते हैं। आप यहां पधारे हैं, आशीर्वाद करो यह खेत फलता फूलता

रहे। स्वामीजी ने दास की वेनती सुनकर 'सत्नाम साक्षी' कहते हुए उस खेत में जल छिड़काया। प्रभु की कृपा एवं संतों की आशीर्वाद से दुगनी फसिल हुई। नाम में कितनी शक्ति है।

ब्रह्मलीन :– स्वामी टेऊंराम महाराज सन् १९४३ ई अर्थात् संवत् १९७९ ज्येष्ट मास शुक्ल पक्ष छठ तिथि शनिवार के दिन हैदराबाद सिन्ध में ब्रह्मलीन हुए। स्वामीजी ने जो स्मरण, सेवा स्नेह परोपकार ज्ञान की ज्योति जलाई, वह आज भी प्रज्वलित है।

काव्य साधना:-

स्वामी टेऊंराम के गुरू स्वामी आमूराम बड़े विद्वान और सूफी कवि थे। स्वामी टेऊंराम जी को भी अपने गुरूजनों से कवित्व का रंग चढ़ा। साथ साथ इन्होंने श्रीमद भगवद् गीता, वेदों उपनिषदों का गहन अभ्यास किया। विद्वानों और महापुरुषों के सम्पर्क में आये। उनके अन्तःकरण में ईश्वर अनुराग उत्पन्न हुआ। सरस्वती माता की कृपा से उनके मुख से कविता रूपी ज्ञान–गंगा बह निकली, जिसने न सिर्फ तत्कालीन संतप्त लोगों को शीतलता प्रदान की किन्तु आज भी उनकी वाणी विषय विकारों से वशीभूत व्यक्तियों को, मुक्त कर उन्हें अद्वितीय आध्यात्मिक आनंद का आस्वादन करा रही हैं।

स्वामी टेऊंरामजी महाराज ने श्री गुरू नानक देव एवं अन्य संत कवियों की भांति भिन्न भिन्न रागों में काव्य रचना की जैसे राग रामकली, राग प्रभाती, राग आसा, राग धनाश्री, राग भैरवी, राग सोरठ, राग तिलंग, राग मारू इत्यादि रागों का प्रयोग किया है। इस से प्रमाणित होता है कि उन्हें भारतीय राग विद्या का अच्छा ज्ञान था। दूसरी ओर उन्होंने कबीरदास, सूरदास तुलसीदास एवं अन्य हिन्दी सन्त कवियों की भांति दोहे, सवैये, कवित्त, कुंडलियां धनश्री छन्द, कोटड़ा छन्द, बारह मास छन्द, आदि छन्दों में भी काव्य रचना की। इस से प्रमाणित होता है उन्हें पिंगल शास्त्र की भी अच्छी जानकारी थी। फारसी तरज़ पर उन्होंने कुछ शैर भी लिखे हैं। स्वामीजी की कवितावली छन्दावली, अमरापुर वाणी एवं अन्य काव्य पुस्तकें प्रकाशित हुई हैं, किन्तु उनकी समूची काव्य वाणी प्रेम–प्रकाश ग्रन्थ में है।

गुरू महिमा – संत कवियों ने गुरू की महत्ता पर बल दिया है, क्यों कि गुरू के बिना ज्ञाम की प्राप्ति नहीं हो सकती। संत टेऊंराम महाराज गुरू की महत्ता प्रतिपादित करते हुए कहते हैं–

सद्गुरू बिन निज ज्ञान न होवे, कहे टेऊँ सत् मान।
ज्ञान बिना नहि मुक्ति होवे कहते वेद पुरान।[1]

स्वामीजी उपमालंकार द्वारा गुरू की महिमा गाते हुए कहते हैं कि गूरू सागर सम शीतल एवं ज्ञान रूपी रत्नों से पूर्ण हैं। जो सत्गुरू की सेवा करता है, उसे ही आत्मज्ञान रूपी अमूल्य रत्न प्राप्त होता है। गुरू एक नावक समान है जो जीव को नाम रूपी नौका द्वारा संसार सागर से पार लगाता है। गुरू एक कुशल वैद्य के समान है जो जीव को नाम रूपी दवाई देकर उसका द्वन्द्व रोग दूर करता है। गुरू सूर्य सम है जो अपने वचनो रूपी किरणों द्वारा ज्ञान का प्रकाश देकर अज्ञान रूपी अंधकार को दूर करता है :–

गुरू है सागर सम, रत्न हैं ज्ञान ताइं में,
जोई सेवे सोई पावे, रत्न विज्ञान को।
गुरू है मलाह सम नाम नाव चाढ़ कर,
पार पहुंचाय देत मोक्ष के स्थान को,
वैद्य के समान गुरू नाम की दवाई देके,
द्वन्द्व रोग दूर कर, करत कल्याण को।
कहे टेऊं रवि गुरु वचन किरण जाके,
ज्ञान का प्रकाश कर हरत अज्ञान को।[2]

स्वामीजी के मन में गुरू के प्रति अगाध श्रद्धा थी। वे कहते हैं कि गुरू गंगा के समान जीव को पवित्र करता है, शीतलता प्रदान करता है, सूर्य एवं शशि की भांति जीव का अज्ञान अंधकार दूर करता है। गुरू की अनुकम्पा से कार्य सिद्धि होती है, इस लिए जीव को गुरू की सेवा करनी चाहिये–

---

१ श्री प्रेम प्रकाश ग्रन्थ पृष्ठ ३७
२ कवितावली–छन्दावली पृष्ठ ५

गुरू शशि सूर्य सम हरत तपत तम,
गंगा के समान गुरू पावन करत है,
कहे टेऊं गुर सेव करे निज पाओ मेव,
गुरू के प्रसाद सब कारज सरत है।[१]

दार्शनिक विचार :–

ब्रह्म– स्वामी टेऊंराम महाराज ने अपने काव्य में दार्शनिक विचारों का विवेचन भी किया है। स्वामीजी ने अद्वैत सिद्धांत का समर्थन किया है। उन के अनुसार ब्रह्म सर्वव्यापक है, अखंड है, अविनाशी है, अचल, अमर, अनादि अगम, अनामी है। वह निरंजन नटवर नागर है, अन्तर्यामी भी है तो प्रत्यक्ष भी है। सर्वत्र उस की ही सत्ता है, वह परिपूर्ण पावन है, वह साक्षी स्वयं प्रकाशी है :–

दूध घृत ज्यों सब के अन्तर् व्यापक सो अविनाशी है।
पूरन एक विभू वस्तु वह वेदान्तनि को भासी है।
ब्रह्म अखण्ड अद्वैत अनामय सत्‌चित आनंद राशी है।
कहे टेऊं सो प्रत्यक्ष जानो साक्षी स्वयं प्रकाशी है।[२]

.. .. ..

प्रत्यक्ष है परमेश्वर पोषक प्रभु पार ग्रामी जी,
नाम निरंजन नर नारायण निरंहकार निस्कामी जी,
नटवर नागर नाथ निसंगा निरालम्ब निरआमी जी।
अचल अच्छेदा अटल अभेदा आत्म अन्तर्यामी जी,
अमर अनादी अजर अजाती अगम अगाध अनामी जी[३]

जिम प्रकार घट भिन्न भिन्न आकार के हैं परन्तु एक ही माटी से बने हैं, तरंगें जल से ही उत्पन्न होती हैं, फिर जल में ही समा जाती हैं, वे जल रूप हैं, उसी प्रकार सब में ब्रह्म विद्यमान है :–

---

१ कवितावली–छन्दावली — पृष्ठ ५
२ श्री प्रेम प्रकाश ग्रन्थ — पृष्ठ ११
३ वही — पृष्ठ ६

ज्यों सब घट में है इक माटी, तरंगों में जल सारो रे।
कहे टेऊं त्यों सब में पूरन, साक्षी सिरजणहारो रे।[१]

ब्रह्म सत्चित् आनंद रूप है, और वह ही इस जगत् का आधार है और वह सर्वव्यापी है –

सत्चित् सुख रासी घट घट मांहि वासी,
पूरण स्वयं प्रकाशी जगत् अधारो है।[२]

ब्रह्म की सर्वव्यापकता दरशाते हुए स्वामीजी कहते हैं:–

जैसे शब्द नभ मांहि स्पर्श पवन मांहि,
अग्नि मांहि ऊष्णता पूरन पछानिये।
सलिल में रस जैसे गन्ध है धरनि मांहि,
दूध मांहि घृत रवि किरण समानियें।
मिर्ची मांहि तीक्षणता ईख मांहि मधुरता.
घृत मांहि चिकनता गुणी गुण मानिये।
कहे टेऊं तैसे नर सकल जगत मांहि
निजातम ब्रह्म इक व्यापक पछानिये।[३]

जीव – अद्वैत वेदान्त की शिक्षा का निचोड़ "तत्त्वमसि" महावाक्यमें दिया गया है। जीव तथा ब्रह्म दोनों में पूर्ण अभेद है। यही वेदान्त की शिक्षा है। दोनों में शुद्ध चैतन्य को लेकर ही एकता मानी जाती है।[४] स्वामी टेऊंराम जी ने भी 'तत्त्वमसि' महावाक्य का अपने काव्य में निरूपण किया है। स्वामीजी साधक को सचेत करते हुए कहते हैं जो ब्रह्म सर्वव्यापी है, सब को दीख रहा है, जो अंतर्यामी भी है और प्रत्यक्ष भी है, वह ब्रह्म तुम स्वयं हो:–

तुम हो ब्रह्म अचल अविनाशी सर्व व्यापक स्वयं प्रकाशी।[५]

---

१ कवितावली–छन्दावली पृष्ठ १२७
२ वही ,, १३
३ वही १४
४ भारतीय दर्शन पंडित बलदेव उपाध्याय पृष्ठ ४७७
५ श्री प्रेम प्रकाश ग्रन्थ ,, ३४

उसी देव का दीदारा, जोई सब को देखत है।
गुप्त प्रगट जो पाप पुण्य को, अंतर बाहर पेखत है।
नभ ज्यों निर्मल निर्गुन जामें, रूप रंग ना रेखत है।
कहे टेऊं सो रूप तुम्हारा, महिमा जास विशेषत है।[1]

.. ..

जाग्रत स्वप्न सुषुपति माहीं, जो नित खेलन हारा है।
कहे टेऊं सो रूप तुम्हारा वेदन यही विचारा है।[2]

जैसे जीव अंधकार में रज्जु को सर्प मानता है उसी प्रकार अज्ञानरूपी अंधकार के कारण वह ब्रह्म को भूलकर जगत् को सत् मानता है। गुरू-ज्ञान रूपी दीपक द्वारा जीव का अज्ञान अंधेरा दूर होता और वह तत्पश्चात् ब्रह्म का साक्षात्कार करता है -

जैसे जीव अंधारी करके सर्प रज्जू में जानत है,
जब नर दीप जलाकर देखत, केवल ही रज्जु मानत है।
तैसे अविद्या तम के माहीं,, जग को सत्य बखानत है।
कहे टेऊं गुर ज्ञान दीप से, पूरण ब्रह्म पछानत है।[3]

जगत् :– स्वामी टेऊंरामजी ने शंकराचार्य के दार्शनिक विचारों का अपने काव्य में समर्थन किया हैं। शंकराचार्यजी ने जगत् को मिथ्या माना है, स्वामीजी भी जगत् को स्वप्न सम मिथ्या एवं झूठा मानते हैं।

जो कछु दीखत सोई स्वपना, स्वपना सब संसारा है।[4]

स्वप्न में जितने भी पदार्थ दृश्यमान हैं वे असत् हैं, उनका कोई अस्तित्व नहीं, वह ज्ञान जाग्रतावस्था में होता है, उसी प्रकार ब्रह्म ज्ञान की प्राप्ति के पश्चात् जगत् झूठा प्रतीत होता है। अज्ञान के कारण ही जगत् सत् भासत है:–

---

१ कवितावली–छन्दावली पृष्ठ १०९
२ ,, ,, १०९
३ ,, ,, ९०
४ ,, ,, ९७

सुपने में रंग राव भयो पूत बांझनी को,
निर्धन धन को पाय करत भण्डारा है।
अंधरे को नैन भये मूक मुख बैन भये,
पिंगले को पांव भये चढ़े गिरिनारा है।
कहे टेऊं जागन से जैसे येही सत्य नाहिं,
तैसे ब्रह्म ज्ञान भये झूठा जग सारा है।[1]

तात्त्विक परिवर्तन को विकार तथा अतात्त्विक परिवर्तन को विवर्त्त कहते हैं। दही दूध का विकार है परन्तु सर्प रज्जु का विवर्त्त है क्यों कि दूध और दही की सत्ता एक प्रकार की है। परन्तु रज्जु और सर्प की सत्ता भिन्न प्रकार की है। सर्प की सत्ता काल्पनिक है, परन्तु रज्जु की सत्ता वास्तविक है।[2] स्वामीजी ने भी जगत् असत् का उल्लेख करते हुए विवर्त्तवाद का संदर्भ दिया है। जिस प्रकार अंधकार में रज्जु सांप भासती है, उसी प्रकार अज्ञान के अंधकार के कारण ब्रह्म जो सत्य है उसका भास नहीं होता जो असत् जगत् है वह सत् भासता है। ज्ञान रूपी प्रकाश होने से जीव ब्रह्म को सत् मानता है और जगत् उसे झूठा भासता है:—

रज्जू मांहि सांप जैसे भासत है भ्रम कर,
भ्रम गये केवल ही रज्जु ही प्रभासे है।
कहे टेऊं ब्रह्म माँहि तैसे ये जगत नाहि,
अज्ञ जग भासे ज्ञानी भ्रम ही प्रकासे है।[3]

सूर्य के प्रकाश के कारण मृग को 'मरुस्थल' जलस्थल भासता है, तृष्त मृग जैसे ही उस स्थल पर पहुंचता है तो उसे जल नहीं मरू दीख पड़ती है, उसी प्रकार माया के प्रकाश के कारण जीव असत् जगत् को सत् मान बैठा है :—

दर्शन मात्र है यह दुन्या, ज्यों मरुस्थल पानी रे।[4]

---

१ कवितावली छन्दावली पृष्ठ १५
२ भारतीय दर्शन पृष्ठ ४७०
३ कवितावली-छन्दावली ,, १५
४ वही ,, ११६

वेदान्त के अनुसार एक मात्र कारण सत्ता अविनाशी तथा निर्विकार है तथा उस में कल्पित होने वाला नानात्मक प्रपंच केवल कल्पना–मूलक है– अनिर्बचनीय है। इस तरह एकमात्र स्वप्रकाश अखण्ड चैतन्य सत्ता के अतिरिक्त कार्यभूत जगत् प्रतिभासिक है। अतःकारण ही एकमात्र सत्य है तथा कार्य मिथ्या या अनिर्वचनीय है[1] स्वामी टेऊंराम जी ने भी इस तथ्य का निरूपण किया है :–

तीन काल में जगत बना नहिं,
भ्रम करे यह भासत है।
कहे टेऊं ज्यों नींद दोष से,
स्वपना सत्य विभासत है।[2]

माया : ब्रह्म माया द्वारा जगत् में खेल खेल रहा है।

माया से तुम बाजी लाते, भांति भांति के खेल खेलते।[3]

स्वामीजी ने माया के लिए मरकट, अग्नि, बादल, छाया, स्वप्न पदार्थों की उपमा देते हुए उसकी अस्थरता दिखाई है।

मरकट अग्नि बादल छाया, स्वप्न पदार्थ के सम माया।[4]

मुक्ति :– स्वामीजी के अनुसार गूरू ज्ञान द्वारा ही मुक्ति सम्भव है। स्वामीजी जीव से कहते हैं:–

कहे टेऊं गुर ज्ञान पायके आवा गमन मिटाओ, आनंद पाओ[5]

हरि स्मरण द्वारा भी जीव मुक्ति को प्राप्त कर सकता है।

कहे टेंऊं हरि भजन करे तुम पाओ मुक्ति धामा रे।[6]

१	भारतीय दर्शन	पृष्ठ ४७०
२	कवितावली–छन्दावली स्वामी टेऊंराम महाराज	,, ९८
३	प्रेम प्रकाश ग्रन्थ	,, १२६
४	वही	,, १८९
५	वही	,, १४६
६	वही	,, १०–११

राम नाम की महिमा :– राम का नाम सन्तापों, कलेशों को हरने वाला है, और चारों पदार्थों का देने वाला है। राम नाम के स्मरण से जीव संसार के भवसागर से पार लग सकता है। उस राम की ज्योति सर्वत्र विद्यमान है। स्वामीजी के राम दशरथ सुत राम नहीं उनके राम परब्रह्म है जो सर्वत्र व्यापक हैं। स्वामी राम नाम की महिमा गाते हुए कहते हैं:–

राम नाम का जाप करे तुम जन्म जन्म के पाप हरो।
राम नाम की निर्मल बानी, राम नाम है सब सुख दानी।
राम नाम को सुमरे प्रानी तन मन के सन्ताप हरो ।।
राम नाम है परम पवित्र राम नाम है गुरू का मन्त्र।
राम नाम को जपे निरंतर भवसागर से आप तरो ।।
राम नाम है माणिक मोती राम नाम की घट घट जोती।
राम नाम बिन गति नहिं होती भावें तन पर छाप धरो ।।[1]

हरि का नाम गंगा जल समान है जिस में नहाकर जीव को पवित्र एवं शीतल होना चाहिए :–

नाम हरि का गंगा जल है ताहिं में नित नाईये।
मैल मन की दूर करके पाप ताप मिटाइये।[2]

सत्संग की महिमा :– सत्संग द्वारा जीव का विवेक जाग्रत होता है। गोस्वामी तुलसीदास भी इस तथ्य का समर्थन करते हुए राम चरित मानस में कहते हैं :-

बिन सत्संग विवेक न होई।

स्वामी टेऊंरामजी महाराज भी सत्संग की महिमा गाते हुए कहते हैं कि जीव को सत्संग द्वारा चांद एवं चन्दन से भी अधिक शीतलता प्राप्त होती है। यज्ञ, दान, तप, व्रत से भी सत्संग का महत्त्व अधिक है :–

करो सत्संग सन्तों का, यही है सार संसारे।
बहुत विधि कर्म यज्ञ दाना, व्रत तप नेम जप नाना।

---

१ श्री प्रेम प्रकाश ग्रन्थ पृष्ठ ४३
२ वही ,, २३३

करो प्रयाग इस्नाना नहीं सत्संग सम सारे
चन्दन शशि शीत जग माहीं, उभय सत्संग सम नाहीं।
सदा सेवो सज्जन ताहीं, सर्व संसा भ्रम टारे ॥[१]

जब जीव का भाग्योदय होता है तभी उसे सत्संग एवं संतों की प्राप्ति होती है और सत्संग बिना प्रभु प्रेम जाग्रत नहीं होता :–

संत समागम तब मिले जब ही जागे भाग।
कहे टेऊं सत्संग बिन होय न हरि अनुराग।[२]

आयु वह सफली है जो सत्संग में व्यतीत होती है :–

सुत तो सेवे मात पित धन जो दीजे दान।
आयु सा सत्संग जा कह टेऊं सत् मान।[3]

प्रातःकाल की महत्ता :– सभी ऋषि मुनियों सन्तों ने प्रातःकाल को भगवद् भजन करने पर बल दिया है। प्रातःकाल को 'ब्रह्म मुहुर्त' एवं 'अमृत वेला" की उपाधि दी गई है। स्वामीजी भी प्रातःकाल की महित्ता दरशाते हुए साधक को अमृत वेले नाम स्मरण का आदेश देते हुए कहते हैं :–

प्रातकाल उठ देव लोक में सुर गण ध्यान लगाते हैं,
आपस में मिल हरि जस गावे पीवत भरकर अमृत जाम।
कहता टेऊं प्रातकाल में जागत वो बड़ भागी है।
जो जन जागे अमृत चाखे पूर्ज़ हो सब तांके काम[४]

प्रेम :– संसार में प्रेम के अनेक प्रकार होते हैं, प्रभु प्रेम ही सर्वश्रेष्ठ एवं सार्थक है—

प्रेम जगत में बहुत है प्रेम बिना नहिं कोय।
टेऊं साचा प्रेम सो जो हरि हीं से होय।[५]

१	श्री प्रेम प्रकाश ग्रन्थ	पृष्ठ १८५
२	वही	,, ३६८
३	वही	,, ३६८
४	वही	,, १४
५	वही	,, ३६८

परमात्मा को धन-द्रव्यादि नहीं भाता। वह तो प्रेम चाहता है। प्रभु तो प्रेम के वस में हैं। जहां प्रेम है, वहाँ परमात्मा हैं :

धन विद्या गुण रूप बल भावत ना भगवान।
टेऊं हरि को भावहीं प्रेम एक प्रधान ॥
प्रीतम का जहँ प्रेम है प्रीतम है तहँ ठौर।
कहे टेऊं बिन प्रेम के रहत न सो थल ओर।[1]

जिस मनुष्य के मन में प्रेम नहीं वह पशु तुल्य है :-

प्रेम जिसे सो मनुष्य है प्रेम बिना पशु जान।[2]

प्रेम द्वारा ही प्रभु की प्राप्ति होती है :–

प्रेम बिना ना हरि मिले तपस्या बिन नहि राज।[3]

निम्न जाति के मनुष्य भी प्रेम द्वारा ही प्रभु को प्राप्त कर अमर पद पाते हैं जैसे:–

करमा कुबजा भीलनी हाथी अरु हनुमान।
टेऊं केवल प्रेम कर पाया हरि भगवान[4]

प्रेम बिना जप तप जितने भी कर्म हैं वे सूने हैं। प्रभु तो साधक का प्रेम देखता है :–

टेऊं हरि को भावते केवल मन का प्रेम।
जानो मन के प्रेम बिन सूने जप तप नेम।[5]

चेतावनियां :– मनुष्य के आध्यात्मिक उत्थान के लिए स्वामीजी ने अपने काव्य मे कई चेतावनियां दी हैं। जीव मनुष्य की अमूल्य देह प्राप्त कर अविद्या-अज्ञान की नींद में सो गया है, राम नाम के अमृत को त्यागकर

---

१ श्री प्रेम प्रकाश ग्रन्थ पृष्ठ ३६८
२ वही ,, ३६८
३ वही ,, ३६८
४ वही ,, ३६९
५ वही ,, ३६९

उसने माया में आसक्ति रखी है। स्वामीजी मनुष्य को सचेत करते हुए कहते है:-

राम भजन की वेला है यह, चेत सवेरे प्रानी रे।
उठो ग़ाफिल गफिलत छोड़ो मोह नींद क्यों ठानी रे। टेक
पुण्य कर्म से नर तन पाया फिर फिर चारों खानी रे।
हरि स्मरन बिन वृथा खोई ऐसी यह जिंदगानी रे॥१
जिस माया से मोह बढ़ाके भए अति अभिमानी रे।
वह माया बादल छाया सभ इक दिन होगी फानी रे।२
बालापन खेलन में खोया जोरु संग जवानी रे।
बूढ़ापन तृष्णा चिन्ता में खोया मूण्ढ अज्ञानी रे।३
कहे टेऊं अब भोग राग तजि स्मरो हरि सुखदानी रे।
जन्म मरण का दूःख मिटाके पाओ पद निर्वानी रे।४।[1]

जो जीव विषय विकारों एवं भोगों में आसक्ति रखता है, वह भवसागर में गोता खाता है और जन्म जन्म में आंसू बहाता है –

जो नर भोगन में कर प्रीती, भव में खावत गोता है।
मानुष जनम अमोलक हीरो कौड़ी बदले खोता है।
कहता टेऊं ऐसा मूर्ख जन्म जन्म में रोता है।[2]

मनुष्य देह एवं जगत् को सत्य उमझकर कितने ही दुष्कर्म करता है, स्वामीजी उसे चेतावनी देते हुए कहते हैं :–

दो दिन जग में तुम हो मुसाफिर झूठा तजि अभिमाना
अन्त समे कोई काम ना आवे जांका करत गुमाना ,
तजि मोह ममत नादान धरो तुम दिल में हरि का ध्यान ॥
पांच तत्त्व की है यह देही ताँमें पंछी प्राना,
उड़िजावे जब प्रान इसी से तब ही जरत मसाना।

---

१ श्री प्रेम प्रकाश ग्रन्थ पृष्ठ ८
२ कवितावली–छन्दावली ,, १०७

तुम भजन करो भगवान और दे हाथों से कुच्छ दान।[1]

समस्त दुखों का कारण मनुष्य का किया हुआ पाप कर्म है, इस लिए स्वामीजी पाप कर्मों से दूर रहने का आदेश देते हुए कहते हैं :–

बंदा भूल न पाप कमाइ,
दु:ख का कारण पाप पछानो, तांसे चित न लाइ।।
कहे टेऊं जे हित को चाहो शुभ कर्मन में चित लगाओ।
साध संगत गुण गाइ[2]

दास्य भावना :-

स्वामी टेऊंराम जी की भक्ति में दास्य भावना है। वे प्रभु से प्रार्थना करते हैं कि आप सर्वगुण सम्पन्न हैं मैं अवगुनों की खानि हूं। आप परिपूर्ण हैं, सर्वज्ञ हैं, मैं मति हीन हूं, अल्पज्ञ हूं आप सारी सृष्टि के कर्ता हैं। मुझे आप का ही एक आधार है। मै आपकी शरण में आया हूं मुझे अपनी शरण में ले लो राम :–

मैं आय पड़ा हूं द्वार शरण में राखले प्रभु,
तुम दीन बन्धु दातार करो यह विनय मेंरी स्वीकार,
शरण में राखले प्रभु।
तुम हो सब गुण सम्पन्न स्वामी, मैं हूं अवगुन खानी,
तेरे दर का मैं भीखारी तुम हो पूरण दानी।
मै अल्पज्ञ तुम सर्वज्ञ स्वामी कैसे तव गुन गाऊं।
तुम हो अलख आधार नेति नेति कहते वेद पुकार।[3]

नाथ सम्प्रदाय का प्रभावः–

स्वामी टेऊंरामजी नाथ सम्प्रदाय से भी प्रभावित दीख पड़ते हैं। योग साधना में आसन, प्राणायाम आदि क्रियाएं अनिवार्य है। नानाप्रकार के आसनों और प्राणायामों से सुषुम्ना मार्ग खुल जाता है। नाड़ियों

---

१ श्री प्रेम प्रकाश ग्रन्थ पृष्ठ ३१
२ वही „ १८१
३ वही „ ३१

को प्रधानतः दो भागों में विभक्त किया जा सकता है। दक्षिणांग में व्याप्त नाड़ियां सूर्य का अंग है और वाम भाग वाली चन्द्रमा के अंग। इन दोनों के बीच सुषुम्ना है। जब नाना भांति के अभ्यास से योगी चन्द्र और सूर्य मार्गों को बंद कर देता है और उन में बहने वाली वायु शक्ति संयमित होकर योनिकंद के मूल में सुषुम्ना की मध्यवर्तिनी ब्रह्मनाड़ी के मुख को खुला पाकर उस मार्ग से ऊपर उठती है तो वस्तुतः कुण्डलिनी ही ऊर्ध्वमुख होती है। प्राणायाम से कुण्डलिनी का उद्बोध सुकर हो जाता है। यह कुण्डलिनी जब उद्बुद्ध होती है तो प्राण स्थर हो जाता है और साधक शून्य पथ से निरंतर उस अनाहत ध्वनि या अनहद को सुनने लगता है, जो अखण्ड रूप से निखिल ब्रह्मांड में निरन्तर ध्वनित हो रहा है।[1] स्वामीजी साधक को योग साधना का आदेश देते हुए कहते हैं कि हे जिज्ञासू तुम ब्रह्म मुहूर्त को उठकर स्वासों की माला फेरो। अन्तःकरण में सद्गुरू महाराज की मूर्ति का ध्यान कर उन द्वारा दिये गये मन्त्र का जाप करो। अपनी सुरति को गुरु मन्त्र से मिलाओ। अपने प्राणों को दसवें द्वार चढ़ाकर, कुण्डलिनी शक्ति को जाग्रत कर अनुभव ताला खोलकर अनहद आवाज श्रवण करो :–

अमृत वेले उठ जिज्ञासू, फेर श्वास की माला रे।
सद्गुरू के मूरत का मन में धरिये ध्यान विशाला रे।
गुर मन्त्र में सुरति समाओ जग में होत निराला रे।
नाभ कमल में प्राण उठाये दसम द्वार कर आला रे-
नाद अनाहद बाजत ताहीं सुनिये शब्द रसाला रे।
नाड़ि कुण्डलिनी को जागाए खोलो अनुभव ताला रे।
कोटि रवि शशि आदि ज्योति का तहं उज्याला रे।
पाप ताप नाहि हर्ष शोक पुनि जहां न काल कराला रे।
कहे टेऊं तहं चलकर देखो आत्म पुरुष अकाला रे।[2]

पूरक, कुंभक और रेचक द्वारा साधक को किस प्रकार शब्द साधना करनी चाहिये, उसका वर्णन करते हुए स्वामीजी कहते हैं :–

अमृत वेले गुरुमुख जागी गुरु का शब्द कमाओ रे।

---

१ नाथ सम्प्रदाय डा. हजारीप्रसाद द्विवेदी पृष्ठ १४०–४१
२ श्री प्रेम प्रकाश ग्रन्थ पृष्ठ ७

पहला पद पूरक सें मेले दूजा मेलो रेचक सें।
कुम्भक से फिर हृदय अन्तर सारा शब्द चलाओ रे।[१]

कबीर का प्रभाव :–

स्वामीजी ने कबीर की भांति सहज समाधि का उल्लेख किया है। आंख मून्दे बिना, मुद्रा धारे बिना, आसन लगाये बिना खुली आंखों से परमाराध्यका मनोहर रूप देख सकना ही सहज समाधि है। ऐसे साधक का हिलना–डुलना सब–कुछ परिक्रमा है, सोना–बैठना ही दण्डवत् है, बोलना ही नाम–जप है, खाना पीना ही पूजा है। एक बार इस सहज समाधि में जो साधक रम गया वह उस अपूर्व अनहद नाद को निरन्तर सुनता रहेगा, जिसके सुनने मात्र से रोम थकित हो जाते हैं, समस्त इन्द्रिय श्लयबन्ध हो जाते हैं, मन आनंद से परिपूर्ण हो जाता है।[२] सद्‌गुरू स्वामी टेऊंरामजी इस सहज समाधि का वर्णन करते हुए कहते हैं:-

सद्‌गुरु कृपा करके मुझको साची सीख सुनाई रे।
श्वास् श्वास् में सुमरन कर मैं आठ पहर लिंव लाई रे।
आशा तृष्णा ममता त्यागे मन की मैल मिटाई रे॥
गुरु मन्त्र से प्रीति लगाए और बात बिसराई रे।
आतम पद में स्थित होकर सहज समाधि लगाई रे॥
जाग्रत स्वपन सुशुपति छोड़े तुरिया ताड़ी लाई रे।
निर्भय घर में वासा करके यम की चिंत चुकाई रे।
कहता टेऊं हृदय भीतर अनुभव ज्योति जगाई रे।
अन्तर बाहर भया उज्याला अविद्या रही न काई रे।[३]

कला पक्ष :– स्वामी टेऊंराम के काव्य अनुशीलन से ज्ञात होता है कि वे काव्य कला के मर्मज्ञ तो थे, परन्तु कला उनका साध्य नहीं थी। वे तो संत थे, आध्यात्मिक आनंद और ज्ञान उनके साध्य थे। वे कला के प्रति संलग्न

---

१ श्री प्रेम प्रकाश ग्रन्थ पृष्ठ १५
२ कबीर डाः हजापीप्रसाद द्विवेदी ,, ६७
३ श्री प्रेम प्रकाश ग्रन्थ ,, १०

नहीं थे। वे भक्ति भावना में तल्लीन होकर काव्य रचना करते थे। उनके काव्य में कलात्मक विशेषताएं समाहित हैं। शब्दालंकारों एवं अर्थालंकारों का अच्छा प्रयोग हुआ है।

नाद सौंदर्य :– संत स्वामी टेंऊंरामजी एक महान कवि के साथ साथ अच्छे गायक भी थे। उन्होंने भारतीय राग रागनियों के आधार पर भी काव्य रचना की है। भैरव, रामकली, प्रभाती, आसा, विहाग, धनाश्री, कोहयारी, भैरवी, बसन्त, तिलंग, हुसैनी, सोरठ, सारंग, पीलू, पहाड़ी, जोग कल्याण आदि इनकी प्रिय राग रागनियां हैं। इनके काव्य में वर्ण-मैत्री एवं वर्ण–संगति भी समाहित है।

राम नाम का स्मरण करके रिद्ध सिद्ध आनंद पाओ।[१]
जन मन रंजन भव भय भंजन हैं यह बिरद तुम्हारा।[२]
काया माया थिर नहीं ज्यों तरुवर की छाया।[३]
जाप ताप मैं कगहूं न कीया।[४]

उपर्युक्त काव्य पंक्तियों मे लय के साथ साथ वर्ण मैत्री का अच्छा प्रयोग हुआ है। राम नाम, रिद्ध सिद्ध, जन मन, काया माया, जाप ताप, वर्ण मैत्री के उदाहरण हैं।

छेकानुपास। कुमती कन्या का शिर काटे तृष्णा तिय को डारे जो।
भैन भ्रान्ति भेद भ्राता दोनों वेग विडारे जो।[५]
अज अविनाशी आनंद राशी साक्षी सृजणहारा है।[६]

उपर्युक्त काव्य पंक्तियों में कुमति कन्या, तृष्णा तिय, भैन भ्रान्ति भेद

---

१ श्री प्रेम प्रकाश ग्रन्थ पृष्ठ १९९
२ वही ,, १८७
३ वही ,, ३९२
४ वही ,, १२६
५ वही ,, ३१९
६ वही ,, ३२३

भ्राता, वेग विडारे, अज अविनाशी आनंद, साक्षी, सुजणहारा, छेकानुप्रास के उदाहरण हैं।

वृत्यानुप्रास :- चोरासी लख जीव चराचर जिस में तरंग अपारा है।[१]
हट गया काल कराला, जम ज़ंजाला [२]

उपमालंकार :

दूध घृत ज्यों सब के अंतर व्यापक सो अविनाशी है।[३]

जिस प्रकार दूध में घृत व्याप्त है, परन्तु दृश्यमान नहीं, वैसे ब्रह्म सर्वत्र व्यापक है, परन्तु अज्ञान आवरण के कारण भासता नहीं है। यहां ब्रह्म को घृत की उपमा दी गयी है।

तुम बिन स्वामी रह न सकूं मैं, ज्यों मछली बिन वारा जी।[४]

यहां ब्रह्म या गुरु को जलकी और भक्त या सच्चे साधक को मीन की उपमा दी गयी है। जैसे मीन जल के बिना नहीं रह सकती है, वैसे भक्त भगवान के बिना नहीं रह सकता है।

माया बिजली के सम, चंचल तांका पीछा छोड़ो।[५]

यहां माया को विद्युत की उपमा दी गयी है।

साध संगत, सुरतर, सम जग में मन की आस पुजावे।[६]

यहां साध संगत के लिए सुरतरु अर्थात् कल्प वृक्ष की उपमा दी गई है जैसे कल्प वृक्ष जो चाहत सो देत हैं वैसे साधुओं संतों का संग मी मनोर्थ पूरा करता है।

१	श्री प्रेम प्रकाश ग्रन्थ	पृष्ठ ३२३
२	वही	,, १४५
३	वही	,, ११
४	वही	,, १७७
५	वही	,, १८१
६	वही	,, १९६

जो नर काम अधीन हो मिलन चाहत पर नार.
कहे टेऊं सो स्वान ज्यों होत दुखी हरवार।[१]

यहां कामवासना अधीन मनुष्य के लिए कुत्ते की उपमा दी गई है।

मरकट, अग्नी, बादल, छाया, स्वप्न–पदार्थ के सम माया।[२]

यहां माया को वानर, अग्नि, मेघ, छाया और स्वप्न पदार्थ की उपमा दी गई है। कवि ने एक ही काव्य पंक्ति में पांच उपमाएं प्रस्तुत की हैं।

रूपक :– धर्म रूप इक वृछ है दया तांहि जढ़ जान।
कहे टेऊं फल तांहि के यश सुख सम्पति मान।[३]

दया धर्म रूपी वृक्ष की जड़ है। धर्म रूपी वृक्ष यश, आनंद सम्पति सन्मान रूपी फल देता है।

बादल हरिजन ज्ञान गरजना, प्रेम की बिजली आनंद पावना
बरसे शान्ति धारा [४]

हरि भक्तों रूपी बादल ज्ञान रूपी गर्जना करते हुए प्रेम रूपी विद्युत के साथ शान्ति रूपी वर्षा वर्षाते हैं, जिस से साधक को आनंद की उपलब्धि होती है।

आत्म इन्दु को ग्रासता ग्रहण राहु अहंकार [५]

आत्मा रूपी चन्द्रमा को अहंकार रूपी राहु ग्रहण ग्रसता है, इस लिए जीव को आत्म साक्षात्कार नहीं हो सकता। जब अहंकार रूपी राहु हट जायेगा तो आत्मा रूपी इन्दु का दर्शन होगा।

गुर प्रसादे खुलिया अनुभव ताला।[६]

सतगुरू की अनुकम्पा से ही जीव को ज्ञान की कुंजी प्राप्त होती है और अनुभव रूपी ताला खुल जाता है।

१	श्री प्रेम प्रकाश ग्रन्थ	पृष्ठ ३९३
२	वही	,, १८९
३	वही	,, ४०३
४	वही	,, १९९
५	वही	,, ३९२
६	वही	,, १४५

श्री तोलाराम आजिज़

श्री तोलाराम आजिज़ का जन्म सिन्ध प्रदेश के 'नोशहरे फेरोज' नगर में सन् १८८८ ई में मुन्शी मेंघराज बालाणी के घर में हुआ। उनके माता पिता हरि भक्त थे। तोलाराम ६ वर्ष के थे तब उनकी मां का स्वर्गवास हो गया। तोलाराम विद्यार्थी जीवन में ही प्रवीण थे। उन्होंने अंग्रेजी, सिन्धी एवं फारसी का अच्छा अभ्यास किया। विद्यार्थी जीवन में ही वे स्वतंत्रता संग्राम में भाग लेने लगे। अध्यापन कार्य करते हुए वे समाज सेवा एवं साहित्य सृजन करते रहे। उन्होंने विद्यार्थियों में देशभक्ति की भावना जागृत की। राष्ट्रीय चेतना फूंकने के लिये उन्होंने अंग्रेजी सिन्धी में 'सदाइ सिन्ध' एवं 'देश भक्त' पत्रिकाओं का सम्पादन किया।

श्री तोलाराम देश–भक्त के साथ साथ ईश्वर भक्त भी थे। वे १३ जुलाई सन् १९१३ में ब्रह्मलीन हुए। उन्होंने अधिकतर सिन्धी भाषा में काव्य रचना की है, जो 'आजिज जा आलाप' में संग्रहीत है, उनके दो तीन हिन्दी पद भी उपलब्ध हैं जिनका संक्षिप्त विवेचन प्रस्तुत है। उनका उपनाम आजिज था।

अंतःसाधना :– कवि तोलाराम आजिज अन्तः साधना पर वल देते हुए कहते हैं कि ब्रह्म को प्राप्त करने के लिए बाहर भटकने की आवश्यकता नहीं। भीतर जाकर अपने आत्मस्वरूप का साक्षात्कार करो। सब तीर्थ तेरे तन में हैं। तुम्हें हरिद्वार, प्रयाग, काशी, अमरनाथ जाने की ज़रूरत नहीं, वह ब्रह्म तेरे

रोम रोम में विद्यमान है। कवि के मूल शब्दों में :–

आतम तीर्थ भेट प्यारे गया गंगा से होना क्या ?
काया को ही काशी जानो, मन अपने को मंदिर मानो,
सत्पुरख को वहां पछानो धन दौलत को खोना क्या !
हृदा जो हरिद्वार कहावे दर भागे वहां दौड़ न आवे,
हरि सी हरि रंग नहीं पावे, धरती जल से धोना क्या!
अमरनाथ का आसण ताहीं जाने की जहां जगह नाहीं।
रम रहिया हरि रोम के माहीं फ़िरनो फिर फिरना क्या।[१]

गुरू से विनय :– कवि आजिज़ अपने गुरू से विनय करते हैं कि उन्हें प्रभु प्रेम का ऐसा प्याला पिलादे कि उन्हें नाम की खुमारी चढ़ जाये और उनकी इच्छाओं का अंत हो जाय।

प्याला प्रेम का पिला दे इस प्यासी को,
देवे जो मस्ती मदहोशी, उतारे मन मवासी को।[२]

---

१ आजिज़ जा आलाप — पृष्ठ ३९
२ वही — पृष्ठ ३८

स्वामी अटलराम

स्वामी अटलराम का जन्म १८ फरवरी सन् १८८९ ई. में सिन्ध के ऐतिहासिक नगर लाड़काणा के लश्करी गांव से सद्गृहस्थ श्री सधुाराम के घर में हुआ। सिन्ध के प्रसिद्ध संत साईं वसणशाह की कृपा से ही श्री साधुराम को यह पुत्र संतान हुई। श्री अटलराम की माता का नाम निहचल बाई था। संत वसणशाह ने बालक अटल के जन्म के पहले ही उनके पिता से कहा था कि तुम्हें अब जो पूत्र संतान होगी उसे स्वामी धर्मदास की सेवा में अर्पित कर देना। श्री साधुराम संत वसणशाह के आदेश अनुसार बालक अटलराम को स्वामी धर्मदास के यहां ले आये। स्वामी धर्मदास ने बालक को आशीर्वाद करते हुए उनके मां-बाप से कहा कि कुछ वर्षों के लिए आप हीं इस बालक का लालन पालन करे तत्पश्चात् यह अमानत आप यहां दे जायें।

पांच वर्ष की आयु में बालक अटलराम को स्वामी धर्मदास के यहां सुपुर्द किया गया। वहां संत प्रेम प्रकाश ने उस बालक को गुरमुखी एवं हिन्दी में शिक्षा दी। अब अटलराम प्रभु की धुनि भी लगाते थे और संत स्वामी धर्मदास की सेवा में भी संलग्न रहते थे। स्वामी धर्मदास अटलराम को अपने साथ नाम कीर्तन के लिए सिन्ध के भिन्न भिन्न नगरों में ले जाते थे। गुरु की कृपा से अटलराम को नाम का रंग लग गया। वे भगवद्-प्रेम के भजन (पद) गाते थे। स्वामी धर्मदास के ब्रह्मलीन होने के पश्चात् संत अटलराम उनकी धर्मपीठ के अधिकारी हुए। अब वे बहुत समय नाम स्मरण में सफल करते रहे।

सन् १९२१ में जब देश पिता गांधीजी नें हरिजन आंदोलन चलाया तब संत अटलराम ने अपने मंदिर का दरवाजा हरिजन भाइयों के लिए खोल दिया। वे इतने तो उदार–चित्त थे कि त्योहारों पर हरिजन भाइयों को भोजन खाने के लियें अपसे स्थान पर आमंत्रित करते थे। वे उन्हें बड़े प्रेम के साथ खाना खिलाते थे, वस्त्र देते थे और देते थे प्यार। श्री अटलराम राष्ट्रीय वीचार धारा के संत थे। वे स्वयं खादी की पोशाक पहनते थे और प्रेमियों में राष्ट्रीय प्रेम का संचार करते थे। मुन्शी चंदीराम वास्वाणी ने श्री योग वसिष्ठ सिन्धी भाषा में अनुवाद किया, संत अटलराम ने उसका संशोधन कर प्रकाशन किया। स्वामी अटलराम ने 'नारायण दर्शन' पुस्तक भी लिखी। उन्होंने सिन्ध के विभिन्न नगरों में जाकर नाम का संदेश दिया और कई साधकों का पथ–प्रदर्शन किया। देश विभाजन के पश्चात् वे उल्हासनगर में आये, जहां उन्होंने 'धर्म दरबार' आश्रम की स्थापना की। सन् १९५८ ई. में वे ब्रह्मलीन हुए।

काव्य रचना :– संत अटलराम के गुरु स्वामी धर्मदासजी संत के साथ साथ कवि भी थे। उन्होंने सिन्धी एवं हिन्दी भाषा में काव्य रचना की है। गुरु के सान्निध्य एवं सम्पर्क में श्री अटलराम भी पदों की रचना करने लगे। उन्होंने अधिकतर सिन्धी भाषा में काव्य रचना की है, कुछ पद हिन्दी भाषा में भी लिखे हैं।

गुरु महिमा :– स्वामी अटलराम अपने आध्यात्मिक गुरू स्वामी धर्मदास की महिमा गाते हुए अपने माता पिता एवं परमेश्वर को भी गुरु रुप में मानते हुए उनकी स्तुति करते हुए कहते हैं :–

गुरु माता गुरु पिता परमेश्वर गुरु ही प्रान प्यारा देह आधारा,
गुर जैसा कोई और न दाता खोले भक्त भंडारा वहीं वेसारा।[१]

स्वामी अटलरामजी कहते हैं कि सत्गुरु ने ही नाम व रुप का भेद मिटा कर मुझे ब्रह्मज्ञान की दीक्षा दी। मेरे सत्गुरु स्वामी धर्मदास जी ने सूर्य की भांति मेरे मन कां अज्ञान अंधेरा दूर किया, अब मुझे सब जगह प्रकाश स्वरूप ब्रह्म का ही साक्षात्कार होता है। कवि के मूल शब्दों में :–

---

१ दर्दवंद दरवेश वासदेव मूलचन्द शामदासाणी पृष्ठ ७६

नाम रूप दा भेद उठाया, सच है सब संसारा ओअंकारा।
धर्मदास गुर सूरज जैसे, सब घट होइ उजारा दूर अंधारा।[१]

गुरू की अनन्य अनुकम्पा का उल्लेख करते हुए कवि अटलराम जी कहते हैं कि गुरुदेव ने मुझे अद्भुत खेल दिखाया। उन्होंने मेरे मन की खिड़की खोलकर मेरी देह में ही मुझे ब्रह्म का दर्शन कराया। गुरू ने ही मेरे मानसिक विकारों को एवं अज्ञान को मिटा दिया। गुरु ने ही मुझे ज्ञान की लोरी देकर आनंद की शय्या पर सुला दिया। कवि के मूल शब्दों में:—

सत्गुर साहिब अजब अजाइब, जिन अद्भुत खेल दिखाया है।
काया नगर विच गढ़ का राजा, खड़की खोल लखाया है।
माया ममता रोग बुहु झूना, सह अज्ञान मिटाया है।
दास अटल ज्ञान की लोली, शांत की सेज सुलाया है।[२]

कवि अटलराम अपने गुर के लिए कुरबान होना चाहते हैं, जिन्हों ने मन मंदिर में प्रभु का दर्शन कराया, आत्म ज्योति का दर्शन कराकर उन्हें बंधनों से मुक्त किया।

मन मंदिर में प्रेम पलंग पै आसन निज बनाए दरस दिखाए,
दास अटल तिन वारी जाऊं, आत्म ज्योति समाई, बंध छुड़ाए।[३]

कवि अटलरामजी कहते हैं कि गुरू की कृपा से ही सब रोगों से निदान हो सकता है और आनंद की उपलब्धि हो सकती है।

दास अटल गुर की कृपा सीं सगले रोग नसाईए परम आनंद पाइए।[४]

दार्शनिक विचार :— संत अटलरामजी को आत्म अनुभूति हुई, उस आत्म अनुभूति का उल्लेख करते हुए वे कहते हैं :—

---

१ दर्दवंद दरवेश पृष्ठ ७६
२ वही पृष्ठ ८५
३ वही पृष्ठ २६१
४ वही पृष्ठ ४९०

साधु मैं शान्तिनगर बसाया जित दिव्य दर्शन हरि पाया।
माको साजन नाको बैरी सब घट गोबिन्द रामा,
द्वैत भावना सगरी नासी जित किथ ब्रह्म दरसाया।[१]

कवि आत्म–साक्षात्कार करने के पश्चात् सर्वत्र ब्रह्म का दर्शन करते हैं। जब जीव आत्म स्थित होता है तब वह यूनियों के चक्र से विमुक्त होकर परमानंद को प्राप्त करता है। स्वासी अटलरामजी भी ऐसी ही स्थिति का उल्लेख करते हुए कहते हैं:–

सूर न चन्द्र दिवस नहीं रजनी प्रेम प्रकाश बिगसाया,
जन्म मरण की शंका नासी अवनाशी पद पाया।[२]

जीव अज्ञान आवरण के कारण स्वयं को भूल गया है, स्वामी अटलराम ऐसे अज्ञानी जीव को जागृत करते हुए कहते हैं कि हे जीव तू आत्म रूप का चिन्तन करो, तू स्वयं ब्रह्म रूप हो। सब ही संशयों को भूलकर आत्म स्वरूप का ध्यान करो। काया रूपी मन्दिर में तू ही ब्रह्म विराजमान हो। जिस ब्रह्मको तू बाहर खोज रहे हो वह तू स्वयं हो, तू सर्वत्र व्यापक हो। कवि के मूल शब्दों में:–

सदा सचेत रह तुम गृरमुख, निज आतम रूप ध्यावो.
यह संसार सब तेरी लीला सन्से सकल भुलोवो।
देही मंदिर में तू ठाकुर आपन गीत नित गावो।
अंतर बाहर व्यापक तू ही, अटल आनंद समावो।[३]

हे जीव! शांत स्वरूप आत्म तो तुम्हारे अंदर व्यापक है, उसे त्याग कर तू बहिर्मुखी होकर क्यों भटक रहे हो। अपने आतम रूप को पहचानो।

रे मन शांत गहो निज आतम, बाहर डोलन में सुख नाहीं,
शान्त सरूप आनंद को रुप सो आतम देह बसे तो माहीं।

---

१ दर्दवंद दरवेश पृष्ठ ५०४
२ वही पृष्ठ ५०४
३ वही पृष्ठ ७७

तू तज तांह काहे निज भटकत, बिन आतम सुख कबहू न पाहीं [1]

स्वामी अटलराम के अनुसार जीव और ब्रह्म अभेद हैं। जीव स्वयं को देह समझकर दुखी होता है, कवि उसे परामर्श देते हुए कहता है कि स्वयं को देह समझना यह दुखों की जड़ है, इस लिए जीव को देह अध्यास का त्याग करना चाहिये। उसे 'तत् त्वम असि' महावाक्य चरितार्थ करना चाहिए। कवि अटलराम के मूल शब्दों में:-

मत जानो मैं देह, देह मिलन दुख निधि,
तज सूक्ष्म तन हंत पकड़ ज्ञान सुख निधि।
तजो देह अध्यास देह है सब दुख मूला.
तजो जगत् की प्रीति जगत् ज्यों पावक तूला।
जीव अर ब्रह्म अभेद है, भेद उपाधि कल्पत पछानो,
लख अलख अटल दिई गुर 'तत् त्वमसि' महावाक्य बखानो।[2]

स्वामी अटलराम जगत् को असत् मानते हैं, स्वप्नवत मानते हैं। वे कहते हैं:-

सोच विचार करो मन में, जग जूठ लखो सत् आतम जानो।[3]

जगत् जो दीसत है सुपन सम जान सारो।[4]

कवि आत्म को अर्थात् ब्रह्म को ही सत् मानते हैं। 'जगनि-मिथ्या ब्रह्म सत्' प्रतिछाया उपर्युक्त पंक्ति में है। कवि अटलराम ने वेदान्त के अनुरूप ही अपने विचार व्यक्त किये हैं।

१	दर्दवंद दरवेश	पृष्ठ १४१
२	वही	पृष्ठ १४५
३	वही	पृष्ठ १४५
४	वही	पृष्ठ १४५

सेवा :– सेवा के सम्बंध में कवि अपने विचार व्यक्त करते हुए कहते हैं, जो निष्काम भाव से सेवा करता है वह संसार के भव सागर से स्वयं तो पार हो जाता है किन्तु सोए हुए अज्ञानियों को जागृत कर उन्हें भी पार लगाता है।

शेवा प्राप्त तांहि को जांके पूरन भाग।
फिर आप तरे संसार से औरां करे सुजाग।[1]

कवि कहते हैं कि संतों महात्माओं की सेवा करने से काया पवित्र होती है, नाम का ध्यान करने से मन पवित्र होता है। सब ही जीवों की सेवा करने से हाथ पांव पवित्र होते हैं। आत्म–चिन्तन से बुद्धि पवित्र होती है और जीव अपने आत्म रूप में स्थित होता है। जन्म उसका सफल होता है जो गुरु के चरणों में चित्त सर्मपित करता है। कवि के मूल शब्दों में :–

तन पवित्र होवे संत शेवा मन पवित्र नित नाम ध्याइ।
हाथ पांव निर्मल उपकारा, सब जीवों की टहल कमाइ ।
बुद्धि पावन होइ आतम चिन्तन निज सरूप में स्थित पाइ ।
दास अटल जन्म तिस सफला जंहिं चित्त लागियो सत्गुर पांइ।[2]

चेतावनी :– संत कवियों ने मानव के हित के लिये अपने काव्य में कुछ चेतावनियां भी दी हैं। स्वामी अटलराम भी अपने काव्य द्वारा ऐसी चेतावनी देते हुए अज्ञान की नींद में सोये हुए जीव को जाग्रत करते हुए कहते हैं कि जीव तू तो यात्री हो, किन्तु इस बात को भूलकर जगत् के पदार्थों एवं सम्बंधियों में आसक्ति रख बैठे हो। काल रूपी घनघोर घटा तुम्हारे ऊपर गर्ज रही है। मोह लोभ इत्यादि विकारों से तुम्हारा मन प्रसन्न नहीं होगा। कवि के मूल शब्दों में :–

---

१ दर्दवंद दरवेश पृष्ठ ५४
२ वही पृष्ठ ११७

तज निद्रा उठ जाग मुसाफिर काल घटा सिर गाजत हैं,
छिन पल दिन कर समा बनावत तेरे तेरे सृजत हैं।
जल अग्नि युद्ध भूकंप करके, मोत नकारह बाजत हैं।
दास अटल देख लोभ मोह सूं, अझू न एह मन राजत हैं[1]

ध्यान योग :– स्वामी अटलराम अपने एक पद द्वारा ध्यान योग का उल्लेख करते हुए कहते हैं :–

चेत रे चेत ना होइ अचेत कब गगन मंडल में ढोल बाजे,
सुनो सचेत वहां ओम की धुनी होत ध्यान में मग्न होइ नित राजे।
सुरित अर निरत को साधके देख ले निरत में निरंजन छबि छाजे।
दास अटल कहै खोज खोजे लहे गुरु की कृपा अहम् ब्रह्म गाजे।[2]

स्वामी अटलराम के काव्य में कहीं कहीं वर्ण मैत्री, वर्ण संगति, छेकानुप्रास व रोपक अलंकार का समावेश हुआ है। इनके हिन्दी काव्य में सिन्धी व फारसी शब्दों का भी प्रयोग हुआ है।

---

१ दर्दवंद दरवेश पृष्ठ ३२
२ वही पृष्ठ १४४

डॉ. परमानंद बदलाणी

डॉ. परमानंद का जन्म सिन्ध प्रदेश के खंडू गांव में श्री केवलराम बदलाणी के घर में सन् १८८९ ई में कार्तिक पूर्णिमा के दिन हुआ। वे गृहस्थी थे। व्यवसाय करते हुए उन्होंने 'यूनानी तब' का अभ्यास किया। यूनानी हकमत का अभ्यास करते हुए वे डॉक्टर बन गये। उन्हें सात पुत्र (१) डॉ. होतचंद (२) डॉ. चंदनमल (३) डॉ. दयाराम (४) डॉ. किशनचन्द (५) श्री नारायणदास (६) डॉ. शंकरलाल (७) श्री नंदलाल एवं एक पुत्री सती बाई संतान हुई। उनकी पत्नी पारपती बाई का उन्हें पूर्ण सहयोग मिला जिसके कारण वे व्यवहार और परमार्थ में पूरे खरे उतरे।

डॉ. परमानंद ने संत स्वामी टेंऊंराम महाराज से गुर-मंत्र की दीक्षा ली और आध्यात्मिक पथ पर अग्रसर हुए। वे भक्त जन एवं संत सेवी थे, परोपकार के कार्य भी करते रहते थे। देश विभाजन के पश्चात् वे गुजरात में आ बसे। १२ जनवरी सन् १९७७ ई. मे उनका देहांत हुआ। उन्होंने संतों के सम्पर्क में रहते हुए सिन्धी एवं हिन्दी भाषा में कुछ पद एवं दोहे लिखे हैं। प्रस्तुत है उनके हिन्दी काव्य का संक्षिप्त विवेचन :-

गुरू महिमा :- डॉ. परमानंद के मन में गुरू के प्रति अटूट श्रद्धा थी। गुरू की महत्ता प्रतिपादित करते हुए कवि कहते हैं कि गुरू की कृपा द्वारा ही जीव आवागमन से मुक्ति प्राप्त कर सकता है। कवि के मूल शब्दों में:-

परमानंद गुरु–कृपा करे, जन्म-मरण दुःख जांहि।[१]

सारा संसार अज्ञान के कारण माया चक्कर में भटक रहा है। जब जीव को सत्गुरू की प्राप्ति होगी तब उसका अज्ञान अंधकार दूर हो जायेगा।

मोह माया के चक्कर में, घूमत सब संसार,
परमानंद पूर्ण गुरू जब मिले, तब मिटे मनुष्य अंधकार।[२]

माता पिता:- कवि के मन में माता पिता के प्रति जो अनन्य भक्ति भावना है वह उनके निम्न लिखित दोहों से प्रकट होती है। कवि ब्रह्म से भी अधिक महत्त्व माता–पिता को देते हैं। कवि माता-पिता को तीर्थों से अधिक महत्त्वपूर्ण मानते हैं। उनके चरणों में ही स्वर्ग है। कवि के मूल शब्दों में:-

मात पिता सम देव नहीं क्यों न प्रगट भअे भगवान,
परमानंद मोक्ष होवे नहीं वेद पढ़ो न पुरान।[३]

... ...

मात पिता सम तीर्थ नहीं, काशी करो केलाश।
परमानंद संतोष नहीं, गगन मंडल आकाश।[४]

... .

उच्च कर्मकांडी बनो चाहे विद्या पढ़ो विद्वान,
परमानंद मात पिता आसीस बिनु व्यर्थ सब ही जान।[५]

कवि श्री राम श्री कृष्ण श्री विष्णु ब्रह्मा आदि अवतारों एवं देवताओं को ब्रह्म का रूप मानते हैं।

---

१ जीवन चरित्र (पत्रक) डा. परमानंद बदलाणी पृष्ठ १
२ वही पृष्ठ १
३ भजनावली डॉ. परमानंद बदलाणी पृष्ठ ४
४ वही पृष्ठ ४
५ वही पृष्ठ ५

राम कृष्ण विष्णु ब्रह्मा परमानंद देव हैं जितने,
ब्रह्म के रूप हैं सारे, पूरे गुरू लख लखाया।[1]

कवि के मन में प्रभु के दर्शन की तीव्र उत्कंठा थी। वे प्रभू से दर्शन का ही वरदान मांगते हैं। वे प्रभु से प्रार्थना करते हुए कहते हैं:–

मैं तो मांगू प्रभु तुझ से एक ही वरदान, मिले तेरा दर्शन प्रभु गंगा इश्नान,
माया मोह का चक्कर काटे, देना चरणों का निज ध्यान।[2]

श्री लालचन्द पमनाणी

श्री लालचन्द का जन्म सिन्ध के उबावड़े नगर में सन् १८९० ई में श्री थांवरदास पमनाणी के घर में हुआ। फाईनल परीक्षा उत्तीर्ण करने के पश्चात् वे अध्यापक हुए। पिताजी की आज्ञानुसार उन्होंने अध्यापन कार्य छोड़कर व्यवसाय किया। गृहस्थी होते हुए भी वे साधक तुल्य जीवन बिताते थे। उन्हें आध्यात्मिक प्यास थी, उस प्यास को बुझाने के लिए उन्होंने श्री मयाराम से गुरु उपदेश लिया। सत् शास्त्रों का अभ्यास करते हुए और संतों महात्माओं का संग करने से उन्हें आत्माभास हुआ। दूसरों को आतमज्ञान से लाभान्वित करने के लिए वे नियमानुसार सत्संग करने लगे। देश के विभाजन के बाद वे उल्हासनगर मे आ बसे। अब वे अधिक समय भगवद् भजन में व्यतीत करते थे। ८ फरवरी सन् १९७५ में उनका देहावसान हुआ।

काव्य रचना:– भक्ति साधना करते हुए उन्होंने संत काव्य का सृजन किया है। उन्होंने अधिकतर सिन्धी में काव्य रचना की है। कुछ पद एवं

---

१ जीवन चरित्र पत्रक — पृष्ठ ४

२ वही — पृष्ठ ४

श्लोक हिन्दी भाषा में भी लिखे हैं जो 'आत्म दर्शन' पुस्तक में संग्रहीत हैं। आत्मदर्शन का प्रकाशन उनके पुत्र प्राध्यापक श्री प्रियतमदेव पमनाणी ने किया है।

गुरु की महिमा :– गुरू की महिमा गाते हुए कवि श्री लालचन्द कहते हैं कि जिस पर गुरू की दया दृष्टि होती है वही माया से मुक्त होता है। साधक को परामर्श देते हुए कवि कहता है कि संसारिक विचारों व व्यवहार को त्याग कर सत्गुरू का संग करो। सत्गुरु द्वारा ही तुम्हारा परमात्मा से तादात्म्य होगा। कवि के मूल शब्दों में :–

मिल गुरू से मिलावे मालिक, हट जा और खियालूं।
गुरू करे दया जिस पै लालू छुटंदा कुल जंजालू।।[1]

दार्शनिक विचार :– श्री लालचन्द ने अपने काव्य में दार्शनिक विचार भी व्यक्त किये हैं। श्री लालचन्दजी के अनुसार ब्रह्म निराकार है, किन्तु जगत् में वह साकार रूप में व्यवहृत है। जैसे कंचन से बने हुए गहने भिन्न भिन्न नामों से कहे जाते हैं, वैसे जगत् के भिन्न भिन्न रूप भी उस परम सत्ता के द्योतक हैं उनका उपादान कारण एवं निमित कारण वह ब्रह्म ही है।

कंचन मांहि भूषण बने, भिन्न भिन्न नाम बने
भूषण का नाम लेवें कंचन को गंवायो है।
लालू निराकार साकार भयो सर्व सरीरन बास कियो,
ऐसो सत् भुलाइके, नासी देह कहायो है।[2]

जीव अपने आत्म रूप को भूलकर स्वयं को देह समझ बैठा है। यह उसका अज्ञान है। सब जीवों में ब्रह्म विद्यमान है। सब जीव ब्रह्म स्वरूप हैं। कवि जड़ चेतन सब में ब्रह्म का साक्षात्कार करता है। जगत् मे जगदीश विद्यमान है।

---

१ आत्म दर्शन श्री लालचन्द पमनाणी पृष्ठ १२०
२ वही पृष्ठ १२२

जगत् जगदीश का रूप है ऐसे,
बट बीज का मेल है जैसे।
बट बीज का है पूरन विस्तार,
तैसे जगत् है ब्रह्म कां जिन्सार।
जैसे मेंदी के पत्ते पत्ते में लाली,
तैसे सर्व जीवन में ब्रह्म जोति उजाली।
जड़ अथवा चेतन में रहियो है सोई,
लालू उसी सिवा दूजा ना कोई।[1]

कवि लालचन्द अद्वैतवाद से प्रभावित दीख पड़ते हैं। वे ब्रह्म के अतिरिक्त और कुछ नहीं देखते। वे सर्वत्र ब्रह्म का दर्शन करते हैं।

दृश्य द्रष्टा सब वह ब्रह्म ही है।
किथे दृश्य बन रहो स्थिति
किथे द्रष्टा होकर दर्शन कर देहो।[2]

अविद्या–अज्ञान के कारण ही जीव अपने साक्षी–स्वरूप को भूल गया है। जैसे अंधेरे के कारण जेवड़ी को सर्प समझा जाता है, और अज्ञान–वश मरु भूमि की बालू को जल समझ कर मृग भटकता है, जीव भी उसी प्रकार अज्ञान के कारण भटकता है। जब जीव को आत्म ज्ञान की उपलब्धि होगी तब वह जगत् में जगदीश का दर्शन करेगा। कवि के मूल शब्दों में :-

भ्रम के भुलेखे मांहि सर्प कहीं जेवड़ी तांहि,
समझ के दोष कर जल रेत मने हैं।
लालू आतम ज्ञान जिसे सोई ब्रह्म को जग मने हैं।[3]

---

१ आतम दर्शन पृष्ठ ११२–१३
२ वही पृष्ठ १२०
३ वही पृष्ठ ९०

कवि लालचन्दजी के अनुसार ज्ञान की प्राप्ति के पश्चात् ही जीव को मुक्ति मिल सकती है। ज्ञान की प्राप्ति तो गुरू द्वारा ही सम्भव है।

दास तां लालू कहे गुरू की जे शरन गहे,
ज्ञान की रहनी रहे फिर मोक्ष पद मिले हैं।[1]

कवि मनुष्य को परामर्श देते हुए कहते हैं कि मनुष्य–देह को पाकर अगर तू पशुतुल्य कर्म करेगा तो तेरा जीवन व्यर्थ है। सत् कर्म करो। कुकर्म कर तू आनंद की आकांक्षा कैसे करते हो? तू जैसा कर्म करेगा वैसा फल प्राप्त करेगा।

जैसा कोई कर्म करे तैसा ही फल मिले,
जवन के बीज बोए, गेहूं कैसे मिले हैं!
मनुष्य की देह पाइ, कर्म करे पशु वत्!
फिर भी आशा करे, स्वर्ग मुझे मिले हैं।
कैसी यह मूढ़ता, जो मांगे सुख रूप फल,
खेत बोयो दुखों के, सुख कैसे मिले हैं।[2]

---

१ आत्म दर्शन पृष्ठ ७६
२ वही पृष्ठ ७६

स्वामी भक्त प्रकाश

स्वामी भक्त प्रकाश का जन्म सन् १८९५ ई. में सिन्ध प्रदेश के चक नगर के नज़दीक अजमत गांव में श्री अनंदमल चावला के घर में हुआ। उन के जन्म का नाम श्री बागनमल था। प्राथमिक शिक्षा ग्रहण करने के बाद वे व्यवसाय में व्यस्त रहे, कुछ ही वर्षों के बाद जब वे स्वामी टेऊंराम महाराज के सम्पर्क में आये तो उनका मन संसार से ऊब गया। वे गृहस्थ में रहते हुए भी भगवद् भजन करने लगे। सत्गुरू स्वामी टेऊंराम महाराज की उन पर अनुकम्पा हुई, उन्होंने उनका नाम भक्त प्रकाश रखा। देश विभाजन के बाद वे उल्हासनगर में आये। सन् १९७१ ई में वे ब्रह्मलीन हुए।

स्वामी भक्त प्रकाश ने सिन्धी में पद लिखे हैं, हिन्दी में भी उनके थोड़े से पद उपलब्ध हैं। प्रस्तुत हैं उनके हिन्दी पदों का संक्षिप्त विवेचन।

गुरू महिमा :– कवि स्वामी भक्त प्रकाश सत्गुरू को ब्रह्म रूप मानकर उनकी महिमा गाते हुए कहते हैं कि मेरे गुरू अखंड हैं, सर्वव्यापक हैं उन्होंने ही मुझे यम (काल) की फांसी से मुक्त किया।

हैं अखंड अविनाशी घट घट वासी,
गुरू मेरी काट ली यम की फासी।[1]

---

१ भक्त रत्न धर्म दर्शन स्वामी भक्त प्रकाश पृष्ठ १०

गणपति वंदना:– कवि गजानंद स्वामी की स्तुति गाते हुए कहते हैं:–

करूं दंडवत प्रनाम श्री गणपति गजानंद भगवान।
शरन पालक विघ्न नाशक दीन बंधु दयावान।[१]

भगवान शंकर की स्तुति :– स्वामी भक्त प्रकाश भगवान शिव शंकर महादेव की स्तुति गाते हुए उन्हें विनय करते हैं कि वे उनके दर्शन के अभिलाषी हैं :–

जय भोलानाथ भंडारी जय भोलानाथ भंडारी तेरा भरौसा भारी,
शक्ति अपनी भक्ति देवो यह है विनय हमारी।
पतित पावनी झटा तेरी से बहती गंगा प्यारी,
शेष नांग तेरे गले व्राजे नैनों मांहि खुमारी।
गोद तेरे में गोरजा सूंहे बैल ते हसवारी,
गणेश गणपति प्यारा तेरा वो भी विघ्न हारी।
दीन दयालु है तुम दाता, भक्तन हितकारी,
भक्त प्रकाश खड़ा पुकारे देओ दर्शन की दिलदारी।[२]

दर्शन :– स्वामी भक्त प्रकाश ने विशेष रूप से तो दार्शनिक विचार व्यक्त नहीं किये, ब्रह्म सम्बंधी दो ही उनके पद उपलब्ध हैं। वे ब्रह्म को अखंड, अडोल, अमर अविनाशी मानते हैं :

अखंड, अडोल पार ब्रह्म, अजर अमर अविनाशी[३]

ब्रह्म अनंत है, अगाध है अगम्य है। कवि के मूल शब्दों में:–

प्रभु तेरा अंन न कोई आदि अगम अगाध विसमाद ते विसमाद।[३]

---

१ भक्त रत्न धर्म दर्शन	,,	३
२ वही	,,	२४
३ वही	,,	१
४ वही	,,	४

संत स्वामी ग्वालानंद महाराज

स्वामी ग्वालानंद महाराज प्रेम प्रकाश सम्प्रदाय के संस्थापक संत स्वामी टेऊंराम महाराज के अनुज थे। उनका जन्म व्यास पूजा के दिन, आषाढ़ पूर्णिमा प्रातःकाल को विक्रम सं० १९५४ अर्थात् सन् १८९८ ई में हैदराबाद सिन्ध के खंडू गांव में हुआ।[1] उनके पिता श्री चेलाराम आसनदास और मां श्रीमती कृष्णादेवी भक्त जन एवं संत सेवी थे। महाराज तेजूराम ने बालक ग्वालानंद की जन्म कुंडली देखकर कहा कि बालक ग्वालानंद बड़े होकर महान विद्वान. ज्ञानी एवं योगी होंगे। भविष्य में महाराज तेजूराम का कथन सत्य हुआ। श्री चेलाराम के मन में संतों महात्माओं के प्रति प्रेम व श्रद्धा थी, वे कहीं भी किसी साधु महात्मा को देखते थे तो उन्हें अपने घर में ले आकर उनकी सेवा करते थे। माता कृष्णादेवी भी प्रातःकाल को चक्की चलाते समय या दही मंथन करते समय भजन गाती थी। घर में धार्मिक एवं भक्तिमय वातावरण में बालक ग्वालानंद का लालन पालन हुआ। पांच वर्ष की आयु में उन्होंने पढ़ाई प्रारंभ की। जब वे चौथी कक्षा में थे तो उनके भाई भोजराज का देहांत हुआ। घर की प्रतिकूल परिस्थितियों के कारण पढ़ाई छोड़कर वे अब पिताजी के साथ दुकान पर काम करने लगे। थोड़े समय के बाद पिताजी भी ब्रह्मलीन हुए। उस समय बालक ग्वालानंद की आयु १० वर्ष की थी। अग्रज संत स्वामी टेऊंराम महाराज तो भगवद् भजन में तल्लीन रहते, भाई टहलराम खेती बाड़ी एवं दुकान की देख भाल करते थे। अब बालक ग्वालानंद

का मन दुकान में नहीं लगता, उन्हें फिर खेती बाड़ी की देख रेख के लिए भेजा गया किन्तु वहां भी वे भगवद् भजन करने लगे। उनके मन में वैराग्य वृत्ति उत्पन्न हुई।

श्री ग्वालानंदजी १५ वर्ष की आयु के थे, अपने खेतों के नज़दीक एक दुकान में सोए हुए थे, प्रातःकाल का समय था, बाहर से किसी ने आवाज़ दी, "उठो ग्वाल! उठो, जागो बहुत सोए अब जागो" ग्वालानंदजी यह आवाज़ सुनकर शीघ्र ही उठकर दुकान से बाहर आये तो उन्हें कुछ भी दिखाई नहीं पड़ा, फिर वे जाकर सो गये। जैसे ही उन्होंने आंखे मूंदी तो देखा एक वृद्ध साधु उन्हें कहता है, "ग्वाला जागो! ग्वाला रैन गवाई सौय, दिन भी अपना खोय, अब सोने का समय नहीं, स्मरण करो।" दूसरे ही दिन वे अपने गांव में आये और उन्होंने अपने अग्रज भाई संत स्वामी टेऊंराम महाराज से गुर मंत्र की दीक्षा ली। अब वैराग्य वृत्ती बढ़ती गई। वे अब भगवद् प्रेम में लीन होकर भजन गाते थे। उनके कंठ में सरस्वती थी। खेती बाड़ी के काम से और दुकान पर बैठने से उनका मन ऊब गया। एक दिन माता कृष्णादेवी ने कहा, "बेटा आप दोनों भाइयों के मंगनी के लिए एक सज्जन आया है, हम स्वीकृति दे रहे हैं।" श्री ग्वालानंदजी ने उत्तर देते हुए कहा, "माताजी स्त्री काम की अग्नि है, जो मनुष्य का बल बुद्धि ज्ञान का विनाश करती है।

वाम काम की आग है नास करह बल बुद्धि,
ग्वाला क्षण में भुलाय दे गुण ज्ञान की सिन्ध।[1]

जैसे मदारी बंदरों को नचाता है वैसे कामनी पुरुष को नचाती है अर्थात् उनके संग में चित्त भटकता है।

मदारी ज्यों मरकट को भटकावत है नीत,
ग्वाला तैसे तीय संग थिरता गहे न चीत।[2]

ग्वालानंदजी ने कामनी को कुतिया की उपमा देते हुए कहा कि जिस

---

१ भजन मुक्तावली स्वामी ग्वालानंद महाराज पृष्ठ ४०
२ वही पृष्ठ ४०

प्रकार कुतिया प्रसन्न होती है तो अपने मालिक के शरीर को चाटती है, प्यार करती है, और जब वह कुतिया रुष्ट होती है तो अपने मालिक और उसके परिवार को काटती है अर्थात् हानि पहुंचाती है। इस लिए स्त्री का संग दुखदायी है।

ग्वाला तुरिया संग जान तू कूकर की समान,
रीझे चाटे बदन को, रुष्ट करत है हान।[1]

स्वामी ग्वालानंदजी ने कहा 'मां' मैं कदाचित विवाह नहीं करूंगा।

अब ग्वालानंदजी सारा समय अपने अग्रज एवं सत्गुरु स्वामी टेऊंराम महाराज के चरणों में रहते, उनकी सेवा एवं स्मरण में समय का सदुपयोग करते थे।

उनके स्वर में माधुर्य था। जब वे भजन गाते थे तो हजारों प्रेमी मंत्र मुग्ध हो जाते थे। अब वे स्वामी टेऊंराम महाराज जी के साथ सिन्ध के भिन्न भिन्न नगरों एवं गावों में सनातन धर्म, वेदांत और नाम का संदेश देते थे, प्यासियों की प्यास बुझाते थे। उन्होंने योगाभ्यास भी किया। अब वे सिन्ध तक सीमित नहीं रहे, भारत के भिन्न भिन्न नगरों में भी उन्होंने भ्रमण किया। उनका व्यक्तित्व प्रभावशाली था। कई गुजराती लोग उनके प्रेमी बने। उनका प्रवचन प्रभावोत्पादक था। कुछ वर्षों के बाद सत्गुरू स्वामी टेऊंराम महाराज की कृपा से उन्होंने हैदराबाद सिन्ध में आश्रम की स्थापना की जहां उनके संसर्ग में कई जिज्ञासु आकर आध्यात्मिक ज्ञान की उपलब्धि करते थे। कराची में भी उन्होंने आश्रम की स्थापना की। ४५ वर्ष की युवावस्था में उन्हें टी.बी. की बीमारी हुई। सिमला के नजदीक धर्मपुर सैनोटर्यम में स्वामीजी को इलाज के लिए दाखिल किया गया, परन्तु वे फिर स्वस्थ नहीं हुए। संवत १९९९ आश्विन मास की २६ तारीख प्रातःकाल को स्वामी ग्वालानंद महाराज ब्रह्मलीन हुए। स्वामी निर्मलानंद को उनके धर्मपीठ का अधिकारी बनाया गया। उनकी परम्परा के प्रमुख संत हैं, स्वामी निर्मलानंद, स्वामी क्षमानंद, स्वामी ईश्वरानंद

---

१ भजन मुक्तावली पृष्ठ ४०

स्वामी रामकृष्ण महाराज, स्वामी केवलानंद, पंडित शीतलदास एवं स्वामी नारायणदास। आज भी पुणे, अजमेर, हरिद्वार, उल्हासनगर में स्वामी ग्वालानंद महाराज जी के आश्रम स्थापित हैं, जहां कई पिपासु प्यास पूरी करते हैं। स्वामी ग्वालानंद आश्रम पुणे के संस्थापक संत स्वामी रामकृष्ण महान ज्ञानी एवं वेदांताचार्य हैं, उनकी वाणी में भी वर्चस्व है। कुछ ही वर्ष पहले प्रेमियों के अनुरोध पर स्वामी रामकृष्ण जी विदेश गये जहां उन्होंने वेदांत और भारतीय संस्कृति का संदेश दिया। वे आध्यात्मिक मार्गदर्शक एवं समाज सुधारक हैं। पंडित शीतलदास भी श्रीमद् भगवद् गीता के अनन्य उपासक हैं, और वे गीता के अनन्य उपासक हैं।

काव्य रचना :– परम्परा के प्रभाव एवं भगवद् भक्ति की तन्मयता तल्लीनता के कारण स्वामी ग्वालानंद महाराज के मुख से काव्य की मंदाकनी प्रवाहित हुई। उनके अग्रज संत स्वामी टेऊंराम महाराज तत्कालीन समय के एक महान सिन्धी एवं हिन्दी कवि थे जिनका हम उल्लेख पूर्व कर आये हैं। स्वामी ग्वालानंद महाराज अधिकांश समय स्वामी टेऊंराम महाराज के सम्पर्क एवं सेवा में रहे। उनके सान्निध्य में रहने के कारण एवं घर के भक्तिमय वातावरण के कारण उनके मन में प्रभु के प्रति अगाध श्रद्धा विश्वास उत्पन्न हुआ। उन्हें अपने सत्गुरु स्वामी टेऊंराम महाराज के प्रति भी अटूट श्रद्धा एवं निष्ठा थी। उन्होंने भारतीय राग रागनियों एवं छंद शास्त्र के आधार काव्य रचना की है। 'आतम प्रकाश', 'ग्वाल श्लोकावली' 'ग्वाल भजन मुक्तावली', 'ग्वाल अमृत सागर', 'ग्वाल छपयावली', 'पंच अमृत निधि' काव्य कृतियां प्रकाशित हुई हैं। तत्पश्चात् उनकी सारी वाणी का संकलन 'श्री ग्वालानंद ग्रन्थ' प्रकाशित हुआ।

गुरू महिमा :– स्वामी ग्वालानंद महाराज अपने गुरुदेव सत्गुरु स्वामी टेऊंराम महाराज के कृतज्ञ हैं जिन्होंने उन्हें आध्यात्मिक पथ प्रशस्त कर संशय भ्रमों का नास किया। वे गुरू की महिमा गाते हुए कहते हैं :–

> टेऊंराम गुर पूर्ण पाया जन्म मरण का सन्शय जाया।
> सब में देखा सम कर स्वामी।[1]

---

१ भजन मुक्तावली पृष्ठ ३

कवि गुरू का बड़ा उपकार मानते हुए कहते हैं कि वे मूढ थे, अज्ञानी थे, गुरू ने ही उन्हें अमूल्य अकथनीय नाम पदार्थ प्रदान किया जिसके कारण उन्हें आत्मानंद की उपलब्धि हुई, जिसकी तुलना इन्द्रपुरी के आनंद से भी नही कर सकते। बिना सेवा ही गुरू ने उन पर दया दृष्टि की, इस लिए वे स्वयं को भाग्यवान मानते हैं। गुरू ने उन्हें ब्रह्मज्ञान देकर तीनों तापों को मिटा दिया। कवि के मूल शब्दों में :-

मैं था मूढ अजान, जो दीना, अकथ पदार्थ मोहि गुर दीना,
कीती न करनी नहीं कुछ सेवा।
इन्द्रपुरी ऐसा सुख नाहीं, जैसो दिया गुर हृदे मांही
अखंड आनंद पाय सुअखेवा।
टेऊंराम मिला गुर ज्ञानी, त्रिविध ताप की कीनी हानी,
देके ब्रह्म ज्ञान निज मेवा
कहे ग्वाल गुर कृपा कीती हारी बाजी जग से जीती
अक्ष आतम पद दे निज भेवा।[1]

दार्शनिक विचार :- स्वामी ग्वालानंद महाराज के काव्य में दर्शन सम्बंधी विचार भी व्यक्त हुए हैं। उनके दार्शनिक विचार वेदान्त के अनरूप हैं।

ब्रह्म :- स्वामी ग्वालानंद के अनुसार ब्रह्म अखंड है, अगम्य एवं अविनाशी है। वह ही जगत् का पति है, परिपूर्ण आनंद रूप है। उसकी लीला अकथनीय है। कवि के मूल शब्दों में :-

जगत् पती पूर्ण परमेश्वर अखंड अगम तू अविनाशी।
तेरी लीला लखी न जाई, तू पूर्ण सब सुख राशी।[2]

निर्गुण ब्रह्म सगुण रुप धारण कर चौबीस कारक अवतार लेकर प्रघट हुआ और वह गुरु रुप में नित अवतार हैं।

---

१ भजन मुक्तावली पृष्ठ ३
२ वही पृष्ठ १

सगुण रूप चौबीस करे नित रूप तेरी गुर निरवासी।[1]

ब्रह्म साक्षी है, चेतन है, वह ही जगत् का उपादान और निमत कारण है। जड़ चेतन सब में वह ब्रह्म ही व्यापक है। सब में उसका ही प्रकाश है। कवि के मूल शब्दों में :–

साक्षी चेतन ब्रह्म अपारा जांसे रचिया जग विस्तारा।
वोही चेतन सर्व प्रकाशा, जड़ चेतन में तांहि निवासा।[2]

जीव :– जीव अज्ञान आवरण के कारण अपने साक्षी स्वरूप को भूल गया है। स्वामी ग्वालानंद जी ऐसे जीव को जाग्रत करते हुए कहते हैं कि मोह ममत्व इत्यादि विकारों का त्याग कर ब्रह्म का ध्यान करो। तू स्वयं आनंद स्वरूप हो। कवि के मूल शब्दों में :–

मोह ममत्व नर त्याग के धर ले हरि का ध्यान।
ग्वाला सुख स्वरूप तज क्यों बांधे अज्ञान।[3]

हे जीव! तू तो सत् चित् आनंद रूप हो, क्यों संशय रूपी कूप में गिर रहे हो। अपने साक्षी स्वरूप का साक्षात्कार करो।

सच्चदानन्द रूप तू कांहि गिरो भ्रम कूप।
ग्वाला साक्षी चेतन धन, तू ही सुख स्वरूप।[4]

उपर्युक्त दोहे में वेदांत महाकाव्य 'तत् त्वमसि' की प्रतिध्वनि प्रतिभासित होती है।

सो तू सुख रुपा ब्रह्म स्वरूपा अखंड अरूपा है भूपा।[5]

---

१ भजन मुक्तावली — पृष्ठ २
२ सुख सज्जनी — पृष्ठ ७
३ श्री ग्वालानंद ग्रन्थ — पृष्ठ २५
४ वही — पृष्ठ २७
५ वही — पृष्ठ २८

हे जीव! तू ब्रह्म रूप हो, सुख रूप हो स्वयं को पहचानो।

कवि वेदांत वाक्य 'अहं ब्रह्म अस्मि' का निरूपण करते हुए कहते हैं :–

सर्व स्वामी अन्तरयामी, सो अनामी अनन्त मैं हूं।
सदा मुदामी रह अगामी सो अकामी अचिन्त मैं हूं।
निर्विकारा निर्मल नियारा, सर्व आधारा हूं सदा।
जग विस्तारा रच पसारा, सो उजारा अगन्त मैं हूं।[1]

जगत् :– स्वामी ग्वालानंद जगत् को स्वप्न सम मिथ्या मानते हुए कहते हैं :–

स्वपने ज्यों है दुन्या सारी, पाये ज्ञान तू कर हुश्यारी।[2]

कवि जगत् के लिए मृग जल की उपमा देते हुए कहते हैं जैसे मृग जल मिथ्या भूत है किन्तु मृग उसे सत्य समझता है, वैसे जगत् भी जीव को सत् भासता है परन्तु असत् है।

मिसल मृग जल विषय भोगा, तिस जाने सच मूर्ख लोगा।[3]

ज नाम है जनम का गत नाम हैं नाश,
जन्म मरण हो जिस विक्षे जगत् कहिये तास।

राम नाम की महिमा :– स्वामी ग्वालानंद महाराज राम नाम की महिमा गाते हुए कहते हैं कि कितने भी भौतिक पदार्थ हो, पारस मणि हो, कामधेनु का कल्पतरू हो किन्तु ये सब राम नाम रूपी पदार्थ के तुल्य नहीं। राम नाम सर्वोपरि है।

विविध पारस स्वर्ण गिरि, कामधेनु कल्पतरु।
चिन्तामणि माणिक मुक्ता, हीरा गिरि निधि जितरू

---

१ भजन मुक्तावली — पृष्ठ २९–३०
२ वही — पृष्ठ २७
३ वही — पृष्ठ २९

नहीं तुल्य वे राम नाम, जो दीया है गुर दान।
ग्वाला भई उर, लाज हम जो सभ न किया सन्मान।[1]

राम नाम सुख की खानी है। हे जीव! यदि तुम आनंद को चाहते हो तो राम नाम का स्मरण लरो।

जप मन राम नाम सुख खानी।[2]

मनुष्य देह :– मनुष्य देह की महिमा प्रतिपादित करते हुए कवि कहते हैं कि यह योनि अमूल्य योनि है, उसे क्यों कीचड़ में गंवा रहे हो। इस योनि में ही मोक्ष की प्राप्ति संभव है।

मानुष तन अमूल्य को न माटी में डार।
मोक्ष पाने का समय, ये सर्व दुख निवार।[3]

संतों की महिमा :– स्वामी ग्वालानंदजी संतों की महिमा गाते हुए कहते हैं, संत जन प्रशंसा एवं निंदा का त्याग कर संसार में रहते हैं, वे सदैव आनंद प्रदान करने वाले होते है। वे दुख सुख में समान भाव में रहते हैं-

स्तुति निन्दा त्याग के जग में विचरहिं नित।
ग्वाला ज्ञानी सन्त गण नित सुखकारी मित।
सदा संतुष्ट संत जन, रहते काट कलेश,
ग्वाला इष्ट अनिष्ट में करहिं न राग न द्वेष।[4]

संत जन परोपकार की प्रति मूर्ति होते हैं और अमृत तुल्य वचन बोलते हैं। वे साधकों को ब्रह्मज्ञान की दीक्षा देकर उनका अनुभव रूपी ताला खोल देते हैं।

---

१ श्री ग्वालानंद ग्रन्थ — पृष्ठ ३१
२ भजन मुक्तावली — पृष्ठ २६
३ वही — पृष्ठ २०
४ श्री ग्वालानंद ग्रन्थ — पृष्ठ २३

पर उपकारी संत जन बोलत अमृत बोल।
ग्वाला सुनाय ब्रह्म ज्ञान अनुभव ताला खोल।[1]

संत प्रकाश रूप हैं जो अज्ञान रुपी अंधेरा दूर कर जगत् का कल्याण करते हैं। वे विकारों का विनाश कर भवसागर में डूबने वाले मनुष्यों को नाम की नैया द्वारा पार लगाते हैं।

पुनः संत प्यारा रहत उजारा जगत् उद्धार कर सारा।
जो डूबे संसार तां कर पारा हनजु विकारा जग तारा।[2]

कला पक्ष :– स्वामी ग्वालानंद महाराज के काव्य में छेकानुप्रास का तो यत्र तत्र प्रयोग हुआ है। वर्ण मैत्री, वर्ण संगति, उपमा, रुपक एवं उदाहरण अलंकार का भी अच्छा समावेश हुआ है।

वर्ण मैत्री :- जप तप ज्ञान ध्यान धरे बहु व्रत कर्म धर्म करे।[3]
तन मन शीतल स्वच्छ करे नित भव दुख देत निबारे है।[4]
यह झूठा काया माया किसे न संग जाया।[5]

उपर्युक्त काव्य पंक्तियों में जप तप, ज्ञान ध्यान, कर्म धर्म, तन मन, काया माया, वर्ण मैत्री के उदाहरण हैं।

वर्ण संगति :– नीच नीच जप ऊच्च भए सो यम की चोट
छूट गए सो।[6]

तीर्थ धाम दह दिसहीं धावे, फिरत फिरत फिरत।[7]

---

१ श्री ग्वालानंद ग्रन्थ — पृष्ठ २४
२ वही — पृष्ठ २४
३ भजन मुक्तावली — पृष्ठ १०
४ वही — पृष्ठ ५९
५ वही — पृष्ठ १७
६ सुख सज्जनी — पृष्ठ ६
७ भजन मुक्तावली — पृष्ठ १८

जय जय जय है उद्यम वालों की यह वेदों का व्याख्यान है।[1]

यहां नीच नीच, फिरत फिरत फिरत, जय जय जय वर्ण संगति के उदाहरण हैं।

उपमालंकार:– वृन्दावन में कृष्ण मुरारी, होली खेल रहा गिरधारी।
राधका जिसको अधिक प्यारी,
सब सखियों में इन्दु ज्यों उज्यारी
और सखी सम तारे उजाला,
रिल मिल रास करहं नंदलाला।[2]

श्री कृष्ण, राधा एवं सखियों की रास लीला का चित्र प्रस्तुत करते हुए कवि ने राधा के लिए चन्द्र की और अन्य गोपियों के लिए नक्षत्रों की उपमा दी हैं।

प्यासा अहि सन्दल बहु पुन हिम की अति चकोर।
पतंग को दीपक की है जैसे घन की मोर।
अलि को जैसे पुष्पा, कामी को ज्यों है वाम।
संसारी को सुत की कंगाल को है ज्यों दाम।
मीन ज्यों कुरंग वाद पुन चात्रक बूंद प्यासा।
ऐसी ग्वाला गुरू प्यास, है वही सच्ची जिज्ञासा[3]

जैसे चकोर चांद के लिए, पतंग दीपक के लिए, भंवरा पुष्पों के लिए, कामी मनुष्य स्त्री के लिए, संसारी लोग पुत्र संतान के लिए, गरीब पैसे के लिए, मछली जल के लिए, कुरंग नाद के आवाज के लिए, चात्रक बूंद के लिए प्यासी होता है वैंसे स्वामी ग्वालानंद जी अपने गुरू के लिए प्यासे हैं, उनका इतना लगाव गुरू के साथ है। कवि के अनुसार यही प्यास सच्ची प्यास है।

---

१ भजन मुक्तावली — पृष्ठ १२
२ वही — ,, ७७
३ श्री ग्वालानंद ग्रन्थ — ,, ३६

ज्यों मराल दूध जल से करहैं दूध अहार है।
त्यों नर आतम दूध ग्रहे, त्यागे जल संसार।[1]

जैसे हंस दूध को ग्रहण कर जल को छोड़ देता है, वैसे मनुष्य को भी आत्मा से तादात्मय कर जगत् रूपी जल का परित्याग करना चाहिए।

रूपक अलंकार:– मल विक्षेप आवरण तुम दूर कर
सत्संग त्रवेणी नित निहाय तू।[2]

सत्संग रूपी नदी में नहाकर, मल विक्षेप आवरण का निवारण करो।

संसार नदी के दो तट है, इक मोक्ष का इक बंधन है।
इस तट पै भक्ति मुक्ति का बागीचा सुख सदन है।
उस तट पै विषयों भोगों का जंगल दुख जी कन्दन है।
इस तट पै फल ज्ञान वैराग्य, सत् कर्मादि कंचन है।[3]

जगत् रूपी नदी के दो किनारे हैं एक मोक्ष रूपी किनारा दूसरा बंधन रूपी किनारा है। मोक्ष के तट पर भक्ति मुक्ति रूपी बाग बगीचे हैं आनंद रूपी सदन है और बंधन रूपी किनारे पर विषयों भोगों रुपी जंगल व कष्टों का कंदन है। मोक्ष–तट पर ज्ञान, वैराग्य इत्यादि सत् कर्मों रूपी फल हैं। एक ही पद में कवि ने कई रूपकों का समावेश किया है।

उदाहरण अलंकार:– पवन भक्ति कर पतंजली ने की फुरणोंकी हानी रे।
पिंड मे ब्रह्मंड को ही देख, भया ब्रह्मज्ञानी रे।[4]

यहां कवि ने ऋषि पातंजलि का उदाहरण प्रस्तुत किया है कि किस प्रकार ऋषि पातंजलि ने चित्त वृत्ति का विरोध कर ब्रह्म का साक्षात्कार किया।

---

१ भजन मुक्तावली पृष्ठ ३५
२ वही ,, ६७
३ वही ,, ६०
४ वही ,, १०३

पावन भक्ति कर उडन शक्ति को, पाया चूड़ाला रानी रे।
पति को ज्ञान दिया इक क्षण में, सुनाय अभेद जुबानी रे।[1]

कवि यहां रानी चूड़ाला का उदाहरण प्रस्तुत करते हुए बताते हैं कि योग साधना द्वारा राणी चूड़ाला ने ब्रह्म ज्ञान एवं आध्यात्मिक शक्ति को प्राप्त कर अपने पति को भी आत्म ज्ञान दिया।

भाषा :– स्वामी ग्वालानंद के हिन्दी काव्य में कहीं कहीं अरबी, फारसी व सिन्धी शब्दों का भी समावेश हुआ है। तत्सम शब्दों का बाहुल्य है। इनकी भाषा संतों की तरह सघुक्कड़ी भाषा है। कवि ने समासों का भी प्रयोग किया हैं। कुछ उदाहरण प्रस्तुत हैं :–

तत्सम :- अखंड, अगम, अविनाशी, योगी, ज्ञान, क्षुधा, करूणा, जीवन–मुक्त, दास, साक्षी, श्रद्धा, निर्गुण, निर्मल इत्यादि।

तद्भव :– निमाणो, आवागवन, जग, पेखी, निर्बानी इत्यादि।

अरबी व फारसी :– ग़फ़लत, गैर, दस्त, इसबाती, गाजी ऐश अशरत, आबशार, आबदार, पैगंबर इत्यादि।

सिन्धी शब्द :– मंझारा, मुदामी, सिक, डुहागिन, वणिज, ठार, छो, इत्यादि।

समास :– कमलापति, पद पंकज, जग जननी, पद पदम, भूपाल।

---

१ भजन मुक्तावली पृष्ठ १०३

संत स्वामी सर्वानन्द महाराज

संत स्वामी सर्वानन्द महाराज का जन्म सन् १८९८ ई. में हैदराबाद सिन्ध के भिटशाह गांव में भक्त शेवकराम विशनदास धनजाणी के घर में हुआ। उनकी माता का नाम ईश्वरीबाई था। श्री शेवकराम एवं ईश्वरीबाई संत सेवी एवं ईश्वर भक्त थे। घर के भक्तिमय वातावरण में बालक सर्वानन्द जी का लालन पालन हुआ। सिन्ध के महान संत स्वामी टेऊंराम महाराज उन के मामा थे। बालक सर्वानन्द का भाग्योदय हुआ कि बचपन में ही उन्हें स्वामी टेऊंराम महाराज का संग प्राप्त हुआ। उनके संग-संसर्ग में श्री सर्वानन्द का मन संमार से उब गया और मन की वृत्ति भगवद् भक्ति में लग गई। वे स्वामी टेऊंराम महाराज की सेवा में लगे रहते थे। उन्होंने स्वामी टेऊंराम महाराज से गुर मंत्र की दीक्षा ली।

स्वामी सर्वानन्द महाराज कई बार हरिद्वार गये, वे वहां अधिक समय ऋषिकेष में व्यतीत करते थे। ऋषिकेष उनका प्रिय स्थल था। वे वहां एकांत में भगवद् भजन करते थे, कई दिन मौन भी धारण करते थे, वे भाव विभोर होकर भजन भी गाते थे।

वे अपने सतगुरू स्वामी टेऊंराम महाराज के साथ सिन्ध के विभिन्न नगरों में नाम कीर्तन करते रहे। स्वामी टेऊंराम महाराज के ब्रह्मलीन होने के पश्चात् वे ही उनके धर्मपीठ के उत्तराधिकारी हुए। अपने गुरू की भांति

उन्होंने भी अपनी वाणी एवं प्रवचनों द्वारा हजारों जिज्ञासुओं का मार्गदर्शन भी किया।

देश विभाजन के पश्चात् स्वामी सर्वानन्दजी महाराज ने जयपुर (राजस्थान) में स्वामी टेऊंराम प्रेम प्रकाश आश्रम अमरापुर दरबार की स्थापना की। भारत के विभिन्न नगरों में जाकर ज्ञान की ज्योति जगाई। उन्होंने सनातन धर्म, वेदांत एवं सामाजिक कुप्रथाओं के विरुद्ध व्याख्यान दिये। उनकी प्रेरणा से भारत के विभिन्न नगरों, बम्बई, पुणे, उल्हासनगर, अहमदाबाद, लखनऊ, कानपुर, दिल्ली, आगरा, अजमेर, हरिद्वार, इन्दौर नगरों में प्रेम प्रकाश आश्रम की स्थापना हुई। ये आश्रम भक्ति, ज्ञान एवं सेवा के केंद्र हैं।

स्वामीजी के प्रेमी न केवल भारत के भिन्न भिन्न नगरों में हैं किन्तु विदेश कें विभिन्न नगरों में भी हैं। प्रेमियों के अनुरोध पर स्वामी सर्वानन्द महाराज जी थाइलंड, मनीला, हांगकांग, बैंकांग, सींगापुर इत्यादि देशों में गये जहां उन्होंने वेदांत भक्ति एवं भारतीय संस्कृति सम्बंधी व्याख्यान दिये और प्रेमियों की प्यास पूरी की।

स्वामी सर्वानन्द महाराज आध्यात्मिक मार्गदर्शक थे, महान संत एवं दार्शनिक थे। उनका दर्शन करने से ही अनुपम शांति की प्राप्ति होती थी। २१ जुलाई सन् १९७७ ई. में स्वामीजी ब्रह्मलीन हुए। उनकी इच्छानुसार उन्हें हरिद्वार में गंगा नदी में जल समाधि दी गयी। उनका गंगा मैंया के साथ लगाव था। वे अपने एक पद में कहते हैं:

गुन गोबिन्द का गाऊँगा मैं तो गंगा के किनारे।
जान जगत् की झूठी यारी, तप करने की करी त्यारी,
देखूंगा गिरिधारी मैं तो गंगा किनारे।

स्वामीजी ने अन्तिम यात्रा में भी अपनी उपर्युक्त काव्य पंक्ति को सार्थक किया। न केवल सिन्धी परन्तु कई पंजाबी भाई बहने भी स्वामी सर्वानन्द महाराज के परम श्रद्धालु भक्त हैं।

काव्य रचना :– स्वामी सर्वानन्द महाराज ने परम्परा से प्रभावित होकर काव्य रचना की है। स्वामी सर्वानन्दजी के गुरू स्वामी टेऊंराम महाराज सिन्ध के महान संत कवि थे, उनके सम्पर्क में रहने के कारण स्वामी सर्वानन्द ने भक्ति साधना के साथ साथ काव्य साधना भी की। उन्होंने स्वरचित काव्य में अधिकतर अपने सतगुरू स्वामी टेऊंराम महाराज का नाम प्रयोग किया हैं, कहीं कहीं अपना नाम भी प्रयोग किया है। उन्होंने सिन्धी एवं हिन्दी में काव्य सृजन किया है। उनके तीन हिन्दी खंड काव्य प्रकाशित हुए हैं, जिन में उन्होंने सतगुरू स्वामी टेऊंराम महाराज का नाम प्रयोग किया है और उनके कुछ अप्रकाशित पद भी उपलब्ध हैं। उनके निम्नलिखित तीन खंड काव्य हैं:–

१– कथा राजा शिखरध्वज और चूड़ाला रानी की :– श्री योगवशिष्ठ के छठे निर्वाण प्रकरण से राजा शिखर ध्वज और चूड़ाला की कहानी ली गई है। स्वामीजी ने सर्वसाधारण लोगों के कल्याण के लिए इस उपाख्यान को सरल एवं मधुर हिन्ही में कविताबद्ध किया। उन्होंने बरेली के कवि राधेश्याम की राधेश्याम तरज पर उपर्युक्त काव्य रचना की है। इस कथा का सारांश यह है कि सांसारिक पदार्थों में शान्ति नहीं। राजा शिखरध्वज के पास कितने पदार्थ एवं वैभव था, किन्तु फिर भी उन्हें आध्यात्मिक आनंद की प्राप्ति नहीं हुई। जब वे सांसारिक पदार्थों का परित्याग कर वन में जाकर ज्ञान की प्राप्ति करते हैं तब उन्हें शान्ति की प्राप्ति होती है। इस खंड काव्य में कवि ने, योग वैराग्य, ब्रह्मज्ञान इत्यादि विषयों पर विद्वतापूर्ण विचार व्यक्त किये हैं।

२– वामन–बलि :– इस खंड काव्य की कथा श्रीमद् भागवद् के आठवें स्कंध से ली गई है। यह कथा भी राधेश्याम की तरज पर लिखी गयी है। इस खंड काव्य में दान और सेवा का विशेष वर्णन किया गया है। स्वामी सर्वानन्दजी महाराज के कथनानुसार वामन–बलि सम्वाद कृपणों के मन में उदारता का संचार करेगा। उनके मूल शब्दों में :–

शूम कृपण कंजूस पुनि मखीचूस ये चार।
वामन बलि सम्वाद से होंगे परम उदार।

३– यमराज और नचिकेता :– इस खंड काव्य की मूल कथा कठोपनिषद् से ली गयी है। यह कथा भी राधेश्याम लावणी में लिखी गयी है। आत्म साक्षात्कार करने के लिए यह खंड काव्य ज्ञान दीपका है।

स्वामी सर्वानन्द महाराज ने भारतीय राग रागनियों के आधार पर भी कुछ हिन्दी पद लिखे हैं।

गुरु महिमा :– स्वामी सर्वानन्द महाराज गुरु की महिमा गाते हुए कहते हैं कि सतगुरु के चरण कमल की सेवा एवं ध्यान द्वारा ही उन्होंने आत्म तत्त्व का ज्ञान प्राप्त किया। कवि के मूल शब्दों में :–

सतगुर के पद–पद्म का लेकर मैं आधार।
कह टेऊं संसार में शोध लिया निज सार।[1]

कवि गुरू का उपकार मानते हुए उन पर बलिहार जाते हैं, क्यों कि गुरु ने ही उन्हें अज्ञान की नींद से जगाकर, आध्यात्मिक ज्ञान देकर आवागमन से मुक्त किया।

सतगुर पै मैं बलि बलिहारी, जिसने मुझ पर कृपा धारी।
हम सोये को आन जगा के, भगवत के सत्मार्ग लाके,
पहुंचाया उस धाम जहां नहिं यम की रारी।[2]

दार्शनिक विचार :– स्वामी सर्वानन्द महाराज ने दार्शनिक विचार भी व्यक्त किये हैं। वे ब्रह्म सम्बंधी विचार प्रस्तुत करते हुए कहते हैं कि ब्रह्म अखंड है, अविनाशी अविचल है, स्वयं प्रकाशी एवं सर्वव्यापक है। वह सत्चित् आनंद रूप है। कवि के मूल शब्दों में :-

---

१ कथा राजा शिखरध्वज– चूड़ाला रानी की स्वामी सर्वानन्द महाराज पृष्ठ १
२ अप्रकाशित पद स्वामी सर्वानंद महाराज

आतम अखंड स्वयं प्रकाशी घट घट तां उज्यारा है।
अजर अमर अविचल अविनाशी साक्षी सृजणहारा है।
सत् चित् आनंद ब्रह्म व्यापक नाम रूप आधारा है,
मन बुद्धि बानी इन्द्रिय अगोचर तीन गुणों से न्यारा है।[1]

जीव अज्ञान के कारण अपने साक्षी स्वरूप को भूल गया है। स्वामीजी जीव को जाग्रत करते हुए कहते हैं कि तू साक्षी चेतन ब्रह्म स्वरूप हो, इस लिए साक्षी का स्मरण एवं चिंतन करो।

साक्षी का नित स्मरण करिये जो निज रूप तुम्हारा है।
साक्षी चेतन ब्रह्म स्वरूप सत् चित् आनन्द अनुभव रुपा
चारों वेद पुकारा है।[2]

स्वामी सर्वानन्दजी जगत् को मिथ्या मानते हुए कहते हैं कि यह जगत् हिम कोट की भांति क्षणभंगुर है कवि जीव से कहते हैं कि तू स्वयं आतम देव हो इस बात पर निश्चय कर सोऽहं का जाप जपो।

अक्रिय आतम देव जो, सर्व रूप हैं आप।
ऐसा निश्चा धारि के, जप ले सोऽहं जाप।[3]

यह जगत् कल्पित है, जैसे अंधकार के कारण मनुष्य रज्जू को सर्प समझता है, वैसे अज्ञान के कारण जीव मिथ्या जगत् को सत्य मानता है, कवि के मूल शब्दों में :-

यही जगत् है कल्पित सारा, सर्प रज्जू जिम भासत है
ज्यों नर सोया सपना देखे, सीप रजत प्रकाशत है।[4]

---

१ कथा राजा शिखरध्वज चूड़ाला रानी — पृष्ठ ८
२ अप्रकाशित पद — स्वामी सर्वानन्द महाराज
३ वही — पृष्ठ ८
४ वही — पृष्ठ १५

यह शीत कोट संसारा है, पुनि मिथ्या कुल परिवारा है।[1]

लोग माया के विभिन्न रूपों एवं पदार्थों में आसक्ति रख कर अमूल्य जीवन व्यर्थ गंवाते हैं। माया या माया के पदार्थ वृक्ष की छाया की भांति अस्थिर हैं।

यह माया तरुवर छाया है, सुख इस में किस ना पाया है।[2]

ब्रह्म विद्या के अध्ययन से मनुष्य को ब्रह्म ज्ञान की उपलब्धि होती है और वह जीवन मुक्त हो जाता है। कवि के मूल शब्दों में :–

ब्रह्म विद्या के पढ़ने से ही, उपजत आतम ज्ञाना है।
ब्रह्म ज्ञान से नाशे सब दुख, मिटता तन अभिमाना है।[3]

•• •••

आतम ज्ञान प्रकाश ते, सब घट देखिया आप।
दुःख द्वन्द सबहीं गए नष्ट भए तृताप।[4]

कला पक्ष :- स्वामी सर्वानन्द जी की वाणी में माधुर्य है, संगीतात्मकता है। उनकी काव्य साधना तो उनकी भक्ति साधना की उपज है। वर्ण संगति एवं वर्ण मैत्री, छेकानुप्रास एवं वृत्यानुप्रास, उपमा एवं रूपक अलंकारों का अच्छा प्रयोग हुआ है। प्रस्तुत हैं कुछ उदाहरण :-

वर्ण मैत्री:– दोनों रिलि मिलि सुख से रहते चित्त की चिन्ता भाग रही[5]
तन मन धन से सेवा करके, मन इच्छत
फल लेवत है।[6]

१	कथा राजा शिखरध्वज चूड़ाला रानी	पृष्ठ ६
२	वही	पृष्ठ ६
३	वही	पृष्ठ ७
४	वही	पृष्ठ ११
५	वही	पृष्ठ ५
६	वही	पृष्ठ २६

वर्ण संगति :– चलते चलते उसी महल में राजन आ प्रवेश किया।[1]
भांति भांति के भोग पदार्थ महा सुन्दर अति देख लिया।[2]

छेकानुप्रास :– अगर अजूनी आत्मा, बेध सकेना बान।[3]
भंवरा भंवरी, भरम रहे जां फूलों की फुलवाड़ी थी।[4]

उपमालंकार :– जैसे कुम्भ के छिद्र से सने सने जल जात।
तैसे यौवन के दिवस, तांके भए निपात।[5]

यह दामनि समवय चंचल है, नहिं स्थिर रहती इक पल है।
यह माया तरुवर छाया है, सुख इस से किसे न पाया है।[6]

१	कथा राजा शिखरध्वज चूड़ाला रानी	पृष्ठ ३
२	वही	,, ३
३	वही	,, ९
४	वही	,, ३
५	वही	,, ६
६	वही	,, ६

योगीराज स्वामी - परमानंद

स्वामी परमानंद का जन्म सिन्ध प्रदेश के शिकारपुर नगर में मकर संक्रांति के दिन १४ जनवरी सन् १८९८ ई. में श्री चोकसराम चुघ आसरानी के घर में हुआ। बालक परमानंद को प्राथमिक सिन्धी शाला में प्रविष्ठ किया गया। जब वे बाल्यावस्था में थे तब संत अवधूत स्वामी ज्यों का त्योंने उन्हें आशीर्वाद करते हुए कहा कि यह बालक आगे चलकर महान योगी होगा। संत की भविष्य वाणी सत्य हुई। स्वामी परमानंद की माता हीरलबाई एवं पिता श्री चोकसराम के धार्मिक संस्कारों के कारण बालक परमानंद का भविष्य उज्जवल हुआ। बालक परमानंद प्रातःकाल को उठते थे। उनके मां-बाप उन्हें श्रीमद भगवद् गीता, श्री जप साहब, श्री सुखमनी साहब की वाणी कंठस्थ कराते थे। माताजी के देहावसान के बाद परमानंद के मन में वैराग्य वृत्ति उत्पन्न हुई। मां के 'क्रिया कर्म' के लिए उन्हें हरिद्वार जाना पड़ा। हरिद्वार के आनंदमय वातावरण से वे बहुत प्रभावित हुए। वे वहां कई संतों महात्माओं के सम्पर्क में भी रहे। उनकी इच्छा थी कि वे सदैव के लिए वहां हरिद्वार में रहें किन्तु सम्बंधियों के कहने पर उन्हें अपने नगर शिकारपुर में लौटना पड़ा।

हरिद्वार से लौटने के बाद अब वे बहुत समय एकांत स्थल पर बैठचर भगवद्-भजन में तल्लीन रहते थे। उनके चाचा उन्हें व्यापार धंधे में लगाने के लिए कराची ले आये किन्तु उनकी वृत्ति व्यवसाय में नहीं लगती थी। उनकी इच्छा थी कि आध्यात्मिक पथ पर चलकर प्रभु का दर्शन करें। अब वे कई

दिन मौन एवं उपवास रखते थे। पंद्रह वर्ष कीआयु में भगवद् दर्शन की इच्छा बालक परमानंद के सौभाग्य की निशानी थी। वे गुरू के खोज में थे। उन्हें योगीराज स्वामी मस्तरामदेव गुरु रूप में प्राप्त हुए जिन्होंने उन्हें योग साधना एवं ज्ञान की दीक्षा देकर मार्गदर्शन किया।

अब श्री परमानंद जी बहुत समय बगीचे में ध्यान मग्न रहते, एवं योग साधना करते थे। सम्बंधियों ने तय किया कि शीघ्र ही उनका विवाह किया जाय अन्यथा वे साधु बन जायेंगे। बीस वर्ष की आयु में उनका विवाह किया गया। एक वर्ष के बाद उनकी पत्नी स्वर्गवास हो गयी और फिर उनसे दूसरी शादी करवाई गयी।

श्री परमानंद हरिद्वार में श्री श्यामानन्द भारती के स्थान एवं तत्पश्चात् स्वर्ग आश्रम में भगवद् भजन में तल्लीन रहे। फिर बारह वर्ष गृहस्थाश्रम में रहते हुए भी आध्यात्मिक साधना करते रहे। उनके पास कई प्रेमी आते थे। कुछ प्रेमियों ने उन्हें विनय की कि आप सत्संग का आयोजन कर अपने ज्ञान से हमें लाभान्वित करें। श्री परमानंद ने प्रेमियों की विनय स्वीकार की। वे नित्यनियम सत्संग करने लगे। उनके प्रवचन में प्रभाव था। अब भी जहां वे कथा कीर्तन करते हैं तो हजारों की संख्या में सत्संग प्रेमी श्रवण करते हैं। हरिद्वार एवं बम्बई में उन्होंने आश्रम स्थापित किये हैं जहां कई प्यासी प्यास बुझाने आते हैं। अब श्री परमानंद योगीराज संत परमानंद के नाम से प्रसिद्ध हैं। वे आध्यात्मिक मार्गदर्शक हैं। उन्होंने कई परोपकार के कार्य भी किये हैं।

काव्य रचना :– भक्ति साधना करते करते उनके मन में जो उमंग उत्पन्न होती थी वे काव्य रूप में प्रकट होती थी। उन्होंने सिन्धी एवं हिन्दी में काव्य रचना की है। गद्य में तो उनके उपदेशों की कई पुस्तकें प्रकाशित हुई हैं। उनके भजनों का संग्रह 'गीता हृदय' प्रकाशित हुआ और कुछ भजन 'भजन–आनंद' पुस्तक में प्रकाशित हुए हैं।

गुरु महिमा :– श्री परमानंद के मन में अपने गुरु के लिए अगाध श्रद्धा थी। वे गुरु की महिमा गाते हुए कहते हैं कि मेरे पूर्व जन्म के भाग्य उदय हुए जो मुझे गुरुदेव का दर्शन प्राप्त हुआ। मेरे गुरू ज्ञान की प्रति मूर्ति हैं, वे सदैव ब्रह्म के ध्यान में तल्लीन रहते हैं, वे अचाह हैं।

पुण्य पूर्व का उपजाया, गुरदेव का दर्शन पाया।
ज्ञान सरूप अखंड उज्याला ब्रह्म में लीन मग्न मतवाला।
बेचाह बेपरवाह, बाबा उत्तरा खंड से आया।[१]

कवि कहते हैं कि उनके गुरदेव ने उनपर इतने तो उपकार किये हैं, जिनका वर्णन वे वाणी से नहीं कर सकते।

किया उपकार बराबर भारी, कह न सके यह वाणी बेचारी,
परमानंद पड़ा शरन आ, चरणों में सीस निवाया।[२]

कवि परमानंद कहते हैं कि उन पर अज्ञान का पटल था उनके गुरू समर्थ मस्तराम ने आकर जागृत किया और आत्मज्ञान दिया।

पड़दे में परमानंद था, समर्थ ने आ जगाया।
हद से किया है बेहद, तज नाम रूप काया।[३]

दार्शनिक विचार :– संत परमानंद वेदांत से प्रभावित हैं। उन्होंने वेदांत के अनुरूप ही दार्शनिक वीचार अपने काव्य में व्यक्त किये हैं।

ब्रह्म :– कवि ब्रह्म सम्बंधी दार्शनिक विचार व्यक्त करते हुए कहते हैं कि ब्रह्म सत् चित् आनंद रूप हैं। वह नित्य निरंतर सर्वव्यापक है, वह अनन्त अगोचर हैं।

सत् चित आनंद रूप सो जांको सर्व भेद परषेद जो है,
नित्य निरंतर ब्रह्म सनातन, सर्वव्यापक एक सो है।
अति अनंत वही अंत सो जांको, पावत नहीं कोई पार परम।[४]

कवि के विचारानुसार ब्रह्म करुणा की निधि हैं, विश्व नियन्ता, अंतरयामी अंचित, अनन्त अगम असीम सत् चित् आनंद हैं।

---

१ भजन आनंद पृष्ठ ११३
२ वही " ११७
३ वही " १२४
४ वही " ८१

कृपाशील करुणानिधि स्वामी,
विश्व नियन्ता अंतरयामी।
अचंत अनन्त अगम अपारा,
सत् चित् आनंद भंडारा।[1]

जीव :– जीव स्वयं को देह समझकर आत्म स्वरूप को भूल गया है। कवि जीव को जागृत करते हुए कहते है कि अपनी काया को देखकर अपने निज रूप को मत भूल जाओ। जब तुम अहम् का त्याग करेगा तब तुम्हें अपने साक्षी स्वरूप का ज्ञान होगा।

देह देख न भूलो भाई, देह कर्म भ्रम से पाई।
आतम किस का नाम है, साक्षी कौन कहाएगा,
साक्षी कौन कहाएगा मन का मान मिटाएगा।[2]

जीव ब्रह्म के लिए, आनंद के लिए बाहर भटक रहा है। कवि उसे परामर्श देते हुए कहते हैं कि तू ब्रह्म के ध्यान द्वारा अहंकृति का विनाश कर, ज्ञान द्वारा प्रभु की प्राप्ति करो तब माया और अविद्या का भेद नष्ट हो जायेगा, फिर तुम्हें कहीं भटकना नहीं पड़ेगा।

ध्यान से अभिमान मिटाओ, ज्ञान से परमेश्वर पाओ,
माया अविद्या भेद गंवाओ, ओर दशा में मत भूलो[3]

जीव को सचेत करते हुए कवि कहते हैं कि तू अहम्त्व का त्याग कर अपने चेतन रूप को पहचानो।

खुदी को छोड़ बंदे, खुदाई अपनी जानो,
चेतन जो रूप तेरा व्यापक उसे पछानो।[4]

१ भजन आनंद पृष्ठ १
२ वही ,, ११०
३ वही ,, १०९
४ वही ,, ८९

जगत् :– संत परमानंद के अनुसार यह जगत् स्वप्न सम झूठा है, जैसे स्वप्न के पदार्थ मिथ्या भूत हैं वैसे यह जगत् भी मिथ्या है।

सपने सम संसार जानो, जोड़ो हरि चरणन में मन।[1]

कवि परमानंद जगत् को गोर्ख धंधा मानते हैं, जिस में कई लोग फंस गये हैं। गुर कृपा द्वारा ही इस जगत् से मुक्त हो सकते हैं।

दुन्या है गोर्ख धंधा, बांदी ने किया है बंदा।[2]

जीव जगत् को सत्य समझकर अमूल्य जीवन व्यर्थ गंवा रहा है। जगत् तो झूठा है असत्य है।

साचो जान जगत् को तूने समा गंवाया अमोल।[3]

योग साधना :– संत परमानंदजी महान योगी भी हैं। इस लिए उन्होंने अपने काव्य में योग साधना का उल्लेख भी किया है। वे योग साधना द्वारा प्राणों को दसवें द्वार चढाकर 'सोऽहं' का मंत्र भी साधना चाहते हैं। वे कहते हैं :–

दम की डोर पर चढके साधु!
गगन तमाशा पाऊंगा, सोहंङ राम रीझाऊंगा।
प्राण अपान समान कर, दसवें जा दरशाऊंगा।[4]

एक दूसरे भजन में कवि दसवें द्वार एवं अनहद नाद का उल्लेख करते हुए कहते हैं :–

---

१ आनंद भजन पृष्ठ १०४
२ वही ,, ८९
३ वही ,, १२३
४ वही ,, ९२

दसवें द्वारे, ताड़ी जो लागी,
उलटा पवन पाया घर सागी
अनहद नाद बजाया है।[1]

संत परमानन्द मूलतः आध्यात्मिक मार्गदर्शक हैं, उपदेशक हैं, महात्मा हैं, योगी हैं। भक्ति साधना करते करते उन्होंने कुछ भजन लिखे हैं। काव्य कला की कसौटी पर संतों की वाणी कसना उचित नहीं। इनके भजनों में कहीं कहीं वर्ण मैत्री, वर्ण संगति, छेकानुप्रास एवं रूपक अलंकार का प्रयोग हुआ है। इनकी हिन्दी वाणी में कहीं कहीं सिन्धी एवं फारसी शब्दों का प्रयोग हुआ है।

स्वामी चिद्घनानन्द

स्वामी चिद्घानानन्द का जन्म सिन्ध प्रदेश के सक्खर नगर में सन् १८९८ ई. में हुआ। उनके परिवार एवं बचपन के सम्बंध में सामग्री उपलब्ध नहीं हो सकी। उनके आध्यात्मिक गुरु स्वामी बोद्धानन्द थे। स्वामी चिद्घानन्द संत–सेवी, एकांत प्रिय, ज्ञान संपन्न विरक्त महात्मा थे। वे हरिद्वार कनखल में श्री चेतनदेव की कुटिया के महंत हुए। उनके इष्ट श्री गुरु नानकदेव महाराज थे। ईर्ष्या द्वेष के कारण उनके एक शिष्य ने उनकी हत्या कर दी। उन्होंने स्वामी संतोखदास की प्रेरणा से 'चिद्घन चमन' काव्य ग्रन्थ की रचना की। इस ग्रन्थ में कवि ने दोहा, कवित्त आदि छन्दों द्वारा आध्यात्मिक ज्ञान मुक्ति भक्ति इत्यादि विषयों पर हिन्दी भाषा में विचार व्यक्त किये हैं और साथ साथ उनकी व्याख्या भी की है। यह ग्रन्थ हिन्दी भाषा किन्तु गुरमुखी लिपि में प्रकाशित हुआ है। प्रस्तुत है उनके हिन्दी काव्य का संक्षिप्त विवेचन :–

१ भजन आनंद पृष्ठ १०३

गुरु महिमा:– स्वामी चिद्घनानन्दजी महाराज अपने गुरू स्वामी बोद्धानंद महाराज की स्तुति गाते हुए कहते हैं कि वे ऐसे दीन दयाल हैं, जो उनके पदों की रज मस्तक पर लगाने से वासना रूपी जाल नष्ट हो जाती है।

श्री गुरू बोद्धानन्द नित जो जग दीन दयाल।
जिन पद रज सिर धार कर नास वासना जाल।[१]

कवि कहते हैं कि गुरू ने ही उन्हें आतम ज्ञान की दीक्षा दी और उन के दुखों को निवृत्त किया। कवि इस लिए गुरदेव की वंदना करते हैं।

विद्या प्रद गुरु तिह नमो, नसे संग जिह खेद।[२]

दार्शनिक विचार :– स्वामी चिद्घनानन्द ने दार्शनिक विचार भी व्यक्त किये हैं। रूपक द्वारा ब्रह्म, माया, जीव जगत् एवं ब्रह्म की सृष्टि का चित्र प्रस्तुत करते हुए कहते हैं :–

परमातम खेलत होरी प्रकृति को नाचन चोरी,
जग सृजन इच्छ कर पिचकारी जीव कर मल केसर ढारी;
पंच भूतन पर जोरी।
कीय उत्पन्न स्थूल पसारो, चौदह भुवन खानजे चारो,
गुलाल का रंग रचो री।[३]

कवि चिद्घनानन्द के काव्य में महावाक्य 'अहं ब्रह्मस्मि' की ध्वनि भी मिलती है। वे कहते हैं :–

क्या करूँ जावउं कहां, ग्रहण त्याग नहिं कोय,
मैं ही इक पूर्ण सदा दूर समीप न होय।[४]

---

१ चिद्घन चमन पृष्ठ २३
२ वही ,, २५
३ वही ,, ४२
४ वही ,, ५६७

जैसे तेल रहित दीपक शांत रहता है उसी प्रकार आत्म बोध होने से विचारों का ताप मिट जाता है और जीव आत्म-आनंद का अनुभव कर तद् रूप हो जाता है। कवि के मूल शब्दों में :-

दृढ बोध के होते ही, रहन भोगता भोग।
तेल रहित सम दीप के ताप शांत सब होग।[1]

तांते मैं धन धन हूं, जग वासना नहीं काय।
पूर्ण परमानन्द हूं कहन सुनन मिट जाय।[2]

जगत् :- कवि जगत् व जीवन को खेल मानते हुए कहते हैं :-

जिन्दगी, जहान सारा, बाजी का खेल सारा,
खेल के गये, नहीं रहता जहान को।[3]

जो जीव प्रभु के निकट है वह ही मुक्ति को प्राप्त करता है, मुक्ति तो प्रभु की दासी है। कवि कहते हैं :-

ज्यों राजा के देश में प्रजा करे निवास।
ईश्वर के त्यों लोक में मुक्ति सलोक हिबास[4]

कवि विदेह मुक्त की व्याख्या करते हुए कहते हैं :-

विदेह मुक्ति में दुख नहीं, ताते सुख नहिं चाह।
पूर्ण सुख वह आप है, आय न कबहूं जाय।[5]

इष्ट की आराधना :- स्वामी चिद्घनानन्द के इष्ट श्री गुरु नानक देव थे। श्री गुरु नानक के प्रति उनके मन में अगाध श्रद्धा थी। गुरू नानकदेव की

---

१ चिद्घन चमन — पृष्ठ ५६८
२ वही — ,, ५६९
३ वही — ,, १३६
४ वही — ,, ५९६
५ वही — ,, ६१८

स्तुति गाते हुए कवि कहते हैं कि वे परिपूर्ण पारब्रह्म थे, जगत् के कल्याण के लिए उन्होंने अवतार धारण किया। कवि उन्हें वार वार नमस्कार करते हैं।

पूरण परमानंद गुरु अमर अनादि अनूप।
निर्मल निःचल निखलधर नानक निर्गुण रूप।[1]
बार बार वन्दन करूं, करूं चरन की शेव,
जग उधरन को अवतरे श्री गुर नानक देव।[2]

नाम स्मरण :– कवि नाम की महत्ता प्रतिपादित करते हुए कहते हैं कि नाम स्मरण से आनंद की उपलब्धि होती है, स्वर्ग के सुख भी नाम स्मरण से मिलते हैं :–

स्वर्गादिक सुख मिले नाम ते, तजे नाम क्यों निसतारो।[3]

काम :– कवि काम वासना के परिणाम बतलाते हुए कहते हैं कि जो मनुष्य काम के वश में हैं उसे पाप के पथ पर चलना पड़ता है। उसका ज्ञान व विज्ञान नष्ट हो जाता है। इस एक दुषकर्म करने के कारण अनेक अवगुण उत्पन्न होते हैं। कवि के मूल शब्दों में :–

काम-वस जीव जोई पाप पंथ धावे सोई,
गुरू और गोबिन्द ग्रन्थ संत यूं सुनवाई।
ज्ञान हूं विज्ञान नासे लोक न परलोक भासे,
बुद्धि का विकार सोते पानी में बिहावई।
काम में ही झूठ भाखे क्रोध हिंसा मोह बाड़े,
दिन हूं न रात ताके खाक सिर पावई।
मोक्ष का ये बैरी जानो नर्क का द्वार मानो,
होत न पूर्ण कामो स्वर्ग लोक सिधवाई।[4]

---

१ चिद्घन चमन — पृष्ठ १
२ वही — „ १८
३ वही — „ ३४८
४ वही — „ १३६

कला पक्ष :– स्वामी चिद्घनानन्द का काव्य कला पक्ष सबल है। उन्हों ने विभिन्न छन्दों में काव्य रचना करते हुए मात्राओं का पूरा निर्वाह किया है। उनके काव्य में छेकानुप्रास, वृत्यनुप्रास, वर्ण मैत्री, वर्ण संगति का अच्छा प्रयोग हुआ है। काव्य में कहीं कहीं अरबी–फारसी, शब्दों का प्रयोग हुआ है, उपमा एवं रूपक अलंकार का भी प्रयोग हुआ है। उदाहरणार्थ :–

उपमा :– यह जो माया तरवर छाया, गर्व बढ़ाना ना चाहिए।[१]
ज्यों राजा के देश में प्रजा करे निवास।
ईश्वर के त्यों लोक में मुक्ति सलोक हिबास।[२]

रूपक :– जिन पद रज सिर धार कर नास वासना जाल।[३]
चिद्घन प्याला साच का पीया अमल नहिं जाया[४]
विषय वासना भर पिचकारी रमता विषय की केसर झाड़ी।[५]

१	चिद्घन चमन	पृष्ठ १०१
२	वही	,, ५९६
३	वही	,, २३
४	वही	,, ५११
५	वही	,, १३६

कवि स्वामी पहिलाजराम

सिंधी जनता के प्रिय गायक एवं कवि स्वामी पहिलाजराम का जन्म सन् १९०० ई में सिन्ध प्रदेश के सक्खर ज़िला के खाही गांव में मुखी मदनदास के घर में हुआ। बाल्यावस्था मे ही उनके मां-बाप देव लोक पधारे। बालक पहिलाज सिन्धी एवं गुरमुखी पढ़ते थे। सन् १९१४ में बालक पहिलाज ने पांचवी कक्षा उत्तीर्ण की। गुरमुखी का ज्ञान होने के कारण वे गुरवाणी का भी अभ्यास करते थे।

अब घर के सम्बंधियों का विचार था कि श्री पहिलाज का विवाह किया जाय, किन्तु पहिलाजराम की वृत्ति धार्मिक विद्या प्राप्त करने की ओर थी। वे शिकारपुर के प्रसिद्ध सन्यासी स्वामी शंकरानंद 'भारती' के शिष्य स्वामी शामानन्द भारती के यहां कनखल हरिद्वार में हिन्दी व संस्कृत के अध्ययन एवं धार्मिक विद्या के लिए गये। इन्होंने वहां स्वामी श्यामानंद के नेतृत्व में हिन्दी संस्कृत भाषाओं का अध्ययन करते धार्मिक ग्रन्थों का भी अनुशीलन किया। वे कुछ समय ऋपिकेष के एकांत स्थल में भी रहे। सन् १९२२ में इन्होंने अपने गुरू स्वामी श्यामानंद भारती से गुरु उपदेश की दीक्षा प्राप्त कर सिन्ध के लिए प्रस्थान किया।

सन् १९३० ई में कवि पहिलाजराम ने हैदराबाद सिन्ध में 'पहिलाज पुरी' की स्थापना की। उन पर सरस्वती मां की कृपा हुई, उनकी वाणी में

वर्चस्व तो था, अब काव्य मंदाकिनी भी प्रवाहित हुई। ज्ञान, भक्ति, वैराग्य इत्यादि विषयों पर भजन लिखे। उन दिनों ही उनकी वाणी सिन्ध के गांव गांव में गायी जाती थी। वे स्वयं भी अच्छे गायक थे। जब वे स्वरचित भजन गाते थे तो श्रोता मंत्रमुग्ध हो जाते थे। उन्होंने सिन्ध प्रदेश के विभिन्न नगरों में सनातन धर्म एवं भारतीय संस्कृति का प्रचार किया। वे समाज सुधारक भी थे। स्वतंत्रता आंदोलन के समय इन्होंने राष्ट्रीय भावना से ओतप्रोत कविता की रचना की। वे स्वभाव के निर्भीक थे, खरी खोटी कह देते थे।

भारत–पाक विभाजन के पश्चात् वे देवलाली में आकर बसे। अब भारत के भिन्न भिन्न नगरों में जाकर इन्होंने नाम का संदेश देकर लोगों को जागृत किया। उनके कई शिष्य हुए। १२ मई सन् १९६८ में वे ब्रह्मलीन हुए।

काव्य रचना :– कवि पहिलाजराम ने भक्ति साधना करते करते काव्य साधना भी की। वे संगीतकार भी थे। इस लिए उन्होंने भारतीय राग रागनियों के आधार पर एवं फिल्मी गीतों की तरज़ पर भी काव्य रचना की। उन्होंने सिन्धी एवं हिन्दीं में काव्य रचना की हैं। 'श्री पहिलाज वाणी' के १५ काव्य संग्रह, श्री कृष्ण विलास, कंवर विलास एवं अन्य काव्य पुस्तक सिन्धी भाषा में प्रकाशित हुए हैं और 'प्रहलाद 'पुष्पांजलि' हिन्दी भजनों (पदों) की पुस्तक भी प्रकाशित हुई हैं।

इष्ट की आराधना :– कवि पहिलाजराम ने भगवान श्री कृष्ण, भगवान श्री राम एवं अन्य अवतारों के गुण गीत गाये हैं, किन्तु उनका इष्ट नरसिंह भगवान हैं। इष्ट की आराधना करते हुए कवि पहिलाजराम कहते हैं :–

ओम जय नरसिंह स्वामी– ओम जय नरसिंह स्वामी।
नर हर रूप धरियो नारायण– तुम अंतर्यामी।
सत्युग में हरिनाकश राजा मूर्ख मातांमी।
नखुनन साथ बिदास्यो नरसिंह- कतल कीयो कामी।[1]

गुरु महिमा :– कवि पहिलाजराम अपने गुरू की अनन्य अनुकम्पा का

---

१ श्री प्रहलाद पुष्पांजलि पृष्ठ ३

उल्लेख करते हुए कहते हैं कि उनके भाग्य उदय हुए जो उन्हें स्वामी शंकरानंद भारती के विरक्त शिष्य परम हंस स्वामी श्यामानंद भारती गुरु रूप में प्राप्त हुए जिन्होंने उन्हें ब्रह्म ज्ञान की दीक्षा दी। कवि के मूल शब्दों में :–

सत्गुर मेरा महा पुरूष था– परम हंस सन्यासी जी।
नाम आप का स्वामी श्यामानन्द- भारती भारतवासी जी।
ज्ञानवान गुरुदेव मिला तब- ज्योति ब्रह्म की जाग गई।
श्यामानन्द सत्गुर पाया- अलख पुरुष अबिनासी जी।[1]

दर्शन :- कवि पहिलाजराम जी ने अपने काव्य में कहीं कहीं दार्शनिक विचार भी व्यक्त किये हैं। ब्रह्म संबंधी विचार व्यक्त करते हुए कवि कहते हैं :–

जहां देखूं तहां तेरी नजर तस्वीर आती है,
चौरासी लाख योनि में तेरा नीशान रहता है,
तेरा ही ध्यान रहता है तेरा ही ज्ञान रहता है।[2]

कवि सर्वत्र ब्रह्म का साक्षात्कार करते हैं। वे सब ही जीवों में ब्रह्म का दर्शन करते हैं, और उनका ही सदैव ध्यान करते हैं।

ब्रह्म के कारक अवतारों का उल्लेख करते हुए कवि कहते हैं :–

त्रेता में धर राम रूप तू– पत्थर की पाज बंधाई,
आप तरे लछमन भी तर गया– सगरी सैन तराई।
द्वापुर बन कृष्ण कन्हैया– बन्सीधर बनवारी,
इन्द्र कोप से ब्रज बचायो- गिर धरियो गिरिधारी।
कलियुग में गुरु नानक बनकर- सागर पार सिधायो।
शिव नाम को सिंगल दीप में– दर्शन जाय दिखायो।[3]

मनुष्य देह :– चौरासी लाख योनियों में मनुष्य योनि ही उत्तम योनि है, जिस में जीव मुक्ति के लिए प्रयास कर सकता है। कवि पहिलाजराम जी

---

१ श्री प्रहलाद पुष्पांजलि	पृष्ठ १
२ वही	पृष्ठ ३
३ वही	पृष्ठ ५६

कहते हैं कि जीव अमूल्य मानुष देह प्राप्त कर भी हरि के गुण नहीं गाता, सारी आयु व्यर्थ व्यतीत करता है। कवि कहते हैं :–

भाग्य बड़े मनुष्य तन पायो– भूल न कबहूं हरिगुन गायो,
जप जीयो नहीं हरिगुन गाके उमर गुजर गई।
सत्गुर को नहीं शब्द कमायो- निगुरा हो के जन्म गंवायो,
ज्ञान लियो नहीं गुरु घर जाके, उमर गुजर गई।[1]

मनुष्य का शरीर प्राप्त कर भी अमूल्य स्वासें सांसारिक भोगों में व्यर्थ गंवा रहे हैं, नाम का स्मरण नहीं करते। कवि कहते हैं:–

सो सो करके स्वास गंवाया– एक निमष नहीं नाम ध्याया,
जगत् में झूठ जरते हम- हरी से क्यों डरते हम- गया...[2]

योग साधना :– कवि पहिलाजराम ने अपने काव्य में योग साधना का भी उल्लेख किया है कि गंगा यमुना व सरस्वती अर्थात् इड़ा पिंगला सुष्मना तेरे अंदर ही हैं उन में नहाओ। कवि के मूल शब्दों में :–

तेरे घट में गंगा अरु है तेरे घट में यमुना,
प्यारे– मार गोता मार- संगम संतों का एही।
इडा पिंगला गंगा यमुना, सरस्वती सुखमन नाड़ी एही,
त्रिकुटि में इन तीनों का, संगम होत दिहाड़ी है।
प्रयागराज सम तीर्थ जंगम-संतों का यही।[3]

कवि योग साधना का महत्व प्रतिपादित करते हुए कहते हैं कि जो ऐसी साधना करता है, 'शून्य समाधि में तल्लीन होकर' 'सोऽहम् सोऽहम्' का जाप करता है वह कभी योनियों के चक्कर में नहीं आता।

ऐसा संगम जो नर नहावे, गर्भ जूणि ना आवे सो,
परमानंद प्रहलाद सो पावे सुन समाधि समावे सो।
श्वास श्वास में सोऽहम् सोऽहम् सरगम, सन्तों का यही।[4]

---

१ श्री प्रहलाद पुष्पांजलि — पृष्ठ ४
२ वही — पृष्ठ १६
३ वही — पृष्ठ ६
४ वही — ,, ६

देश भक्तिः– कवि अपने युग का प्रतिनिधि होता है। कवि पहिलाजराम यद्यपि संत कवि थे, फिर भी वे जिस युग में रहे वह स्वतंत्रता संग्राम का समय था, इस लिए उन्होंने उस समय देश भक्ति से ओत प्रोत कुछ कविताएं भी लिखी। कवि झांसी की रानी लक्ष्मी बाई की वीरता का चित्रण प्रस्तुत करते हुए कहते हैं :–

पीठ पै बांधो इनकी झोली साथ दिवाली साथ हो होली,
कह कर घोड़ी खोली– चढ़ बैठी सिंह भवानी।
इह कर खंजर उह कर भाला– डोरा लगाम का मुख में डाला,
मानो जगी ज्वाला– करन चली कुरबानी।[1]

अधिकतर माताएँ अपने बच्चों को लोरी सुनाते हुए यह आशीर्वाद देती हैं कि वे बड़े होकर सुन्दर लड़कियों से विवाह कर सुन्दर मकान में रह कर उनकी सेवा करेंगे। किन्तु कवि पहिलाजराम एक माता से देश-भक्ति की भावना से ओत प्रोत लोरी कहलाते हैं।

मेरा लाल होगा जवान– होगा बड़ा बुद्धिमान।
भूले गांधी का ना ज्ञान– होगा नेहरू का निशान॥
देश भक्त बलबीर बने- हिन्दू धर्म का धीर बने,
होगा पक्का पहलवान– हकीकत के समान।[2]

देश विभाजन :– कवि अपने युग का प्रतिनिधि होता है। देश विभाजन का यथार्थ चित्र प्रस्तुत करते हुए कवि कहते हैं कि आजादी ने अखंड भारत को छिन्न-भिन्न कर दिया।

कौन कहता है कि हिन्द आजाद कर दिया,
आजादी के इमदाद ने–बर्बाद कर दिया।
मानो ये माथा हिन्द का बेंगाल देश था,
जहां इन्कलाब का- जवानों में जोश था।
उसका भी माथा काट– मुर्दह बाद कर दिया,

---

१ श्री प्रल्हाद पुष्पांजलि (भाग २) पृष्ठ २९–३०
२ वही ,, १७

और पेट हिन्द का– मानो पंजाब था,
जहां गोबिंद सिंह के तीरों का ताब था।

कला पक्षः– कवि पहिलाजराम का कला–पक्ष इतना सबल नहीं। इन्होंने अधिकतर हिन्दी रचनाएं फिल्मी गीतों की धुन पर लिखी हैं। इनके पदों में कहीं कहीं सिन्धी व अरबी–फारसी शब्दों का प्रयोग हुआ है। वर्ण मैत्री छेकानुप्रास एवं उपमालंकार का भी कहीं कहीं प्रयोग हुआ है। वे आशु कवि थे।

वर्ण मैत्रीः– आधि व्याधि उपाधि अविद्या टारन के लिये।[1]
हमेशा याद मन तन में तेरा अहिसान रहता है।[2]

यहां आधि, व्याधि, उपाधि एवं मन तन वर्ण मैत्री के उदाहरण हैं।

छेकानुप्रास :- जब तक सातों सागर सरिता- जब तक ठौर न ठाम।[3]
स्वार्थ के सब साथी समझो- स्वार्थ साध के सोय गये।[4]
है काल कराल कहारी- वो छोड़े ना नर नारी।[5]

यहां सातों सागर सरिता, सब साथी समझो स्वार्थ साध काल कराल कहारी, ना नर नारी छेकानुप्रास के उदाहरण हैं।

उपमालंकार -- पशु ज्यों पेट भरते हम,
माया में मुफ्त मरते हम।[6]

यहां मनुष्य को पशु की उपमा दी गई है। हम मनुष्य केवल पशु की भांति अपने पेट भरने अर्थात् खाने पीने में व्यस्त है। मनुष्य देह का जो मूल उद्देश्य है, उसको हमनें भुला दिया है।

---

१ श्री प्रल्हाद पुष्पांजलि — पृष्ठ १
२ वही — ,, १२
३ वही — ,, ३
४ वही — ,, २७
५ वही — ,, ५३
६ वही — ,, १५

राम तेरी दृष्टि सृष्टि है – जैसे बादल में वृष्टि है[1]

रूपक अलंकार :– मन का मणका स्वास की डोरी
ऐसी माला मैंने जोड़ी।[2]

कवि ने स्वासों रूपी डोरी में मन रूपी मणका डाल कर माला तैयार की है।

शम दम के दो लाओ घोड़े क्षमा दया के रजु जोड़े।[3]

शम दम रूपी घोड़ों को क्षमा दया रूपी रजु बांधकर उन पर सवार होकर आध्यात्मिक पथ पर बढ़ो।

दान कुल्हाड़ी भक्ति खंडा– ज्ञान विज्ञान को धनुष प्रचंडा।[4]

भाषा : कवि पहिलाजराम के हिन्दी काव्य में कहीं कही अरबी, फारसी, एवं सिन्धी शब्दों का समावेश भी हुआ है।

१	श्री प्रहलाद पुष्पांजलि	भाग २	पृष्ठ २२
२	वही	भाग १	,, ६
३	वही	भाग २	,, २०
४	वही	भाग २	,, २१

श्री ठारूमल बजाज

श्री ठारूमल बजाज का जन्म २१ जुलाइ सन् १९०२ ई. में सिन्ध के उबावड़े नगर में श्री तुलसीदास बजाज के घर में हुआ। बचपन से ही बालक ठारूमल प्रवीण थे। वे सातवीं कक्षा तक प्रति वर्ष प्रथम आते थे। फाईनल उत्तीर्ण करने के बाद वे शिक्षण केन्द्र से शिक्षा लेकर अध्यापक हुए। अध्यापन कार्य करते वे शेष समय सत्संग में सफल करते थे। देश के स्वतंत्रता संग्राम में भी उन्होंने भाग लिया। उनके नगर में आर्य समाज की स्थापना की गयी। वे आर्य समाज के मंत्री होकर बड़ी लग्न के साथ कार्य करने लगे। उन्होंने रामायण, महाभारत, श्रीमद भगवद् गीता इत्यादि ग्रंथों का भी अभ्यास किया। गार्हस्थ्य होते हुए भी सत्कर्मों एवं ईश्वर उपासना में प्रवृत रहे।

देश विभाजन के बाद वे देवलाली के नजदीक लेकबेल में आ बसे। वहां भी वे सेवा कार्य करते रहे। तत्पश्चात् वे उल्हासनगर आ बसे। सन् १९५२ में वे फिर पिम्परी (पूना) में जा बसे। वहां भी वे दीन दुखियों की सेवा करने लगे। लोगों के मन में इनके लिए श्रद्धा थी, इस लिए वे उन्हें मुखी ठारूमल कहने लगे।

श्री ठारूमल आध्यात्मिक गुरू की खोज में थे। उनके भाग्योदय हुए कि उन्हें दादा साधु वास्वाणी आध्यात्मिक गुरू के रूप में प्राप्त हुए। उनके मन में अपने गुरुदेव साधु वास्वाणी एवं उनके धर्मपीठ के उत्तराधिकारी दादा जे.पी.

वास्वाणी के प्रति अगाध श्रद्धा है। वे पूना में रहते हैं, वे सुबह व शाम मीरां भूमि में आकर आध्यात्मिक रस का रसास्वादन करते हैं।

काव्य रचना :– श्री ठारुमल ने अधिकतर सिन्धी भाषा में ही काव्य रचना की है। उन्होंने हिंन्दी में भी थोड़े से पद लिखे हैं। उनकी वाणी प्यास जी पुकार', 'ईश्वर उपासना' 'सरल श्लोक' पुस्तकों में संग्रहीत है।

श्री टारूमल एक साधक हैं। उनके हिन्दी पद भक्ति भावना से ओतप्रोत हैं। वे ब्रह्म का उल्लेख करते हुए कहते हैं कि ब्रह्म की लीला अनन्त है, असीम है। ब्रह्म सर्वत्र व्यापक है। वह ही जगत् का निमत एवं उपादान कारण है। कवि के मूल शब्दों में :–

प्रभु तेरी लीला है अपर अपार, कोई नहीं पावत है पार।
आप हो सर्वव्यापी अंतरयामी, घट घट वासी घट घट धामी।[1]

सारी सृष्टि में ब्रह्म की ही सत्ता है, अर्थात् सब में ब्रह्म विद्यमान है।

सर्वं सृष्टि में है तेरी लाली,
कोई चीज नहीं है तुझ सीं खाली।[2]

नाम स्मरण :– नाम स्मरण की महिमा गाते हुए कवि कहते हैं कि हरि का नाम सब से प्रिय पवित्र शब्द है, जिसका जाप करने से जीव माया से मुक्त हो जाता है।

हरि को नाम सदाई प्यारो।
जो जन स्मरन करे हरी का उसका होइ उद्धारो।[3]

विनय :– कवि परमात्मा से विनय करते हुए कहते हैं कि मेरे जीवन की नैया संसार के भव सागर में डूब रही है, तू ही उसे पार लगाओ।

---

१ ईश्वर उपासना श्री ठारूमल तुलसीदास बजाज पृष्ठ ६
२ वही ,, ६
३ वही ,, ८

प्रभु मेरी नैया को पार उतारो
तुझ बिन होइ नहीं कोई राखा, तू ही बंदे रखवारो।
मेरे जीवन की नैया डोल रही है, इधर उधर झोल रही है।
उलट पुलट का खतरा है भारी, दया कर पार उतारो।[1]

कवि अपनी मानसिक दशा का उल्लेख करते हुए प्रभु से प्रार्थना करते हैं कि चारों ओर तृष्णाओं रूपी घनघोर घटाएं छाई हुई हैं। पांचों विकार मेरे दुश्मन हैं। आप के बिना मेरा कोई सहारा नही है, तू ही मेरी रक्षा करो।

घनघोर घटा है छाई, मेरे भगवन बनो अब सहाई
काम क्रोध लोभ मोह अहंकारा पांचों वेरी हैं हमारा
जिन्होंने सुधि बुद्धि मेरी भुलाई,
मेरे भगवन बनो अब सहाई।[2]

काव्य कला :- कवि ठारूमल काव्य कला के मर्मज्ञ नहीं हैं, फिर भी सहज रूप से उनके काव्य में छेकानुप्रास एवं रूपक अलंकार का प्रयोग हुआ है।

---

१ ईश्वर उपासना पृष्ठ १०
२ वही ,, २५

स्वामी बसंतराम महाराज

स्वामी बसंतराम का जन्म १० जनवरी, सन् १९०३ ई. में सिन्ध प्रदेश के सक्खर जिला के खाई ग्राम में हुआ। उनके पिता श्री लेखराज फगुनमल एवं माता मथुरादेवी धार्मिक प्रवृति के लोग थे। उनके पिताजी खेती बाड़ी का व्यवसाय करते थे। स्वामी जी छठी कक्षा तक अपने गांव की प्राथमिक शाला में पढ़े। तत्पश्चात् उनके पिता उन्हें खेतीबाड़ी के कार्य के लिए खेत में भेजते थे। बचपन से ही स्वामीजी नाम स्मरण करते थे। स्वयं "हरे कृष्ण हरे कृष्ण" की धुनी लगाते लगाते ध्यान में लीन हो जाते थे। खेत में चिड़ियां आकर अनाज खा जाती थी, फिर भी उनके खेत में औरों के खेतों से अधिक अन्न उत्पन्न होता था स्वामीजी ने अपने बाल सखाओं की एक मंडली बनाई जो नाम कीर्तन करती थी। साथ साथ छोटे मोटे सेवा के कार्य भी करती थी।

स्वामी बसंतराय जी अब सद्गुरु की खोज में थे। संवत् १९७७ में उनके गांव में स्वामी टेऊंराम महाराज पधारे। स्वामी बसंतराम जी स्वामी टऊंराम जी से प्रभावित हुए और मन ही मन में उन्होंने उन्हें गुरू रूप में स्वीकार किया। संवत् १९७८ में स्वामी बसंतराम स्वामी टेऊंराम महाराज के निवास स्थान खंडु में गए और उन्होंने गुरु उपदेश ग्रहण किया। स्वामी बसंतराम जी धार्मिक शास्त्रों का अध्ययन करने के लिए हरिद्वार एवं वाराणसी गए। वहां उन्होंने हिन्दी संस्कृत के साथ साथ वीचार सागर, तत्वमीमांसा,

बसंत गुरु की सेव से मिलत ज्ञान विज्ञान।
भक्ति मुक्ति हरि प्रेम रस जहं तहं सुख सन्मान॥[1]

गुरु की कृपा से जीव का भाग्योदय होता है, और गुरु की कृपा तब होती है जब गुरु के प्रति अनन्य भक्ति एवं अनुराग होता है।

गुरु कृपा से बनत है, बसंत नर का भाग।
मंद मात्र मिट जात है, गुरु से कर अनुराग।[2]

दार्शनिक विचारधारा : ब्रह्मः- कवि बसंतराम के अनुसार ब्रह्म सत् चित् आनंद रूप है, वह निराकार है, अद्वितीय है, अखंड है, अगोचर है।

सत् चित् आनन्द ब्रह्म हैं अखंड अद्वितीय अपार।
अगम अगोचर एक रस, निर्गुण निरहंकार।[3]

परमब्रह्म माया काया से दूर हैं, अनन्त सुखों के धाम है। उनकी सत्ता से ही संसार की उत्पति होती है वह ही जगत का आधार है।

परम पुरुष परमात्मा अनन्त मंगल धाम।
माया काया से परे, बसंत हैं अल काम॥[4]

ब्रह्म निराकार है परन्तु भक्तों के कल्याण एवं धर्म को रक्षा के लिए वह जगत में साकार प्रकट होता हैं।

वसंत भक्तन हेतु हरि, आवत है जग माहि।
राम कृष्ण का रूप धर देत दरश सब कांहि।[5]

परब्रह्म नाम की भांति सर्वत्र व्यापक है। सभ में व्याप्त होते हुए भी सब से परे है और जगत का कारण कार्य कर्ता सब स्वयं ही हैं।

१	श्री बसंत विज्ञान माला	पृष्ट १३
२	वही	,, १५
३	वही	,, १२६
४	वही	,, १६६
५	वही	,, १६८

बसंत नभ सम सर्व में, इक रस व्यापक जोय।
सर्व रुप सब ते परे, अटल ब्रह्म है सोय।।
कार्य कारण जगत का, अधिष्ठान चिद् रूप।
बसंत तांके वेद सब कहत ब्रह्म स्वरुप ।।[१]

जीव:– जीव स्वयं ब्रह्म स्वरूप है।

जग मिथ्या सत् ब्रह्म है, जीव ब्रह्म इक जान।[२]

जीव अज्ञान एवं आसक्ति के जाल में मकड़ी की भांति फंस गया है अन्यथा वह स्वयं सत् चित् आनंद रूप हैं :–

जैसे मकड़ी आप से आप निकासत जाल।
आपहि तिस में फसत है; खाकर होत निहाल।[3]

जो परम ब्रह्म सर्वत्र व्यापक है वही जीव के अंतर विद्यमान है। स्वामीजी इस लिए जीव को जाग्रत करते हुए कहते हैं कि वह ब्रह्म ही तेरी आत्मा है, इस तथ्य को मत भूलो :–

जो परोक्ष परमात्मा, व्यापक है सब मांहि।
सो है तेरा आत्मा बसंत भूलो नाहिं।[४]

हे जीव! तुम स्वयं सद् चित् आनंद रुप हो, किन्तु तू अज्ञानवश स्वयं को चेतन न समझकर देह समझ बैठा है। देह तो नश्वर है, जड़ रुप है परन्तु तू अमर चेतन रूप हो:–

आनंद कारण देह है, बसंत मिथ्या मान।
देह कोष जड़ रुप हैं, तू चेतन अधिष्ठान।[५]

१	श्री बसंत विज्ञान माला	पृष्ठ १६८
२	वही	,, १७०
३	वही	,, १७६
४	वही	,, १७०
५	वही	,, १६२

बसंत गुरु की सेव से मिलत ज्ञान विज्ञान ।
भक्ति मुक्ति हरि प्रेम रस जहं तहं सुख सन्मान॥[1]

गुरु की कृपा से जीव का भाग्योदय होता है, और गुरु की कृपा तब होती है जब गुरु के प्रति अनन्य भक्ति एवं अनुराग होता है ।

गुरु कृपा से बनत है, बसंत नर का भाग ।
मंद मात्र मिट जात है, गुरु से कर अनुराग।[2]

दार्शनिक विचारधारा : ब्रह्म:- कवि बसंतराम के अनुसार ब्रह्म सत् चित् आनंद रूप है, वह निराकार है, अद्वितीय है, अखंड है, अगोचर है ।

सत् चित् आनन्द ब्रह्म हैं अखंड अद्वितीय अपार।
अगम अगोचर एक रस, निर्गुण निरहंकार।[3]

परमब्रह्म माया काया से दूर हैं, अनन्त सुखों के धाम है। उनकी सत्ता से ही संसार की उत्पति होती है वह ही जगत का आधार है।

परम पुरुष परमात्मा अनन्त मंगल धाम ।
माया काया से परे, बसंत हैं अल काम॥[4]

ब्रह्म निराकार है परन्तु भक्तों के कल्याण एवं धर्म की रक्षा के लिए वह जगत में साकार प्रकट होता हैं।

वसंत भक्तन हेतु हरि, आवत है जग माहि ।
राम कृष्ण का रूप धर देत दरश सब कांहि।[5]

परब्रह्म नाम की भांति सर्वत्र व्यापक है। सभ में व्याप्त होते हुए भी सब से परे है और जगत का कारण कार्य कर्ता सब स्वयं ही हैं ।

---

१ श्री बसंत विज्ञान माला पृष्ट १३
२ वही ,, १५
३ वही ,, १२६
४ वही ,, १६६
५ वही ,, १६८

बसंत नभ सम सर्व में, इक रस व्यापक जोय।
सर्व रुप सब ते परे, अटल ब्रह्म है सोय ।।
कार्य कारण जगत का, अधिष्ठान चिद् रूप।
बसंत तांके वेद सब कहत ब्रह्म स्वरुप ।।[१]

जीव:– जीव स्वयं ब्रह्म स्वरूप है।

जग मिथ्या सत् ब्रह्म है, जीव ब्रह्म इक जान।[२]

जीव अज्ञान एवं आसक्ति के जाल में मकड़ी की भांति फंस गया है अन्यथा वह स्वयं सत् चित् आनंद रूप हैं :–

जैसे मकड़ी आप से आप निकासत जाल।
आपहि तिस में फसत है; खाकर होत निहाल।[३]

जो परम ब्रह्म सर्वत्र व्यापक है वही जीव के अंतर विद्यमान है। स्वामीजी इस लिए जीव को जाग्रत करते हुए कहते हैं कि वह ब्रह्म ही तेरी आत्मा है, इस तथ्य को मत भूलो :–

जो परोक्ष परमात्मा, व्यापक है सब मांहि।
सो है तेरा आत्मा बसंत भूलो नाहिं।[४]

हे जीव! तुम स्वयं सद् चित् आनंद रुप हो, किन्तु तू अज्ञानवश स्वयं को चेतन न समझकर देह समझ बैठा है। देह तो नश्वर है, जड़ रुप है परन्तु तू अमर चेतन रूप हो:–

आनंद कारण देह है, बसंत मिथ्या मान।
देह कोष जड़ रुप हैं, तू चेतन अधिष्ठान।[५]

---

१ श्री बसंत विज्ञान माला	पृष्ठ १६८
२ वही	,, १७०
३ वही	,, १७६
४ वही	,, १७०
५ वही	,, १६२

मूर्ख देखत देह को अपना वपु तिह मान।
बसंत चेतन ज्योति को जानत नाहिं अजान।[1]

जीव न तो देह है, न प्राण है, न मन है न बुद्धि है वह इन सब का साक्षी है :–

देह इन्द्रिय मन प्राण बुद्धि, ये पांचो तू नाहि।
बसंत तू इन सर्व का, साक्षी चेतन आहि।[2]

जगत :– स्वामी बसंतराम जी शंकराचार्य की भांति जगत को स्वप्न सम मिथ्या मानते हैं। स्वप्न में कितने ही पदार्थ सत्य भासते हैं, जाग्रतावस्था में वे असत्य भासते हैं। इसी प्रकार अज्ञान के कारण जगत् सत् भासता है, किन्तु ज्ञान का सूर्योदय होने से यह विभ्रम दूर हो जाता है।

यद्यपि नैन से दीखता, होत सकल व्यवहार।
बसंत तो भी स्वप्नवत् मिथ्या है संसार।[3]

...   .

माया मय सब जगत यह, मिथ्या है सत् नाहिं।[4]

स्वामी बसंतराम जी भी शंकराचार्य के अनुसार ब्रह्म सत्य जगत् मिथ्या का समर्थन करते हुए कहते हैं :–

जग मिथ्या सत् ब्रह्म है, जीव ब्रह्म इक जान।[5]

जगत भ्रम के कारण सत भासता है। स्वामी बसंतराम जी विवर्तवाद की ओर संकेत करते हुए जगत की असत्यता का वर्णन करते हैं। जैसे अंधकार में रज्जु सर्प भासती है परन्तु प्रकाश होने पर रज्जु रज्जु भासती है। उसी प्रकार

---

१ श्री बसंत विज्ञान माला — पृष्ठ १६०
२ वही — ,, १६४
३ वही — ,, १७१
४ वही — ,, १७२
५ वही — ,, १७०

भ्रम अ ति् अज्ञान के अंधकार के कारण जीव को जगत सत भासता है किन्तु ज्ञान के प्रकाश होते ही जीव जगत की असारता अनुभव करता है :-

रज्जु में भासत तिमर कर, माला तरु जड़ सांप।
बसंत देखहूं दीपले, केवल रज्जु है आप।[१]

जहां एक ओर कवि जगत को असत एवं मिथ्या मानते हैं तो दूसरी ओर जगत को ब्रह्म का रूप मानते हैं :-

जगत ब्रह्म का रूप है, ब्रह्म आतम स्वरुप।
बसंत मैं हूं आत्मा, जग है मेरा रुप।[२]

राम नाम की महिमा :– स्वामी बसंतराम जी के 'राम' दशरथ सुत राम नहीं, वे तो परम ब्रह्म हैं जो सत् चित् आनंद रुप और सर्व सुखों के दायक हैं। जो जीव उनका स्मरण करता है उसकी जीवन रूपी नैया इस संसार रुपी भवसागर से पार लग जाती है :-

सत् चित आनंद ब्रह्म हैं, अनंत मंगल धाम।
बसंत दे जो सर्व सुख, तिसका सुमरो नाम।
बसंत निश्चय कहत हूं, झूठ न बोलहुं बात।
सिमरत जो हरि नाम को, भव सिन्धु सो तर जात।[३]

हरि स्मरण ही सभी धर्मों, कर्मों से सर्वश्रेष्ठ सर्वोत्तम सर्वोपरि धर्म व कर्म है। कवि कहते है इस लिए जीव को सभी कर्मों एवं धर्मों का परित्याग कर प्रभु स्मरण करना चाहिए। सच्ची श्रद्धा और प्रेम एवं निष्काम भावना से निशदिन नाम स्मरण करने से जीव पूर्ण धाम को प्राप्त करता है :–

धर्म कर्म संसार के, हरि स्मरण सम नाहिं।
बसंत तांते सर्व तज, कर स्मरण मन माहिं।

---

१ श्री बसंत विज्ञान माला — पृष्ठ १७१
२ वही — पृष्ठ १७५
३ वही — ,, १८

मूर्ख देखत देह को अपना वपु तिह मान।
बसंत चेतन ज्योति को जानत नाहिं अजान।[१]

जीव न तो देह है, न प्राण है, न मन है न बुद्धि है वह इन सब का साक्षी है :–

देह इन्द्रिय मन प्राण बुद्धि, ये पांचो तू नाहि।
बसंत तू इन सर्व का, साक्षी चेतन आहिं।[२]

जगत :– स्वामी बसंतराम जी शंकराचार्य की भांति जगत को स्वप्न सम मिथ्या मानते हैं। स्वप्न में कितने ही पदार्थ सत्य भासते हैं, जाग्रतावस्था में वे असत्य भासते हैं। इसी प्रकार अज्ञान के कारण जगत् सत् भासता है, किन्तु ज्ञान का सूर्योदय होने से यह विभ्रम दूर हो जाता है।

यद्यपि नैन से दीखता, होत सकल व्यवहार।
बसंत तो भी स्वप्नवत् मिथ्या है संसार।[३]

... .

माया मय सब जगत यह, मिथ्या है सत् नाहिं।[४]

स्वामी बसंतराम जी भी शंकराचार्य के अनुसार ब्रह्म सत्य जगत् मिथ्या का समर्थम करते हुए कहते हैं :–

जग मिथ्या सत् ब्रह्म है, जीव ब्रह्म इक जान।[५]

जगत भ्रम के कारण सत भासता है। स्वामी बसंतराम जी विवर्तवाद की ओर संकेत करते हुए जगत की असत्यता का वर्णन करते हैं। जैसे अंधकार में रज्जु सर्प भासती है परन्तु प्रकाश होने पर रज्जु रज्जु भासती है। उसी प्रकार

१	श्री बसंत विज्ञान माला	पृष्ठ १६०
२	वही	,, १६४
३	वही	,, १७१
४	वही	,, १७२
५	वही	,, १७०

भ्रम अ ात् अज्ञान के अंधकार के कारण जीव को जगत सत भासता है किन्तु ज्ञान के प्रकाश होते ही जीव जगत की असारता अनुभव करता है :-

रज्जु में भासत तिमर कर, माला तरु जड़ सांप।
बसंत देखहूं दीपले, केवल रज्जु है आप।[1]

जहां एक ओर कवि जगत को असत एवं मिथ्या मानते हैं तो दूसरी ओर जगत को ब्रह्म का रूप मानते हैं :-

जगत ब्रह्म का रूप है, ब्रह्म आतम स्वरुप।
बसंत मैं हूं आत्मा, जग है मेरा रुप।[2]

राम नाम की महिमा :– स्वामी बसंतराम जी के 'राम' दशरथ सुत राम नहीं, वे तो परम ब्रह्म हैं जो सत् चित् आनंद रुप और सर्व सुखों के दायक हैं। जो जीव उनका स्मरण करता है उसकी जीवन रूपी नैया इस संसार रुपी भवसागर से पार लग जाती है :-

सत् चित आनंद ब्रह्म हैं, अनंत मंगल धाम।
बसंत दे जो सर्व सुख, तिसका सुमरो नाम।
बसंत निश्चय कहत हूं, झूठ न बोलहुं बात।
सिमरत जो हरि नाम को, भव सिन्धु सो तर जात।[3]

हरि स्मरण ही सभी धर्मों, कर्मों से सर्वश्रेष्ठ सर्वोत्तम सर्वोपरि धर्म व कर्म है। कवि कहते है इस लिए जीव को सभी कर्मों एवं धर्मों का परित्याग कर प्रभु स्मरण करना चाहिए। सच्ची श्रद्धा और प्रेम एवं निष्काम भावना से निशदिन नाम स्मरण करने से जीव पूर्ण धाम को प्राप्त करता है :–

धर्म कर्म संसार के, हरि स्मरण सम नाहिं।
बसंत तांते सर्व तज, कर स्मरण मन माहिं।

---

१ श्री बसंत विज्ञान माला — पृष्ठ १७१
२ वही — पृष्ठ १७५
३ वही — ,, १८

प्राणों को दसवें द्वार चढ़ाकर साधक को अपने मन का ब्रह्म से तादात्मय करना चाहिये :–

प्राण मूल से उठ के, जावत दसवें द्वार।
तांसे मन को मेल के, स्मरण कर हर वार।[1]

मनुष्य देह :– मनुष्य देह का महत्त्व बताते हुए स्वामी बसंतराम जी कहते हैं कि देवता भी मनुष्य योनि के इच्छुक होते हैं। मनुष्य देह स्वतंत्र है और जितनी भी योनियां हैं, वे परतंत्र हैं। इस मनुष्य योनि में ही जीव शुभ कर्म द्वारा अपना भविष्य बना सकता है।

बसंत मानुष देह को पुनि पुनि चाहत देव।
मनुष्य देह की करत है, निशदिन सुरगण सेव।[2]

.. .. —

और देह परतन्त्र हैं, स्वतन्त्र मानुष देह।
बसंत चाहत कर्म जो, सो इस में कर लेह।[3]

मनुष्य देह में ही जीव प्रभु का स्मरण कर सकता है और हरि स्मरण द्वारा ज्ञान की उपलब्धि होती है, इस आत्म ज्ञान द्वारा जीव जीवन मुक्त होता है। और किसी योनि में हरि स्मरण, ज्ञान की प्राप्ति एवं मुक्ति सम्भव नहीं। इसी लिए जीव को मनुष्य देह का सद्उपयोग करना चाहिए।

मनुष्य देह बिन हरि भजन, बसन्त होत न काहिं।
बिना भजन हरि ज्ञान नाहिं, मुक्ति ज्ञान बिन नाहिं।[4]

प्रेम :– स्वामी बसंतरामजी ने आध्यात्मिक प्रेम का उल्लेख किया है। प्रेम परमात्मा है, परमात्मा प्रेम रूप है :–

---

१ श्री बसंत विज्ञान माला — पृष्ठ १५२
२ वही — ,, ४०
३ वही — ,, ४१
४ वही — ,, ४१

प्रेम रूप परमात्मा, परमेश्वर हैं प्रेम।
बसन्त दोनों एक लख, प्रेम करे पा क्षेम।[१]

प्रभु के प्रति प्रेम ही सच्चा प्रेम है, सांसारिक पदार्थों के प्रति प्रेम, प्रेम नहीं मोह है। प्रेम सुखदायी है, मोह दुखदायी है।

लगन लगी जा ईश से, प्रेम कहावे सोय।
बसंत माया से लगी, मोह कहत तिहँ होय।[२]

सच्चा प्रेमी वही है जो अपने प्रियतम की प्राप्ति के लिए अपना सर्वस्व समर्पण करता है:-

प्रीतम हित जो सब तजे, प्रेमी कहिये सोय।
बसंत एसा जगत में, विरला प्रेमी होय।[3]

कवि साधक को प्रेम रूपी सेजा पर शब्द रूपी अर्थात् गुरु मंत्र रूपी पति के साथ सोने का आदेश देते हैं। अर्थात् गुरु मंत्र का अति अनुराग के साथ जाप कर स्वयं को भूल कर आत्मानंद की प्राप्ति करो:-

बसंत शैया प्रेम पर, चेतन चदर बिछाय।
शब्द पति से सोय कर, श्रुति सुहाग को पाय।[४]

विरह:- स्वामी बसंतरामजी ने अपने काव्य में अपनी विरह-व्यथा का वर्णन भी किया है। उन्हें अपने प्रियतम के वियोग में रात दिन बेचैनी है। उनकी आंखों से गंगा यमुना बहती है, वे आठों पहर अपने प्रियतम की राह देख रहे हैं:-

प्रीतम तेरे दरस बिन, मोहि न आवै चैन।
बसंत तेरे विरह में, तड़फत हूं दिन रैन।

---

१ श्री बसंत विज्ञान माला पृष्ठ २८
२ वही ,, २८
३ वही ,, २९
४ वही ,, २९

रैन बिताऊँ रोय कर, दिन को खोल कपाट।
बसंत नित देखत रहूं, प्रीतम तेरी वाट।[१]

जिस प्रकार चकोर चांद के विरह में दुखी होता है उसी प्रकार कवि अपने प्रियतम के विरह में व्यथित है :–

प्रीतम तेरे विरह में, जीव जरत है मोर।
बसंत बिछुड़त चांद से, जैसे जरत चकोर।[२]

जैसे पपीहा बादल के लिए तड़पता है, उसी प्रकार कवि अपने प्रियतम के लिए तड़प रहे हैं। वे अपने प्रियतम को पुकारते हुए कहते हैं कि जिस प्रकार पपीहा बादल के बूंद का प्यासा होता है उसी प्रकार हे प्रियतम! मैं तेरे दर्शन रूपी बूंद की प्यासी हूं।

बसंत पपीहा प्रेम से, निश दिन करत पुकार।
प्रीतम बादल मोहि दे, दर्शन बून्द उदार।[३]

काव्य कला :– संत बसंतराम काव्य कला के मर्मज्ञ जान पड़ते हैं। उन्होंने हिन्दी में दोहे ही लिखे हैं। दोहे के नियमों का अच्छी तरह से निर्वाह किया है। इनके काव्य में वर्ण मैत्री, वर्ण संगति, छेकानुप्रास, वृत्यानुप्रास, उपमा एवं रूपक अलंकार का अच्छा प्रयोग हुआ है। कुछ उदाहरण प्रस्तुत हैं :–

वर्ण मैत्री : तन मन धन पुनि वचन से, करूं सर्व की सेव।[४]
नृसिंह मच्छ कच्छ आदि का, बसंत फिर हो एक।[५]
धर्म कर्म हो विश्व में, सम्पत्ति सद् व्यवहार।[६]

---

१ श्री बसंत विज्ञान माला पृष्ठ ३३
२ वही ,, ३४
३ वही ,, ३४
४ वही ,, ७
५ वहीं ,, ७३
६ वही ,, ९

रंका बंका नाम जप पाया मन आराम।[1]

यहां तन मन धन, मच्छ, कच्छ, धर्म कर्म, रंका बंका वर्ण मैत्री के उदाहरण हैं।

वर्ण संगतिः– बसंत जिस जिस कर्म से चित्त की शुद्धता होय।[2]

जन्म जन्म भटकत फिरा कहुं नहि पाई ठौर।[3]

देख देख पुनि हंसत है, सब में सोई देव।[4]

यहां जिस जिस, जन्म जन्म, देख देख वर्ण संगति के उदाहरण हैं।

छेकानुप्रास :– कंचन कामिनी कीर्ति बसंत काम अरु कोह[5]

परम पिता परमात्मा, मेरी सुन अरदास[6]

इनके युग पद पद्म पर बसंत करहुँ जुहार।[7]

यहां कंचन कामिनी, कीर्ति, परम पिता परमात्मा पद पदम पर छेकानुप्रास के उदाहरण हैं।

वृत्यानुप्रास :- शान्ति सुमति को राख मन, जीत गये सब संत[8]

बसन्त मुक्ति करन हित, सत्संग हरि अनुराग।[9]

बसन्त दुर्लभ देह में, करो अलौकिक काम।[10]

१	बसंत विज्ञान माला	पृष्ठ	२७
२	वही	,,	५२
३	वही	,,	४
४	वही	,,	१६५
५	वही	,,	६
६	वही	,,	२
७	वही	,,	१
८	वही	,,	११६
९	वही	,,	७८
१०	वही	,,	४२

यहां शान्ति सुमति, बसंत मुक्ति, हित सत्संग हरि, करो अलौकिक काम, वृत्यानुप्रास के उदाहरण हैं।

उपमालंकार :– सर्व शास्त्र सब वस्तु से, सार लेत बुद्धिमान।
बसंत जिम सब वृक्ष से, मधुमखी ले मिष्ठान ।।[1]

यहां बुद्धिमान के लिए मधुमखी की उपमा दी गयी हैं। जैसे मधुमखी भिन्न भिन्न वृक्षों एवं पौधों से मधुर रस ग्रहण करती हैं वैसे बद्धिमान लोग सबही शास्त्रों से सार ग्रहण करते हैं।

काल पाय कर बीज जिम बसंत उपजत खेत।
तैसे नर को कर्म भी समय पाय फल देत।[2]

यहां कर्म के लिये बीज की उपमा दी गयी है। जैसे बीज को बोने से कुछ वर्षों के पश्चात उस में से वृक्ष उत्पन्न होता है और वह वृक्ष फल देता है वैसे जीव के कर्म भी बीज की भांति कुछ समय के बाद भाग्य व दुर्भाग्य के फल देते हैं।

रूपक अलंकार :– क्रोध बाण को जो सहे, सो है अति बलबीर।[3]

जो क्रोध रूपी बाण को सहन करता है वह ही बड़ा वीर है।

तन नगरी मन भूप है, मंत्री मोह पछान।
बसंत आशा तीय तिस; सुत कामादि जान ।।
भोग वासना विषय रस, तांकी सैन सुधीर।
बसंत जीतन कठिन है, ऐसा मन बलबीर।[4]

मन शरीर रूपी नगरी का राजा है, मोह रूपी मंत्री की राय अनुसार वह मन शासन करता है। आशा मन रूपी राजा की स्त्री है और कामादि उसके पुत्र हैं। इस राजा को भोग वासना, विषय रस रूपी सैना है। ऐसी स्थिति में मन रूपी शासक को जीतना बड़ा कठिन है।

---

१ श्री बसंत विज्ञान माला — पृष्ठ ५५
२ वही — ,, ७९–८०
३ वही — ,, १०३
४ वही — ,, ९२–९३

बसंत मन पावन करो, साबुन शब्द लगाय।
प्रेम नीर से धोयके, अविद्या मैल मिटाय।[१]

मन को गुरू शब्द अर्थात् गुरु मंत्र रूपी साबुन लगाकर, प्रेम रूपी पानी से धोकर अविद्या रूपी मैल मिटा दो।

उदाहरणालंकार :– कुबड़ी करमा भीलनी गनका गौतम तीय।
नाम जपे अघ ओघ हर बसंत पाया पीय।[२]

कवि कुबड़ी, करमा भीलनी, गनब्रन गौतमी का उदाहरण देते हुए कहते हैं कि इन्होंने नाम का स्मरण कर पाप कर्म को नष्ट कर प्रियतम को प्राप्त किया।

अजामेल जप नाम को पाई मुक्ति अनूप।[३]

कवि अजामेल पापी का उदाहरण देते हुए कहते हैं कि अजामेल जैसे पापी ने भी नाम स्मरण द्वारा मुक्ति को प्राप्त किया।

भाषा :– कवि बसंतराम की भाषा संस्कृत निष्ठ है। मात्राओं के निर्वाह के कारण कवि ने कहीं कहीं शब्दों के रूप में परिवर्तन किया हैं। इनके काव्य में समासों का भी समावेश हुआ है। उदाहरण प्रस्तुत हैं :–

समास :– त्रिलोकीनाथ, पद–पद्म, भवसिन्धु, दशानन, चिदानन्द, शुद्धाशुद्ध, विषयानन्द, ब्रह्मानन्द, इन्द्रजाल इत्यादि।

---

१ श्री बसंत विज्ञान माला — पृष्ठ ९६
२ वही — ,, २६
३ वही — ,, २७

श्री फतेहचन्द शर्मा 'परबस'

श्री फतेहचन्द शर्मा का जन्म १४ आगस्ट सन् १९०६ ई. में सिन्ध प्रदेश के नवाबशाह जिला के बहिलाणी गांव में महाराज श्री गेड़ीराम शर्मा के घर में हुआ। उनकी माता का नाम लहणी बाई था। घर में धार्मिक वातावरण था, बालक फतेहचन्द पर इसका प्रभाव पड़ा। उनका उपनाम परबस है।

विद्यार्थी जीवन में ही श्री शर्मा स्कूल के सांस्कृतिक कार्य-क्रमों में भाग लेते थे। बचपन में ही वे कवि हृदय थे। एक बार उनके गुरू एवं परीक्षक श्री नेवंदराम विश्नदास गुरबाणी ने मौसिक परीक्षा लेते हुए, सिन्धी भाषा में राष्ट्रीय विचार धारा की एक काव्य पंक्ति सुनाते हुए कहा कि इस विषय और इसी छंद के आधार पर अन्य पंक्तियां लिखो। श्री शर्मा ने उसी समय उसी विषय पर, उसी छंद में १६ काव्य पंक्तियां लिखकर प्रस्तुत की। परीक्षक श्री नेवंदराम जो यह कविता पढ़कर अत्यंत प्रसन्न हुए और उन्होंने उसी कविता पर साठ अंक दिये।

अंग्रेजी चौथी कक्षा उत्तीर्ण करने के पश्चात् उन्होंने नवाबशाह में एक कारखाने में नौकरी की। कुछ समय के बाद उन्होंने महरापुर में स्कूल की स्थापना की। उन्हें संगीत का भी अच्छा ज्ञान था। उन दिनों भारत में आर्य समाज के संस्थापक स्वामी दयानंद की जन्म-शताब्दी मनाई जा रही थी, श्री शर्मा जी उस में सम्मिलित होने के लिए प्रो. हासानंद जादूगर एवँ अन्य मित्रों के साथ भारत में आये। उन्होंने भारत के भिन्न भिन्न नगरों का भ्रमण किया।

उन्हें मसूरी में अच्छी नौकरी मिल गई। कुछ वर्षों के बाद फिर उन्होंने हैदराबाद सिन्ध में नौकरी की। गृहस्थ जीवन में रहते हुए वे साहित्यिक एवं सांस्कृतिक कार्यक्रमों में सक्रिय भाग लेते थे। कुछ समय उन्होंने कलकत्ता में जे. एन. जी. रिकारडिंग कंपनी में नौकरी भी की। सन् १९७२ में वहां कलकत्ते में सिन्धी भाषा के प्रेमियों ने सिन्धी स्कूल की स्थापना की। श्री शर्माजी निःशुल्क उसी स्कूल में सिन्धी पढ़ाते रहे।

रचनाएं :– श्री फतेहचन्द शर्मा बचपन से ही कवि हृदय हैं। वे अच्छे गायक भी हैं। उन्होंने सिन्धी एवं हिन्दी भाषा में काव्य रचना की है। सिन्धी में उनका काव्य संग्रह "परवस जी पुकार" एवं हिन्दी में उनका दोहा संग्रह "ज्ञानदीप" प्रकाशित हुए हैं।

गुरु महिमा :– संत कवियों की भांति श्री फतेहचन्द शर्मा ने गुरु की महिमा गायी है। वे गुरू को जीवन का आधार मानते हैं। गुरु के संग से ही साधक को ज्ञान की प्राप्ति होती है :-

सत्गुर के सतसंग से मिलता ज्ञान अपार।
'परबस' सत्गुर ही सदा जीवन का आधार॥[1]

गुरू को नावक और उनके चरनों को नाव की उपमा देते हुए कवि कहते हैं कि जो साधक श्रद्धा के साथ गुरु के चरनों की सेवा करते हैं वे गुरु–चरण रूपी नाव द्वारा भव सागर से पार हो जाते हैं। कवि के मूल शब्दों में :–

चरण गुरु के नाव हैं सत्गुर खेवनहार।
श्रद्धा से जो सेवते परवस उतरे पार।[2]

कवि गुरू की महिमा प्रतिपादित करते हुए कहते हैं कि मनुष्य कितनी भी तपस्या करे, हरिकथा का श्रवण करे, तीर्थों की यात्रा करे, जब तक उसने सत्गुरु की सेवा नहीं की है तब तक उनकी सब क्रियाएं असफल हैं।

---

१ ज्ञानदीप — पृष्ठ १९
२ वही — ,, ५३

जप तप कियो हरि की कथा तीर्थ कियो अनेक।
परबस व्यर्थ जान ले बिन सेवे गुरु एक।[१]

सूर्य के उदय होते ही जैसे जगत् का अंधेरा दूर हो जाता है उसी प्रकार गुरु-ज्ञान द्वारा मन का अज्ञान-अंधेरा उड़ जाता है :–

सूरज उदय होत ही जग उजयाला पाय।
यूं 'परबस' गुरु ज्ञान से मन अंधियारा जाय।[२]

दार्शनिक विचार :– कवि फतेहचन्द शर्मा के काव्य में उनके दार्शनिक विचार भी व्यक्त हुए हैं। इनकी विचारधारा पर संत परम्परा का प्रभाव परिलक्षित है। संत कवियों की भांति इन्होंने भी ब्रह्म, जीव, जगत्,माया, मुक्ति इत्यादि विषयों पर विचार व्यक्त किये हैं।

ब्रह्म :– कवि के अनुसार परम ब्रह्म अंतःकरण में ही परिव्याप्त है। कवि कहते हैं कि :-

मन मंदिर मे बसत हैं एक सहज ओअंकार।[३]

संत कबीर की भांति कवि शर्मा ने भी दशरथ सुत राम का उल्लेख न करते हुए परम ब्रह्म राम कीं व्यायकता का वर्णन करते हुए कहा है कि वह सर्वत्र विद्यमान है। तुम में हम में बसत है सब में दाता राम।
'परबस' उसको भज मना तज कर सारे काम।[४]

एक राम अर्थात् ब्रह्म ही जगत् का आधार है।

परबस केवल राम ही जग को है आधार।[५]

हम में, तुम में, सब में वह ब्रह्म विद्यमान है, अर्थात् ब्रह्म सर्वत्र व्यापक है।

---

१ ज्ञानदीप पृष्ठ १०४
२ वही ,, १०५
३ वही ,, ३२
४ वही ,, ९
५ वही ,, २

तुम में हम में बसत है सब में दाता राम।[1]

जीव :– जीव अज्ञान के कारण ब्रह्म को स्वयं से दूर मान बैठा है। राम रूपी रत्न जीव के अन्तःकरण में व्याप्ति है। गुरू की अनुकम्पा से जब उसे आत्मज्ञान की उपलब्धि होगी तब वह अपने अन्तःकरण में ही ब्रह्म का साक्षात्कार करेगा। कवि फतेहचन्द के मूल शब्दो में :-

हृदय तोरे बसत है, राम रत्न हर नीत।
गुरु कृपा से खोज तांह, परबस पाय ले प्रीत।[2]

जीव जिस ब्रह्म को बाहर खोजता है, वह तो उसी के मन मंदिर में विराजमान है।

परबस क्यों बन बांवरा, ढूंढत देश–विदेश।
हृदय तोरे बसत है, सदा ईश जगदीश ॥[3]

जगत् -– जगत् की असत्यता प्रतिपादित करते हुए कवि कहते हैं कि यह जगत् मरु भूमि है। जैसे प्यासा मृग रेत को जल की धारा समझकर भटक भटक मर जाता है, वैसे जीव भी जगत् को सत् समझ कर भटक भटक मर जाता है।

मग बालू जल जानकर छूटे बन बेचैन।
'परबस' धोखे से मरा पाकर सुंदर नैन॥
बालू तो बालू रहा मत मानो जल धार।
परबस सुंदर रेत ज्यों यह झूठा संसार॥[4]

कवि के अनुसार यह जगत् झूठा है, और जगत् के सम्बंधियों एवं पदार्थों की प्रीति भी झूठी है।

परबस तेरा कौन है, तू है किसका मीत।
झूठी जगती में फंसे करके झूठी प्रीत।[5]

---

१ ज्ञानदीप पृष्ठ ९
२ वही पृष्ठ ७१
३ वही „ ७६
४ वही „ ४१
५ वही „ १

जीव जगत् को सच्चा समझकर उस में आसक्ति रखता है। कवि जीव को जागृत करते हुए कहते हैं :–

मत भूलो तुम बांदरे झूठा सब संसार।[१]

माया :- कवि ने माया के लिए 'भूल भुलैया' का बिम्ब प्रस्तुत करते हुए कहा है कि जैसे लोग भूल भुलैया में भूल पड़ते हैं, वैसे मूर्ख लोग माया के भूल भुलैया में भटक रहे हैं। गुरू के ज्ञान द्वारा ही वे माया से मुक्त हो सकते हैं।

मूर्ख माया जगत् की भूल भुलैया जान।
मुक्त भये नर पाय कर 'परबस' गुरू से ज्ञान॥[२]

माया का कुछ भी अस्तीत्व नहीं। माया के जितने भी पदार्थ है वे क्षणभंगुर हैं।

माया का बल कुछ नहीं छोड़ चले छिन मांहि[३]

मुक्ति :– कवि शर्मा के अनुसार राम नाम स्मरण से ही जीव को मुक्ति की प्राप्ति हो सकती है।

परबस दो ही अक्षरों में सारा सार समाय।
ओम राम, शिव, हर हरि कहकर मुक्ति पाय॥[४]

कवि शर्मा की यह धारणा है कि अनन्य भाव से गुरू की सेवा करने से भी जीव मुक्ति को प्राप्त कर सकता है।

परबस सतगुर सेव कर पा ले मुक्ति दान।[५]

सत्संग करने से भी जीव आवागवन से मुक्त हो सकता है।

परबस शुभ सत्संग से कटे कठिन जम फंद।[६]

---

१ ज्ञानदीप पृष्ठ २
२ वही ,, १०३
३ वही ,, ३
४ वही ,, १०३
५ वही ,, १०४
६ वही ,, १३

कवि के अनुसार पांचों विकारों का परित्याग करने से भी मुक्ति प्राप्त हो सकती है।

काम क्रोध मद लोभ और मोह मान हंकार।
परबस पांचों त्यागिये मिले मुक्ति का द्वार।[१]

राम नाम स्मरणः– राम नाम के स्मरण से ही आनंद की उपलब्धि हो सकती है। कवि के अनुसार आनंद की जड़ राम नाम है।

'परबस' सुख का मूल बस राम नाम को जान।[२]

साधक को स्वास स्वास से राम का नाम लेना चाहिए तब उसे विश्राम मिलेगा :-

स्वास–स्वास में ले सदा परबस हरि का नाम।
ऐसे स्मरण से सदा पाओगे विश्राम ।।३

ज्ञान :- ज्ञान की महत्ता बताते हुए कवि कहते हैं कि ज्ञान-चक्षु के विना जीव अज्ञान के अंधकार में ठोकरें खाता है।

ज्ञान नयन बिनु बांवरा परबस ठोकर खाय।[४]

कवि साधना पंथ में ज्ञान एवं भक्ति दोनों की अनिवार्यता बताते हुए कहते हैं :-

माया ममता आग है देती जीव जलाय।
परबस इस से दूर रह ज्ञान-भक्ति अपनाय।[५]

सत्संग :– सत्संग की अनिवार्यता बताते हुए कवि कहते हैं कि साधु संगति के द्वारा मनुष्य का चित्त पवित्र होता है और उसे आनंद की उपलब्धि होती है।

---

१. ज्ञानदीप पृष्ठ ११
२. वही ,, ३
३. वही ,, २२
४. वही ,, ५
५. वही ,, २३

परबस रहकर जगत् में सत्संग स्यूं कर प्रीत।
साध संगत सुख उपजे निर्मल हो मन चीत।[1]

कवि कहते हैं कि सत्संग रूपी घाट पर सत्गुरू रूपी खेवनहार भक्ति रूपी नाव के चलाने वाले हैं, जो मनुष्य उस नाव में बैठेगा वह इस भवसागर से पार हो जायेगा। कवि के मूल शब्दों में:-

परबस सत्संग घाट पर सत्गुर खेवनहार।
भक्ति नाव चलावते चढ़ा जो पहुंचा पार।[2]

सत्संग एवं संतों महात्माओं की संगति मनुष्य का मार्गदर्शन करते हैं। जो मनुष्य इसी मार्ग में चलता हैं वह कभी दुखी नहीं होता।

साध संगत सत्संग सदा साची राह दिखाय।
ऐसे पथ पर जो चले परबस पीड़ न पाय।[3]

कवि शर्माजी ने कुछ उपदेशात्मक दोहे भीं लिखे हैं जिन में नैतिकता और मर्यादा का परामर्श देते हुए कवि कहते हैं :-

हवन यज्ञ तीर्थ कियो परबस बारम्बार
मात पिता गुर सेव बिन कबहूं नही उद्धार।[4]

सीतल चन्दा की तरह बनो त्याग कर क्रोध।
परबस मन शमयुत भये मिलता परम प्रबोध॥[5]

कवि शर्माजी दीन दुखियों की सेवा में ही राम का दर्शन करते हैं।

दीन दुखी की सेव में छिपा हुआ है राम।
परबस ऐसे कर्म से पाओगे घनश्याम।[6]

---

१ ज्ञानदीप पृष्ठ ४३
२ वही ,, ९३
३ वही ,, ९४
४ वही ,, १६
५ वही ,, १२
६ वही ,, २२

विकारों के वश में होकर जीव अवनति की ओर अग्रसर होता है, कवि चेतावनी देते हुए कहते हैं :-

मत ललचाना नर कभी, पर धन और पर नार।
परबस लोभी जीव का होत न बेड़ा पार।[1]

जो दरिद्र दुखियों एवं अतिथियों की सेवा करता है परमात्मा उस पर दया दृष्टि करता है:-

जिसने सेवियो दीन को, अतिथि और अनाथ।
निस दिन उसके सीस पर परबस हर का हाथ ।।[2]

कला पक्ष:- कवि फतेहचन्द शर्मा का काव्य - कला पक्ष सबल है। 'ज्ञानदीप' में उनके ८९५ दोहे संग्रहित हैं। उन्होंने दोहा छंद के नियमों को निभाया है। दौहे के प्रत्येक पद में २४ मात्राएं होती हैं और अन्त्यानप्रास का प्रयोग होता है, कवि ने इन नियमों का अधिकतर निर्वाह किया है। उदाहरणार्थ:

कल की चिन्ता मत करो, अब हरि के गुन गाय।
— — —— — ० —, — — - — — ०
२ २ २ २ २ १२, २ २ २ २ २ ० =२४ मात्राएं

गुर के चरणों में रहो, परबस ध्यान लगाय।।
— - — — — ०—, — — —० ०—०
२ २ २ २ २ १२, २ २ २ १ १ २ १ =२४ मात्राएं

१३ + ११ मात्राएं
१३ + ११ ,,

मात्राओं की दृष्टि से भी उपर्युक्त दोहा ठीक है और उस में 'गाय लगाय' अन्त्यानुप्रास का भी प्रयोग हुआ है।

कवि शर्मा के काव्य में वर्ण-मैत्री एवं वर्ण-संगति का भी प्रयोग हुआ है। कुछ उदाहरण प्रस्तुत हैं :-

---

१ ज्ञानदीप पृष्ठ २६
२ वही ,, ६९

वर्ण मैत्री :- सुख में सब ही गया राम नाम और दान।[१]
मर कर कितने ही गये, परबस जम के द्वार।[२]
तन मन नित अर्पण करो गुरु से निज को जोड़।[३]
परबस साधु सुसन्त जन चिर थिर रहा न एक।[४]

उपर्युक्त पंक्तियों में राम, नाम, मर कर, तन मन, चिर थिर वर्ण मैत्री के उदाहरण हैं।

वर्ण संगति :- फिर फिर भूला बांवरा, नित नित कपट कमाय।[५]
भटक भटक कर बांवरे, भयी रैन से भोर।[६]

यहां फिर फिर, नित नित, भटक भटक वर्ण संगति के उदाहरण हैं।

अन्तयानुप्रास:– दोहा छंद में अन्तयानुप्रास का प्रयोग होता है। कवि ने उसके साथ निभाया है :

ज्यों चकोर का चांद से जन्म जन्म का साथ।
यूं निस दिन हर भक्त पर परबस हर का हाथ।[७]
जिस पर गुर कृपा करे वह बड़ भागी जान।
मुक्त भया संसार से परबस पा गुर ज्ञान।।[८]

उपर्युक्त दोहों में 'साथ, हाथ, जान ज्ञान', अन्तयानुप्रासों का प्रयोग हुआ है।

छेकानुप्रास -- कवि शर्मा के दोहों में छेकानुप्रास का भी अच्छा प्रयोग हुआ है। उदाहरण प्रस्तुत है।

१	ज्ञानदीप	पृष्ठ १
२	वही	,, २
३	वही	,, २३
४	वही	,, ३५
५	वही	,, २०
६	वही	,, २
७	वही	,, ५१
८	वही	,, ९८

संत सरिस दानी नहीं देत दान हरि नाम।[1]

लगन लगे जिस जीव को सेवत सत्गुर संत।[2]

मन मूर्ख जाने नहीं सदा सूर संग नैन।[3]

साध संगत सत्संग सदा मांची राह दिखाय।[4]

उपर्युक्त काव्य पंक्तियों में 'संत सरिस' 'देह दान', 'लगन लगे' 'जिस जीव', 'सेवत सत्गुर संत', 'मन मूर्ख' सदा सूर संग, साध संगत सत्संग सांची' छेकानुप्रास के उदाहण हैं।

लक्षणा:– कवि शर्मा के काव्य में कहीं कहीं लक्षणा शक्ति समाहित है। कुछ उदाहरण प्रस्तुत हैं :–

परबस जब पक्षी उड़ा टूट गया जग मेल।[5]

यहां पक्षी का लाक्षणिक अर्थ आत्मा हैं। जब शरीर से आत्मा रूपी पंशी उड़ जाता है तो संसार एवं संसार के सम्बधियों से रिश्ता नाता टूट जाता है।

'परबस' पुतला खाक का नाच नाच गिर जाय।[6]

'पुतला खाक का' का लाक्षणिक अर्थ मनुष्य देह है। नाच नाच कर अर्थात् संसार के काम करते करते यह काया गिर कर नष्ट हो जायेगी।

सारा दिन भटका किया सांझ भयी घर आय।[7]

'सांझ भयी' का लाक्षणिक अर्थ है कि जीवन की संध्या हो गयी है। सारा दिन भटक भटक कर अर्थात् युवावस्था विषय–विकारों में आसक्त होकर गंवा दी, अब अंत में राम नाम का स्मरण कर जीवन सफल करो।

---

१ ज्ञानदीप पृष्ठ ७
२ वही ,, ३४
३ वही ,, ३४
४ वही ,, ९४
५ वही ,, १०२
६ वही ,, ०७
७ वही ,, १५

अर्थालंकार :– कवि शर्मा के काव्य में अर्थालंकारों का भी सुन्दर समावेश हुआ है। उपमा एवं रूपक अलंकारों का अधिक प्रयोग हुआ है। कहीं कहीं उदाहरण अलंकार का भी प्रयोग हुआ है।

उपमा :- जल में जैसे कमल है रहत सदा निर्लेप।
परबस रहिये गेह में लाद नाम को खेप।[1]

कवि यहां साधक को कमल की भांति निर्लिप्त रहने का परामर्श देता है। जैसे कमल जल में पैदा होकर, जल में रहकर निर्लेप रहता है वैसे साधक को जगत् में निर्लिप्त रहकर राम नाम का स्मरण करना चाहिये।

जैसे मछली जल बिना पल भर में मर जाय।
यों परबस हरि भक्त को हरि बिन चैन न आय।[2]

यहां कवि ने हरि भक्त के लिए मछली की, परमात्मा के लिए जल की उपमां दी है। जैसे मछली जल से अलग होने पर मर जाती है उसी प्रकार हरि-भक्त परमात्मा के विछोह में व्याकुल रहते हैं।

ज्यों हंसा मोती चुगे मान सरोवर मांहि।
परबस चुगता हरि भक्त राम नाम मन मांहि।[3]

यहां हरि-भक्त के लिए हँस की, सत्संग के लिए मानसरोवर एवं राम नाम के लिए मोती की उपमा दी गई है। जैसे हंस मानसरोवर में मोती चुगता है वैसे हरि भक्त राम नाम रूपी मोती चुगता है।

रूपक :– परबस मन को बांध ले ज्ञान डोर के साथ।
सुस्थिर मन जब हो गया सब कुछ आया हाथ।[4]

यहां कवि ने ज्ञान रूपी डोर का रूपक प्रस्तुत करते हुए कहते हैं कि मन अत्यंत चंचल है उसको ज्ञान रूपी डोर से बांधने से वह वश में आ जाएगा। मन स्थिर होने से ही आध्यात्मिक सफलता मिल सकेगी।

---

१ ज्ञानदीप पृष्ठ १२
२ वही ,, १३
३ वही ,, २४
४ वही ,, १

पाकर साबुन भक्ति का ले मैला मन धोय ।
मन 'परबस' उज्जवल भयो मिट गये ममता मोह ।।[1]

बुरे संकल्पों एवं अज्ञान रूपी मैल मन पर चढ़ गयी है। भक्ति रूपी साबुन प्राप्त कर ऐसे मैले मन को उज्जवल किया जा सकता है। जब मन उज्जवल हो जायगा तब ममता मोह इत्यादि विकार हट जायेंगे और साक्षी स्वरूप का दर्शन होगा।

दया धर्म का बीज है जीवन खेती मांहि।
परबस इस से फल फले, या सम दूजा नांहि ।।[2]

जीवन रूपी खेत में दया धर्म का बीज बोने से, वह खेत पुष्पित–पलवित होता है।

परब्रस सुख की सेज पर भयी रेन में भोर।
जीवन खेती खात है काल का पंछी चोर।[3]

कवि शर्मा के काव्य में शान्त रस प्रधान है। उनके काव्य पर श्री गुरू ग्रंथ साहब की वाणी एवं संत कबीरदास की वाणी का प्रभाव परिलक्षित है। उनके दार्शनिक विचार एवं साधना पद्धति संत कवियों जैसी है इस लिए उन्हें संत परम्परा के कवियों में बिना झिझक के जोड़ा जा सकता है।

१	ज्ञानदीप	पृष्ठ २३
२	वही	,, २५
३	वही	,, ३५

स्वामी शान्ति प्रकाश महाराज

स्वामी शान्ति प्रकाश महाराज का जन्म सन् १९०७ ई में नारियल–पूर्णिमा के पवित्र पर्व पर सिन्ध प्रदेश के सक्खर जिले के चक गांव में एक प्रतिष्ठित परिवार में हुआ। उनके पिता श्री आसूदोमल पहूजा व्यवसाय करते थे। स्वामीजी के जन्म का नाम श्री खेराजराम था। घर में धार्मिक वातारण था। स्वामीजी की माता उन्हें भक्तों की कथाएँ सुनाया करती थी। तीसरी कक्षा में उत्तीर्ण होते ही बालक खेराज की मंगनी की तैयारी होने लगी। तत्कालीन समय में सिन्ध में बाल–विवाह की प्रथा प्रचलित थी। सगाई के पूर्व ही चेचक से स्वामीजी ने बाह्य चक्षु तो गंवाए परन्तु उनकी आंतरिक आंखे खुल गई। स्वामीजी बाल्यावस्था में ही शान्त स्वरूप थे। बाह्य आंखे गंवाकर भी वे प्रसन्न चित्त रहे और उन्होंने संत नामदेव की भांति कहा:

मैं बउरी मेरा राम भतार।
रचि रचि ता कउ करउ सींगार॥

पूर्व जन्म के शुभ कर्मों एवं इस जन्म के संस्कारों ने स्वामीजी के मन में प्रभु प्राप्ति के लिये तड़प पैदा की। उनके पिताजी का विश्वास था कि संतों की आशीर्वाद से उनके बेटे (स्वामीजी) की आंखों में ज्योति आ सकती है। इस उद्देश्य से वे बालक स्वामीजी को सिन्ध के प्रसिद्ध संत भाई हरचूराम साहब के यहां शाहपुर में ले आये। बालक स्वामीजी भाई हरचूराम एवं अन्य संतों महात्माओं की सेवा करते रहते थे। एक दिन भाई हरचूराम ने उनके

पिताजी से कहा "तुम्हारा ये बेटा महान संत बनेगा।" संतों की भविष्य वाणी सत्य निकली।

स्वामीजी कई संतों महात्माओं के संपर्क में आये। अन्त में उन्हें सिन्ध के महान वेदान्ती संत, ब्रह्मज्ञानी स्वामी टेऊंराम महाराज आध्यात्मिक गुरू के रूप में प्राप्त हुए।

अब स्वामीजी हैदराबाद सिन्ध के गिदूमल संस्कृत पाठशाला में संस्कृत भाषा के अध्ययन के लिये जाने लगे। उन्होंने आध्यात्मिक ज्ञान प्राप्ति के लिये धार्मिक ग्रन्थों का अध्ययन आरंभ किया। सद्गुरु की आज्ञानुसार सत् शास्त्रों का अधिक अभ्यास करने के लिये वे हरिद्वार में गए जहां उन्होंने स्वामी शंकरानन्द से शिक्षा ग्रहण की। श्री गुरु ग्रन्थ साहब के अध्ययन एवं आंतरिक अर्थ उपलब्धि के लिये वे अमृतसर गए।

स्वामीजी अब आध्यात्मिक रंग में लाल हो गए। उन्होंने सिन्ध में नाम रुपी अमृत से कई तृष्तों की प्यास बुझाई। साथ साथ उन्होंने स्वतंत्रता संग्राम में भी सक्रिय भाग लिया। उन पर महात्मा गांधी का प्रभाव पड़ा। वे स्वदेशी वस्तुओं का प्रचार करते और लोगों में देश भक्ति का संचार करते रहे।

स्वामी जी एक कर्मठ समाज सेवक भी हैं। उनके जीवन में भक्ति, ज्ञान एवं कर्म का सुंदर समन्वय है। वे पर पीड़ा को स्वपीड़ा समझते हैं। सन् १९३३ ई में सिन्ध प्रान्त के लाड़काना ज़िला, रुक चक आदि स्थलों पर बाढ़ आई, स्वामीजी स्वयं बाढ़ स्थल पर गए और उन्होंने बाढ़ ग्रस्त लोगों की वहां सेवा की।

स्वामीजी अपने सद्गुरू स्वामी टेऊंराम के साथ उनके स्थान टंडो आदम में रहते थे। स्वामीजी भिन्न भिन्न स्थानों पर आध्यात्मिक, सामाजिक एवं राष्ट्रीय विषयों पर प्रवचन करते थे। वे उच्च कोटि के उपदेशक, गायक एवं कवि भी हैं।

भारत पाक विभाजन के पश्चात् स्वामीजी भव्य भारत भूमि में पधारे और यहां उन्होंने उल्हासनगर में आश्रम की स्थापना की, जहां प्रतिदिन स्वामी जी सत्संग करते हैं। वे हजारों लोगों का मार्गदर्शन कर रहे हैं। उन्होंने जनता में जनार्दन का साक्षात्कार किया है। सन् १९६८ ई. में जब बिहार प्रांत में अकाल पड़ा तो स्वामीजी ने वहां जाकर अकालग्रस्त लोगों की सेवा की। कोइना

में भूकम्प हुआ, सूरत में बाढ़ आई, राजस्थान में सूखा पड़ा। स्वामीजी ने वहां सेवा कार्यारंभ किया, सहायता भेजी। चीन एवं पाकिस्तान ने आक्रमण किया। उस समय भी स्वामीजी ने राष्ट्र रक्षा कोष में योगदान दिया एवं जनता में राष्ट्रीय चेतना फूंकी।

वे 'जनता जनार्दन परिषद्' एवं राधेश्याम गऊशाला के संस्थापक हैं, कई धर्मार्थ सेवा कार्य चला रहे हैं। भारत के भिन्न भिन्न नगरों में वे नाम का संदेश दे रहे हैं, साथ साथ सामाजिक कुप्रथाओं को दूर करने के लिये प्रयत्न कर रहे हैं। उनका व्यक्तित्व प्रतिभासम्पन एवं प्रभावशाली है।

वे प्रौढ विद्वान, ब्रह्मज्ञानी, महान कर्मयोगी, समाज सुधारक, समाज सेवक, भक्त कवि, उजस्वी उपदेशक एवं आध्यात्मिक मार्गदर्शक हैं। उनकी प्रेरणा से भारत के भिन्न भिन्न नगरों में कई सेवा केंद्र चल रहे हैं। अब वे संत स्वामी टेऊंराम महाराज के धर्मपीठ के अधिकारी हैं। प्रस्तुत हैं उनके कुछ संस्मरण।

करूणा की मूर्ति:– स्वामीजी करुणा एवं प्रेम की मूर्ति हैं। वे न केवल मानव मात्र को प्रेम करते हैं परन्तु पशु पक्षियों को भी। वे जहां भी प्रवचन करते हैं, वहां जीव-दया का संदेश देते हैं। प्रेमियों से अनुरोध करते हैं कि मांस–मंदिरा का परित्याग करें, मांस मानवीय आहार नहीं। ये पशु पक्षी प्रभु की मूक संतान हैं। इन पर दया करने से प्रभु हम पर दया करेगा। अगर हम ईश्वरीय अनुकम्पा के इच्छुक हैं तो हमें माँस भक्षण का त्याग कर जीवन में जीव दया की ज्योति जगानी चाहिए।

एक बार स्वामी टेऊंराम प्रेम प्रकाश आश्रम उल्हासनगर में वार्षिक महोत्सव था। भारत के भिन्न भिन्न नगरों से प्रेमी जन आये थे। स्वामीजी को गांधीनगर कोल्हापुर से पत्र आया जिस में एक प्रेमी ने लिखा कि यहां अमुक विवाहोत्सव के उपलक्ष में मांसाहारी भोज होगा। इस मांसाहारी भोज के लिये तीस चालीस बकरियों को मौत के घाट उतारा जायेगा। अगर आप यहां आकर विवाह से सम्बंधित लोगों को समझा देंगे तो चालीस बकरियों को जीव दान मिल जायेगा। वार्षिक महोत्सव के कारण स्वामीजी अत्यंत व्यस्त थे, परन्तु पत्र मिलते ही स्वामीजी ने संध्याकालीन रेलगाडी से गांधीनगर कोल्हापुर के लिये प्रस्थान किया। सबेरे स्वामीजी गांधीनगर पहुंच गये। जिन सज्जनों के

घर में विवाहोत्सव था, वे स्वामीजी का दर्शन पाकर अत्यंत प्रसन्न हुए और कहने लगे– "आज हमारा भाग्य उदय हुआ है कि आप शादी के शुभ अवसर पर पधारे हैं। " स्वामीजी ने कहा "आपके भाग्योदय तो तब होंगे जब आप ऐसे शुभ अवसरों पर सात्त्विक आहार गृहण करेंगे। बेचारी बकरियों को मौत के घाट उतारकर आप कभी भी सुखी नहीं हो सकते। प्रभु की इन मूक संतान पर आप लोग दया करो तो प्रभु आप पर दया करेंगे। मैं इसी ही उद्देश्य से यहां आया हूं। अगर आप मुझे प्रसन्न करना चाहते हैं तो मांस भक्षण का त्याग करो जीवन में जीव दया की ज्योति जगाओ। सब प्राणियों को प्यार पिलाओ।" स्वामीजी का यह मार्मिक उपदेश सुनकर उन सज्जनों ने मांस–भक्षण का परित्याग किया।

काव्य रचना :– भक्ति साधना करते करते जो विचार–तरंगें स्वामीजी के मन में तरंगित हुई हैं, वे काव्य रूप में प्रकट हुई हैं। उन्होंने सिन्धी एवं हिन्दी भाषा में काव्य रचना की है। उनके सिन्धी काव्य का संग्रह 'भजन बहार' प्रकाशित हुआ है। उनके हिन्दी काव्य का संग्रह भजन तरंग अभी तक प्रकाश में नहीं आया। वे संगीत के भी मर्मज्ञ हैं। उन्होंने भिन्न भिन्न भारतीय राग–रागनियों के आधार पर काव्य रचना की है। इनके पदों में लय है, संगीतात्मकता है, वे सीधे हृदय से निकले हैं इस लिये सीधे हृदय में जाते हैं।

गुरू महिमा :– भारतीय संत कवियों की परम्परानुसार स्वामीजी ने भी अपने काव्य में गुरुदेव की महिमा गाई है। उनके मन में गुरु के प्रति अगाध श्रद्धा एवं निष्ठा है, जो उनके काव्य से झर पड़ती है। स्वामी जी ने अपने प्रत्येक पद में अपना नाम प्रयोग न कर अपने सतगुरू स्वामी टेऊंराम का नाम प्रयोग किया है। स्वामीजी गुरू की स्तुति गाते हुए कहते हैं।-

सतगुर कीना कार्ज पुरा,
बहुत जन्म से बिछड़ी हुई सुरति अपने घर से,
दया करके गुर मेल मिलाया हरिया सकल विसूरा।

माया के पटल के कारण जीवात्मा अपने सत् स्वरूप अर्थात् ब्रह्म स्वरूप को भूल गया, उसकी सुरति संसार की ओर थी, गुरू की अनुकम्पा से अज्ञान

अंधेरा मिट नया, जीवात्मा का ब्रह्म से मिलन हुआ, भ्रमों एवं कलेशों का विनाश हुआ।

मछली जैसे जल को चाहे, भौरा चाहे पुष्पन को
भूखा जैसे अन्न को चाहे, गुरमुख चाहे संतन को,
सत्गुर तैसे तुमको चाहूं जैसे ताल मराल को।

उपर्युक्त पंक्तियों में स्वामी शान्ति प्रकाशजी महाराज उपमालंकार द्वारा गुरू के प्रति अपनी श्रद्धा प्रकट करते हुए कहते हैं कि जैसे जल बिन मीन तड़पती है, वह जल की प्यासी होती है, भ्रमर पुष्पों को चाहते हैं, भूखा मनुष्य अन्न का इच्छुक होता है, गुरमुख मनुष्य सन्तों के संग का चाहक होता है उसी प्रकार मैं भी सत्गुरू महाराज के दर्शन का अभिलाषी हूं।

कहे टेऊं गुर से श्रवन कीजे, दूरेपन की भ्रान्ति छीजे,
निकट लखावे मेल मिलावे ऐसे सत्गुर पर बलहारी।

जीव, भ्रान्ति के कारण परमात्मा को अपने से दूर मान बैठा है, जब वह गुरू से ज्ञान की प्राप्ति करेगा तब उसे यथार्थ का भास होगा, अर्थात् जिसे वह दूर समझ बैठा था वह उसे निकट दीख पढ़ता है, और जीव का ब्रह्म से तादातमय हो जाता है। स्वामीजी कहते हैं मैं ऐसे सत्गुरू महाराज पर न्योछावर जाऊं जो मेरा ब्रह्म से तादातमय करवाता है।

दार्शनिक विचार :- स्वामीजी ने ब्रह्म के निर्गुण एवं सगुण रूप दोनों का अपने काव्य में उल्लेख किया है।

ब्रह्म :- कबीर की भांति स्वामीजी ने ब्रह्म के लिए नारायण, राम, कृष्ण, हरि इत्यादि नामों का प्रयोग किया है। वे अत्र तत्र सर्वत्र एक ब्रह्म का साक्षात्कार करते हुए कहते हैं :-

आदि नारायण अन्त नारायण, मध्य नारायण नित नारायण,
इहां नारायण उहां नारायण, नारायण से जीउ जकड़िये।

ब्रह्म अनादि है, अवंचनीय है, सर्वव्यापी है।

मन में मोहन तन में कृष्ण, नस नस में नंदलाल रे।
मालिक बिन घट को ना खाली सभ घट में दुन्या का वाली।

स्वामीजी 'तत् त्वम असि' महावाक्य का निरूपण करते हुए कहते हैं:-

साक्षी बनकर देख तमाशा, हर्ख शोक मत करना।

... ...

खोज रहे जिस पारब्रह्म को सो तो अपना आप तूं ही,
काहे कारण खोजो हरि को जल थल झंगल मध्ये,
तेरे से भिन्न और न को हरि स्मर शिवोहं जाप तू ही।

तुम ही ब्रह्म हो। जिस सत् चित आनंद रूप की तू खोज में हो वह तू स्वयं हो। इस लिए 'सोऽहं' के मन्त्र की साधना करो।

जीवः- स्वामीजी कहते हैं कि जीव अविद्या एवं मोह की नींद के कारण अपने वास्तविक स्वरूप को भूल गया है, जब वह जाग्रत अवस्था में होगा तब उसे साक्षी स्वरूप का साक्षात्कार होगा :–

जागो जागो मेरे मनवा मोह नींद से जागो रे।

जीव अज्ञानवश अपने आत्म स्वरूप को भूल कर ब्रह्म को खोजने के लिए मथुरा द्वारका इत्यादि स्थानों पर जाता है। वे कहते हैं वह परब्रह्म तो हमारे शरीर में व्यापक है, उसे ढूंढने के लिए मथुरा द्वारका जाना व्यर्थ है।

खोज रहे जिस परमेश्वर को दूर नहीं वह पास तुम्हारे,
मोहन मिलने लिए सुजाना मथरा द्वारका धाम न जाना,
मन में मोहन तन में कृष्ण, नस नस में नंदलाल रे।

जीव बहिर्मुखी होकर दुख अनुभव करता है, और स्वयं को ब्रह्म से दूर समझता है। जैसे ही वह अंतर्मुखी होता है, उसे आत्मानंद की उपलब्धि होती है। इस लिये स्वामीजी जीव को अन्तर्मुखी होने का आदेश देते हुए कहते हैं :–

बाहरमुक्ता को मन त्यागो, अन्तरमुख हो जाना रे,
अन्तर मुखिया सदा सुखिया, बाहर मुखिया सदा दुखी,
बाह्य वस्तु बाहर त्यागो, अन्तर सुरत जमाना रे।

जीव इन्द्रिय भोग के चक्र में आकर युगों से जन्मों के चक्र में फिर रहा है।

इन्द्रिय घाट पर बैठ युगों से, बाहर जग को देख रहे,
देखत देखत बहु युग बीते, अब ना अलसाना रे:

जगत् :- जिस प्रकार कोई जादूगर अपनी माया शक्ति के द्वारा विचित्र सृष्टि करने में समर्थ होता है, वही दशा ईश्वर की भी है। जादू उन्हीं लोगों को मोह में डाल सकता है जो उस इन्द्रजाल के रहस्य को नहीं जानते हैं, परन्तु उसके रहस्य जानने वाले पुरुषों के लिये वह इन्द्रजाल मोह का विषय नहीं होता। ठीक इसी प्रकार यह जगत् अद्वैत-तत्त्व ज्ञानियों के लिए उसकी सत्ता निर्मूल है।[1] स्वामीजी जगत् को ब्रह्म रूपी जादूगर का खेल मानते हैं, जिसका कोई अस्तीत्व नहीं, जगत् भी ब्रह्म की मिथ्या माया है :–

जादूगर की मिथ्या माया, देखन मात्र को खग छाया,
ज्यों नट खेला, मार्ग मेला, जानो वैसे जगत् तमाशा।

यह जगत् स्वप्न मात्र है, मरुस्थल समान सत् भासता है, परन्तु है असत् एवं नश्वर। जिस प्रकार मृग मरुस्थल को जलस्थल समझकर दौड़ दौड़ कर मर जाता है, उस प्रकार जीव भी संसार को सत् समझकर संसार के नाना पदार्थों को प्राप्त करने के लिए दौड़ता फिरता है, दौड़ दौड़ कर मर जाता है। चातक भी अज्ञानवश धुएं को मेघ समझकर अपने नेत्रों को गंवाता है जीव भी इस प्रकार असत् जगत् को सत् समझकर अपने पांवों पर आप कुल्हाड़ी मारता है। इस लिए स्वामीजी साधक को सचेत करते हुए कहते हैं:–

ब्रह्म पिपासू उत्तम जज्ञासू, छोड़ जगत् की सगरी आशा,
सपने सम जग मिथ्या जानो मरुस्थल के सलिल समानो,
मृग धावे बूंद न पावे, भटकत दे निज स्वासा।
मेघ मानकर चातक धावे, पड़कर धुएं नैन गंवावे।
कांपत निशि भर रहत उदासा।।

स्वामीजी के इष्ट भगवान श्री कृष्ण हैं। भगवान कृष्ण की अनुकम्पा का उल्लेख करते हुए स्वामीजी कहते हैं :–

---

१ भारतीय दर्शन पंडित बलदेव उपाध्याय पृष्ठ ५६४

कृष्ण भजन से जो कछु मिलिया सब को सो बतलाता हूं।
बहुत जन्म से पीते आए दूध माता की गोदी में,
ऐसी चाल चली श्री कृष्ण दूध नहीं वह पीता हूं।
दासोहम् यह मंत्र गुर का रैन दिवस मैं रटना था,
माखन चोर ने दा हर लीनी, दा बिन अब तो गाता हूं।
चौरासी लख योनि नगर में, फिर फिर चक्र लगाते थे,
कर्मन का धन खोइ लिया हरि, अब तो वहां न जाता हुं।
बहुत कल्प से कृष्ण मेरा झगड़ा चलता आता था,
कहे टेऊं गुर ऐसे कीने अलग नजर नहीं आता हूं।

कवि के अन्तःकरण में श्री कृष्ण के प्रति इतना तो अनुराग ऊत्पन्न हुआ कि वे श्रीकृष्ण का साक्षात्कार कर जीवन मुक्त हो हो गए अब उन्हें माता के दूध पीने की आवश्यकता नहीं अर्थात् अब वे जन्म मरण के चक्र में नहीं आएंगे। कवि कहते हैं कि वे साधनावस्था में दासोहं के मंत्र का जाप करते थे, अर्थात् स्वयं को कृष्ण का दास मानकर विनती करते थे अब भगवान कृष्ण ने कृपा कर दा उनसे हर ली इस लिए कवि अब सोऽहं का मंत्र साधते हैं, अर्थात् वह मैं ही हूं।

जै श्री कृश्ण बोल प्यारे।
भवसागर से बेड़ा तेरा पल में पार उतारे।
जै श्री कृष्ण पांच वरण का मन्त्र बड़ा उत्तम है,
गुर कृपा से जिसको मिलिया तिसके दूख निवारे।

कलिकाल में नाम का अधिक महत्त्व है। स्वामीजी कहते हैं जय श्री कृष्ण' का यह मन्त्र सर्वोत्तम है, इस मन्त्र की साधना करने से जीव संसार रूपी भवसागर से पार उत्तर जायगा। जिसको यह मन्त्र गुरू कृपा से मिलता है उसके सभी कष्ट दुःख दूर हो जाते हैं।

प्रभाव – स्वामीजी नाथ सम्प्रदाय एवं सगुण सम्प्रदाय से प्रभावित दीख पड़ते हैं। उन पर कबीर व सूरदास का प्रभाव विशेषकर है।

नाथ सम्प्रदाय का प्रभाव - हठ योग की साधना में साधक समाधि लगाकर अपनी सुरति शब्द अर्थात् गुरु मंत्र के साथ जोड़कर आनंदावस्था में मग्न रहता है।

सुरति शब्द मिल पवन कला से अपने घर में आई,
निति बासर वहां करे कीड़ा– पाय सुख भरपूरा।

मेरु दशा में प्राण वायु को वहन करने वाली कई नाड़ियां हैं जिन में से कुछ का आभास हम सांस लेते समय पाते हैं। जो नाड़ी बाईं ओर है उसे इड़ा और जो दाहिनी ओर है उसे पिंगला कहते हैं। मौजी कबीर ने अनुप्रास मिलाने के लिए इनकी जोड़ी का नाम 'इंगला–पिंगला बना लिया था।[1] स्वामीजी ने भी कबीर की भांति इंगला पिंगला का वर्णन किया है।

इंगला पिंगला सुख मन अंदर, स्मरो सोऽहं निरंतर,
प्रान अपान की मुक्ति लेकर स्वास उठाओ नासन से।

योग साधना द्वारा आनंद की उपलब्धि का उल्लेख करते हुए स्वामीजी कहते हैं —

भवन चतुर्दश आनंदछाय, लागे देन बधाई,
आए कमल पुनि दशमें द्वारे- बाजे अनहद तूरा।

योगी के नादासक्त चित्त का चित्रण प्रस्तुत करते हुए स्वामीजी अनाहत आवाज की चर्चा करते हैं :–

घट अंदर नित घंटा बाजे, अति सूक्ष्म अति मीठा रे।
अंतर्मुख हो तांको सुनते, चलना प्रिय मकाना रे।
कहे टेंऊं हरि रंग महल में, बहु विधि बाजे बाज रहे।
योगी सुन सुन आनंद पावहिं गुर बिन होय न ज्ञाना रे।

राम नाम की महिमा :– स्वामीजी राम नाम की महिमा वर्णन करते हुए कहते हैं, इस भवसागर से पार जाने के लिए राम नाम के स्मरण के बिना कोई दूसरा साधन नहीं। स्वामीजी ने यद्यपि योग मार्ग का उल्लेख अपने काव्य में किया है तदापि उन्होंने नाम स्मरण को अधिक महत्त्व दिया है।

राम नाम का स्मरण कीजै, जाते होइ उध्दारा,
राम नाम सम और न साधन, भव से तारन हारा।

स्वामीजी के राम धनुर्धारी राम हैं। उन्होंने परब्रह्म के लिए भी राम शब्द का प्रयोग किया है।

---

१ कबीर डॉ. हजारीप्रसाद द्विवेदी पृष्ठ ४५

स्वामीजी राम नाम के स्मरण का आदेश देते हुए कहते हैं :–

बंदा राम नाम मुख बोल रे तेरा लागे कछु ना मोल।

भजन की महत्ता :– भजन की महत्ता दृशाते हुए स्वामीजी कहते हैं भजन द्वारा जीव प्रभु का साक्षात्कार कर सकता है, जीवन मुक्त हो सकता है।

भजन हरि का हरि से मेले, यम से दे छुटकारा।
भजन की परिभाषा देते हुए स्वामीजी कहते हैं :–

भजन नाम है चित चिन्तन का।

ब्रह्म का चिन्तन ही भजन है।

भगवद् भजन विना जीव इस संसार रूपी भवसागर से पार नहीं हो सकता।

रेती से भले घृत निकाले, बांझ पुत्र भले ऊपजे,
भजन बिना नर तरे न भव से, तुलसीदास परमानी।

संसार के जितने भी व्यापार हैं वे झूठे हैं, भगवद् भजन रूपी व्यापार ही साचा है :–

भजन हरि का करो प्राणी, हरि भजन है साचा जग में।

कलियुग में प्रभु प्राप्ति का सुगम साधन भजन है :–

बंदा भजन करो भगवान का यह मार्ग है कल्याण का,
कलिकाल में पार तरण को सुगम यत्न है हरि स्मरण को,
यह कहना वेद पुरान का।

हरि सेवा एवं हरि स्मरण ही सत्कर्म हैं, इस लिए जीव को भ्रम एवं चिन्ताओं का परित्याग कर प्रभु स्मरण में पृवर्त्त होना चाहिए।

काम जगत् में काम न आए, काम सच्चा हरि सेवा,
कहे टेऊं हरि भजन करो नित छोड़ फिक्र सब फंदा।

सोऽहम् का जाप :– कवि 'सोऽहम्' मन्त्र की साधना पर बल देते हुए कहते हैं :–

रे मन मेरे सोहम् रटले,
स्वास स्वास से सोहम् रटकर, जग के बंधन कटले।
जितने मन्त्र मुक्ति के हैं, इकते दूजे ऊंचे,
सब से ऊंचा सोहम् मन्त्र महा बीज सो समझले।
ब्रह्म ज्ञानिन की सहजे भाषा, सोहं सोहम् जानो,
जीवन मुक्ति आनंद पावहिं ताते उर में रटले।

मुक्ति प्राप्ति के लिए जितने भी मन्त्रों की साधना की जाती है, कवि कहते है उन सब मन्त्रों में 'सोऽहम' का मन्त्र सर्वोत्तम सर्वोपर है। ब्रह्म ज्ञानी तो निश दिन इसी मन्त्र का जाप करते हैं। यह मन्त्र आनंद एवं जीवन मुक्ति प्रदान करता है।

सत्संगः– ज्ञानोपार्जन के लिए सत्संग अर्थात् संतों के संग की आवश्यकता है। स्वामीजी सत्संग की महिमा गाते हुए कहते हैं :-

अमृत वेला अमृत बरसे भर भर प्याला पीजे जी
साध संगति में वचन सुधा के साधु बरसा करते जी,
चलकर वहां अमृत पीजे, पीकर युय युग जीयो जी।

सत्संग में संत जन अमृत रूपी वचनों की वर्षा करते हैं। वहां जाकर अमृत रूपी वचनों का श्रवण करने से आध्यात्मिक ज्ञान की वृद्धि कर सकते हैं।

मनुष्य देह का महत्त्व :- स्वामीजी मनुष्य-देह का महत्त्व बखानते हुए कहते हैं।

हरि मंदिर में हरि बिराजे, ता में नित दीदार करो,
मानुष तन ही हरि मंदिर है, महिमा जाकी वेद कहे,
चतुर पदार्थ का यह केंद्र तांका तुम सत्कार करो।
परम मनोहर हरि मंदिर यह नित ही तेरे साथ रहे,
दूर गमन की नहीं जरूरत अपने पर ऐतिबार करो।

मनुष्य की देह प्रभु का पवित्र मंदिर है, मनुष्य जन्म में ही जो चारों पदार्थ धर्म, अर्थ, काम मोक्ष की प्राप्ति हो सकती है। हम इस मानव–जीवन का मूल्यांकन नहीं करते। परम मनोहर प्रियतम को ढूंढने के लिए

बहिर्मुखी होने की आवश्यकता नहीं। प्रभु तो हमारे मन मंदिर में व्यापक हैं। स्वास स्वास में उनका स्मरण कर उनका साक्षात्कार करें।

ब्रह्म नगर यह मानस तन है, जाकी आसा देव करे।
ब्रह्म मिले इस नगरी माहीं, बात कही मैं सत् सत् रे।
चौरासी लाख योनियों अंदर ब्रह्म ज्ञान न होय कहीं,
जैसे पुष्प हिमाचल ऊपर, होंवे ना कब उत्पति रे।

देवता भी मनुष्य जन्म के इच्छुक होते हैं, क्यों कि इस मनुष्य योनि में ही ब्रह्म ज्ञान की उपलब्धि हो सकती है। अगर मनुष्य इस मनुष्य योनि में जाग्रत न होकर विषय वासनाओं में फंसा रहेगा तो उसे चौरासी लाख योनियों में चक्र काटने पड़ेंगे।

काव्य कला :– स्वामी शान्ति प्रकाशजी काव्य कला के प्रति संलग्न नहीं हैं, फिर भी कुछ काव्य कलात्मक विशेषताएं इनके काव्य में हैं, वे मूलत: संत हैं और उनका भक्ति काव्य उनकी भक्ति साधना की उपज है। इनके काव्य में वर्ण मैत्री, वर्ण-संगति, छेकानुप्रास उपमालंकार, रूपक अलंकार मुहावरों आदि का श्लाघनीय प्रयोग हुआ है।

वर्ण मैत्री :- जा पर तेरा हाथ बिराजे, लाज काज तिस संवरे साजे।
सुख दुख रचना प्रभ की है हरि आज्ञा में रहिये।
उलट सुलट कर सोहं जपलो...

यहां लाज काज, सुख-दुख, उलट–सुलट वर्ण मैत्री के उदाहरण हैं।

वर्ण संगति :– स्वास स्वास में सोहं रटकर यम के बंधन काट ले।
मन में मोहन तन में मोहन नस नस में नंदलाल रे :
बंदा राम राम मुख बोल रे तेरा लागे कछु न मोल रे।

यहां स्वास–स्वास, नस-नस, राम–राम वर्ण संगति के उदाहरण हैं।

छेकानुप्रास :– काम क्रोध मद लोभ मोह पुनि मत्सर ममता माया।
कंचन कीर्ति काया कामनि ये हैं शत्रु जन के।
सोहं सोहं स्मरो साधो सुरति लगाकर स्वासन से।

उपर्युक्त काव्य-पंक्तियों में छेकानुप्रास का अच्छा प्रयोग हुआ है।

वृत्यानुप्रास :– सुरति शब्द मिल पवन कला से अपने घर में आई।
आत्म कांक्षी आत्म के हित आत्म का अभ्यास करो।

यहाँ सुरति शब्द, मिल पवन, अपने घर, आत्म कांक्षी आत्म के, आत्मा का अभ्यास वृत्यानुप्रास के उदाहरण हैं।

उपमालंकार :– सपने सम जग मिथ्या जानो,
मरु स्थल के सलिल समानो।

यह जगत् स्वप्न एवं मरु स्थल के जल समान मिथ्या है।

रूपक अलंकार :- शान्ति वधु से भई सगाई ज्ञान पुत्र वर पाया।
तिस प्रतापे मुक्त भये हम, होया वंश विकासा।

शान्नि रूपी वधु से विवाह हुआ और जिस से ज्ञान रूपी पुत्र की प्राप्ति हुई और आत्म ज्ञान के कारण मुक्ति की उपलब्धि हुई।

धीरज रूपी नौका चढ़कर भव सागर से तरना।

कवि धीरज रूपी नौका में चढ़कर संसार रूपी भव सागर से तरने का परामर्श देते हैं।

सत्गुर ने यहां जग में आकर- खोली बड़ी दुकान रे।
सत्संग रूपी हाट निकाला तामें वस्तु नाना रे।
कर्म, उपासना, योग समाधि, ज्ञान ध्यान विज्ञान रे।

सत्गुरू ने संसार में सत्संग रूपी दुकान खोली है, जहां से कर्म, उपासना, योग समाधि, ध्यान, ज्ञान विज्ञान रूपी वस्तुएं उपलब्ध हो सकती हैं।

मुहावरे :- चक्र शुरू से चलता रहता किस के पल्ले न पड़ना।
दुख देख कर ना घबराना सुख में फूल न जाना।

स्वामी जी के काव्य में शान्त रस प्रधान है। उनके काव्य में संगीतात्मकता है, भाषा सरल एव सरस है।

स्वामी केवलराम

स्वामी केवलराम का जन्म सन् १९०८ ई, में हैदराबाद सिन्ध में श्री परमानंद गोपालदास डासवाणी के घर में हुआ। श्री केवलराम के पिता श्री परमानंद एवं माता खुशहाली बाई भक्त जन एवं संत सेवी थे। घर के भक्तिमय वातावरण का बालक केवलराम पर बड़ा प्रभाव पड़ा। विद्यार्थी जीवन में ही अन्य विद्यार्थियों की भांति उनका मन खेल कूद में नहीं लगता था। उनके घर में नियम पूर्वक श्रीमद् भगवद् गीता एवं रामायण पढ़ा जाता था, केवलराम बड़ी श्रद्धा के साथ श्रवण करते थे। जब वे १२ वर्ष के थे तब उनकी मां संसार से चल बसी और दो वर्ष के पश्चात् पूज्य पिताजी भी ब्रह्मलीन हुए।

जगत् की नश्वरता का अनुभव कर श्री केवलराम के मन में वैराग्य वृत्ति उत्पन्न हुई। अब वे घर में अकेले रहते थे। उनके सम्बंधियो ने उन्हें अपने पास रहने का आग्रह किया किन्तु वे न माने। हैदराबाद के ब्राह्मण श्री गोपालदास जी ने उनका पालन पोषण किया और उन्हें शिक्षा दीक्षा दी। अब उनके मन में वैराग्य का बीज विकसित हुआ। अचानक वे सांसारिक सम्बंधों का परित्याग कर तीर्थयात्रा करने गये। तीर्थयात्रा करते उन्हें एक मित्र मिले, वे श्री केवलरामजी को विनंती कर टंडे महमदखान ले आये। कुछ दिनों के बाद उस मित्र ने श्री केवलराम को शादी कराने की तय की। जब श्री केवलराम को यह ज्ञात हुआ तब वे उनके घर का भी त्याग कर स्वामी केशवराम के यहां आये और ऊन्हें अपने मन की व्यथा सुनाई। अब केवलराम संत स्वामी

केशवराम की सेवा में समर्पित रहे। उनसे उन्होंने आध्यात्मिक दीक्षा ली और सत् शास्त्रों का अनुशीलन किया। सिन्ध के प्रसिद्ध कर्मयोगी संत स्वामी लीलाशाह ने भी श्री केवलराम पर कृपा दृष्टि की। श्री केशवराम ने योग साधना भी की। अब केवलराम एक साधक से संत हो गये। देश के विभाजन के बाद वे बम्बई मे आकर बसे। शांताक्रूझ में उनका आश्रम हैं। १३ मार्च सन् १९७६ ई. में वे ब्रह्मलीन हुए। उन्होंने कई साधकों एवं प्रभु प्रेमियों का पथ–प्रदर्शन किया।

काव्य रचना :– स्वामी केवलराम संत के साथ साथ एक साहित्यकार भी थे। उन्होंने गद्य एवं पद्य की लग भग २५ पुस्तकें लिखी हैं। भक्ति साधना करते हुए उन्होंने काव्य साधना भी की। उन्होंने सिन्धी भाषा में काव्य रचना की है, कुछ पद एवं अधिकतर दोहे हिन्दी भाषा में भी लिखे हैं।

गुरू महिमा :– कवि केवलराम गुरू की स्तुति गाते हुए कहते हैं कि गुरू की अनुकम्पा से ही अज्ञान रूपी ताला टूटा और मैं आनंद में ओतप्रोत होकर कृतार्थ हुआ।

टूट गया जब अविद्या ताला, हुआ जग से निराला रे।
गुर कृपा ते भए निराला– केवल सदा सुखाला रे।[1]

गुरू मंत्र की महत्ता प्रतिपादित करते हुए कवि कहते हैं कि संतों के वचनों पर विश्वास कर, श्रद्धा व विश्वास के साथ गुरु मंत्र की साधना करने से ज़ीव आवागमन से मुक्त होकर दिव्य आनंद को प्राप्त करता है। कवि के मूल शब्दों में :–

संत वचन विश्वास कर– गुरमत शब्द कमाइ।
केवल मुक्ति सुख मिले– जन्म मरण मिट जाइ।[2]

जो मनुष्य निष्ठा के साथ गुरु की सेवा एवं उपासना करता है, उसे सुख सम्पति की प्राप्ति होती है और उसके कार्य निर्विघ्न संपन्न होते हैं।

गुर पूजा सेवा जो करे, प्रेम सें चित लाइ।
केवल सुख सम्पति मिले, कार्ज सफल हो जाइ॥[3]

---

१ दरवेशन जूं दांहूं संत केवलराम पृष्ठ ४३
२ वही ,, २
३ वही ,, २

कवि कहते हैं कि गुरु ने ही मेरे बिगड़े हुए कामों को बनाया, उन्होंने ही मेरे दुखों का निवारण किया। वे समर्थ हैं, ऐसे गुरू पर बार बार न्योछावर हो जाऊं।

जय जय कार भया जग भीतर, सगले दूख निवारे,
समर्थ स्वामी सब सुख दाता दया दीनों पर धारे।
शरन पड़े की लाज रखे, और बिगड़े कारज संवारे,
केवल ऐसा गुरु कृपालू हर हर जाऊं बलहारे।[1]

दार्शनिक विचार:- कवि केवलराम के काव्य में कुछ दार्शनिक विचार भी व्यक्त हुए हैं। जीव अज्ञान आवरण के कारण आत्मस्वरूप को भूल जाता है। कवि जीव को परामर्श देते हैं कि तू ज्ञान द्वारा आत्म साक्षात्कार करो और अभिमान का त्याग करो।

ज्ञान से आत्म सरूप जानो, दूर करो अभिमान।[2]

कवि जीव को जाग्रत करते हुए कहते हैं कि तू स्वयं को देह मत समझो, तू तो साक्षी चेतन है। माया में मग्न होकर स्वयं को मत भूलो।

तेरा तो कुछ बिगड़े नाहीं, साक्षी चेतन तू हो भाई,
मिथ्या माया में क्यों, हो गया गलतान।[3]

जीव परमानंद को छोड़ कर विषय वासना के पीछे दौड़ता है, सत्य का परित्याग कर वह असत्य के पीछे भटकता है।

अनभै अमर आनंद छोड़ काहे विषय सुख लेते हैं,
सुख का सागर भूल गया तुम बूंद के पीछे भटक रहा,
सत्य सरूप छोड़ दिया है, झूठ के पीछे अटक रहा।[4]

१	दरवेशन जूं दाहूं (काव्य)	पृष्ठ ५
२	वही	,, २०
३	वही	,, ४३
४	वही	६०

संतों की महिमा :- कवि केवलराम संतों के गुण गान करते हुए कहते हैं कि संतों के वचन अमूल्य हीरे जवाहरों के सदृश हैं, उनको धारण करने से अर्थात् उन वचनों को हृदयंगम करने से जीव को आध्यात्मिक आनंद की उपलब्धि होती है।

संत वचन हीरा परखे परख सचार।
केवल हृदे धार के, आनंद पाइ अपार।[1]

संतों के वचन गंगा–जल तुल्य शीतलता प्रदान करते हैं। तीनों तापों को, हर तनाव को दूर करते हैं।

संत वचन गंगा ज्यों, तन मन सींतल होइ।
ताप मिटे दर्द सब केवल कलहल खोइ।[2]

संतों का संग आनंद–प्रद है। संतों का संग करने से जीव आवागमन से विमुक्त हो जाता है। कवि केवलराम के मूल शब्दों में।

संत सज्जन सुखदाई सभके, संत सज्जन सुखदाई।
जन्म जन्म के दूख निवारे, काटे जम की फाई।[3]

कला पक्षः- कवि केबलराम का काव्य कला पक्ष सबल नहीं। कहीं कहीं छेकानुप्रास एवं रूपक अलंकार का प्रयोग हुआ है।

---

१ दरवेशन जूं दांहूं पृष्ठ २
२ वही ,, २
३ वही ,, ४२

पंडित शीतलदास

पंडित शीतलदास का जन्म सन् १९०८ ई में हैदराबाद सिन्ध के मेहड़ गांव में श्री मंघाराम देवजानी लोहाणा के घर में हुआ। उन्होंने हैदराबाद के ऋषि दयाराम गिदूमल पाठशाला में संस्कृत का अध्ययन किया। उन्होंने स्वामी ग्वालानन्द महाराज से गुरु–मंत्र लेकर आध्यत्मिक पथ पर चलने का प्रयास किया। उन्होंने श्रीमद् भगवद् गीता का गहन अनुशीलन किया; साथ साथ सत् शास्त्रों का भी अध्ययन किया। वे भगवान श्री कृष्ण के अनन्य उपासक हैं। स्वामी टेऊंराम महाराज एवं स्वामी ग्वालानन्द महाराज की आशीर्वाद से उन्होंने श्रीमद् भगवद् गीता एवं वेदान्त का प्रचार किया। वे स्वामी ग्वालानन्द महाराज के मुख्य शिष्यों में से एक हैं। वे कवि के साथ साथ गायक भी हैं। देश विभाजन के बाद उन्होंने अजमेर राजस्थान में गीता मंदिर की स्थापना की; जहां वे प्रति वर्ष गीता जयन्ती बड़े पैमाने पर मनाते हैं। पंडित शीतलदास ने सिन्धी एवं हिन्दी में काव्य रचना की है। उन्होंने हिन्दी में गद्य–पद्य में 'संक्षिप्त अमरलाल कथा' लिखी है। प्रस्तुत है उनके स्फुट हिन्दी पदों का विवेचनः–

दार्शनिक विचारः– कवि शीतलदास निर्गुण एवं सगुण ब्रह्म का अपने काव्य में उल्लेख करते हैं। ब्रह्म सर्वव्यापक है, अन्तर्यामी है, साक्षी चेतन है। कवि के मूल शब्दों मेंः–

सर्वव्यापक अंतर्यामी सब उर वासी सुंदर स्वामी।
तू ही है साक्षी चेतन घन करते है वेद यूं वर्णन [1]॥

---

१ शीतल भजन माला ४ पृष्ठ १

जीव स्वयं ब्रह्म है, किन्तु अज्ञान के कारण वह स्वयं को देह मान बैठा है। कवि जीव को जागृत करते हुए कहते हैं:-

यह देह बाल युवा बन कर बूढ़ी हो जाए;
तू तो शुध्द ब्रह्म वित इक रस कहलाए।
तू तो असंग आत्मा है सदा सुखकारी [1]॥

कवि ब्रह्म के निर्गुण रूप भगवान श्री कृष्णचन्द्र का उल्लेख करते हुए कहते हैं:-

जय कृष्ण भगवान स्वामी जय कृष्ण भगवान।
दुष्टन के तुम नाशक हो और भक्तन के हितवान॥[2]

कवि श्री कृष्ण की छवि एवं लीला का वर्णन करते हुए कहते हैं:-

मोर मुकट तो शिर पै सोहै कुंडल सोहै कान।
माल बैजन्ती गल में सोहै मुख में है मुस्कान॥
मुरली मनोहर मुख में तेरे बाजे माधुरी तान।
नाचन तुम्हारा ऐसा है जो करत सबन मस्तान।
वृन्दावन में रास रचाए किये केल महान।
माखन खाया चीर चुराया गऊ धन गए चरान॥
पूतना राकसि विष कों लेकर आई कराने पान।
तिसको मार गिराया क्षण में काढ़ियो तिसका प्रान॥
काली नाग जो यमुना में था तिसका किया दबान।
नाक में डोरी तिसको डाली, ऊपर किया नचान॥
भूमासुर पाताल के मांही जिसका किया निशान।
सर्व सखियों को साथ में लेके दिया अपना दान।
जरासिधांदो दैत्य संधारे किया कंस को क्षान।
उग्रसेन जो बंधन में था तिसका किया छुड़ान।[3]

कवि भगवान कृष्ण के अनन्य उपासक हैं, वे उनके विरह में व्यथित हैं। वे अपनी विरहव्यथा का वर्णन करते हुए कहते हैं:-

---

१ शीतल भजन माला ४ — पृष्ठ ४
२ गीता महिमा के भजन — पृष्ठ ३७
३ वही — पृष्ठ ३७

जैसे मछली बिन पानी के तड़प मर जाती है,
बिन चन्दा के कुमोदिनी जैसे मुरझाती है,
तैसे मोहन जीवन मेरा! बिन मोहन मर जाऊं!
मरने तक भी नाम मोहन का मैं ना छोड़ूंगा।
श्याम चरण में नेह लगाकर मैं ना तोड़ूंगा ॥[१]

कवि शीतलदास न केवल भगवान श्री कृष्ण के अनन्य भक्त हैं किन्तु भगवान कृष्ण के मुख से निकली हुई वाणी 'श्रीमद् भगवद् गीता' के भी अत्यंत श्रध्दालु हैं। वे श्रीमद् भगवद् गीता की विशेषताओं का वर्णन करते हुए कहते हैं :-

गीता माता हरि चरणों में पूर्ण प्रेम बढ़ाती है,
ममता मोह मिटाती है समता त्याग सिखाती है।
राग द्वेष भगाती है, अनुभव ज्योति जगाती है,
जो जन गान करे गीता का पावै पद निर्वानी।
सब शास्त्रों की शिरमोर बनी जो श्रुतियों की है रानी।[२]

कवि कहते हैं कि अंत समय में भी श्रीमद् भगवद् गीता के ज्ञान में चित् स्थित रहे और श्री कृष्ण का ध्यान करते करते 'ओम' का मंत्र जपते जपते प्राण पक्षी उड़ जाय। कवि के मूल शब्दों में:-

मन में गीता ज्ञान रहे, श्री कृष्ण का ध्यान रहे।
ॐ ॐ का गान रहे तब ही स्वास सिधारे॥[३]

उडेरोलाल की स्तुतिः- पं शीतलदासने सिन्ध के अवतार पुरुष श्री उडेरोलाल की संक्षिप्त जीवन कथा लिखी है।

ग्यारहवीं शती में सिन्ध में मुस्लमानों ने बहुत अत्याचार किये। तत्कालीन मरख बादशाह अपनी तलवार के बल पर हिन्दुओं का धर्म परिवर्तन कर उन्हें मुस्लमान बनाना चाहते थे। मरख ने हिन्दुओं पर असहनीय अत्याचार किये।

१ शीतल भजन माला — पृष्ठ १८
२ गीता महिमा के भजन — पृष्ठ ५
३ वही — पृष्ठ ९

हिन्दुओं ने धर्म रक्षा के लिए प्रभु को पुकारा। प्रभु ने पुकार सुनी, अधर्मियों के विनाश के लिए सिन्ध के नसरपुर नगर में प्रभु उडेरोलाल के रूप में अवतरित हुए।

कवि उडेरोलाल के जन्म समय का चित्रण प्रस्तुत करते हुए कहते हैं:-

आज रतन घर आनंद होया, आया उदय चन्द सांइयां।
नर नारी मिल नगर के सारे, देन लगे बाधाइयां।।
नसरपुर की गली गली में कीच 'इत्र की ते गई।
शीतल मन्द सुगन्ध है पावन दशों दिशा सजाइयां।।[1]

कवि उडेरोलाल की स्तुति गाते हुए कहते हैं:-

नमस्कार गुरदेव स्वामी, सर्वव्यापी अन्तर्यामी।
गुरू दरियाह परम सुख सागर, श्री अमरलाल रत्नागर।।[2]

तू ही उडेरा तू रतनाणी, तू ही अमर सब सुख खानी।
धर्म हेतु प्रभु जुग जुग आते, आकर धर्म की नीति निभाते।।[3]

कला पक्ष:- कवि शीतलदास के स्फुट पदों मे वर्ण मैत्री, वर्ण संगति, छेकानुप्रास उपमा एवं रूपक का कहीं कहीं प्रयोग हुआ है।

---

१ अमरलाल कथा पृष्ठ ८-९
२ वही पृष्ठ २२
३ वही पृष्ठ २६

कवि साबलदास

श्री सबलदास का जन्म सिन्ध प्रदेश के सुलतानकोट नगर में सन् १९०८ ई में श्री नेभनदास के घर में हुआ। प्राथमिक शिक्षा के बाद वे पिताजी के साथ धंधे व्यवसाय में जुट गये। उनका विवाह भी किया गया। सन् १९६५ में उनके भाग्य उदय हुए कि उन्हें योगीराज स्वामी परमानंद महाराज आध्यात्मिक गुरु के रूपमें प्राप्त हुए। गुरु की कृपा के कारण उनकी वृत्ति सद्कर्म एवं स्मरण में लग गई। सन् १९५० ई से वे व्यवहार का त्याग कर अपने गुरु स्वामी परमानंद के साथ परमार्थ में जीवन व्यतीत कर रहे हैं। वे अच्छे गायक भी हैं, भगवद् भजन गाते हैं। जहां उनके गुरु स्वामी परमानंद का प्रवचन होता है वहां वे भी उनके साथ संकीर्तन में भाग लेते हैं।

काव्य रचनाः– गुरु के संग में भक्ति साधना करते करते श्री साबलदासजी ने सिन्धी एवं हिन्दी भाषा में कुछ भजन लिखे हैं। इनके भजन "सतगुरु सार वचन एें सत् उपदेश" पुस्तक में संग्रहीत हैं।

गुरु महिमाः– श्री साबलदासजी के मन में अपने गरु स्वामी परमानंद के प्रति अगाध श्रध्दा है। वे गुरुदेव के गुणों का गान गाते हुए कहते हैं कि गुरु ब्रह्म रूप हैं , सत् चित आनंद रूप हैं। ब्रह्म की भांति वे भी अचल अखंड सुखमेव हैं। कवि के मूल शब्दों में–

सत्गुर साक्षी ब्रह्म सरूप सत् चित् आनंद ज्ञान सरूप,
अचल अखंड सदा सुख मेव, जय गुरुदेव, जय गुरुदेव।[1]

कवि गुरु को ही पूर्ण परमेश्वर मानते हैं। उनके लिए गुरु ही ब्रह्मा विष्णु महेश हैं। उनके अनुसार गुरु ने उन्हें आवागमन से मुक्त किया है। वे कहते हैं:–

सत्गुर ब्रह्मा विश्नु शंकर पूरन परमेश्वर,
काटे जन्म मरण के भेव, जय गुरुदेव जय गुरुदेव।[2]

---

१ सत्गुरु सार वचन एें सत् उपदेश — पृष्ठ ३६१
२ वही — पृष्ठ ३६१

कवि गुरु के चरन-कमलों की सेवा करने के लिए इच्छुक हैं। वे गुरदेव से प्रार्थना करते हुए कहते हैं:-

सर्वव्यापक अंतरयामी सच्दानंद प्रभु सब के स्वामी,
देओ चरन कमल की शेव, जय गुरुदेव जय गुरुदेव।[१]

दार्शनिक विचार:- कवि साबलदासजी ने काव्य में दार्शनिक विचार भी व्यक्त किये हैं। उनकी दार्शनिक मान्यता है कि सत्गुरु ही साक्षी ब्रह्म स्वरूप है, वह परिपूर्ण है और सब जगह विद्यमान है।

सत्गुर साक्षी ब्रह्म सरूप यह अचर्ज खेल दिखाया।
सत् चित परमानंद परिपूरन सब घट आप समाया॥[२]

कवि एक ओर गुरु को ब्रह्म-रूप मानते हैं, और दूसरी ओर जीव को 'अयमात्मा' "मैं आत्मा हूं, ब्रह्म हूं" कहने का परामर्श देते हैं।

अयम् आत्मा का डमरू बजाओ।[३]

जीव स्वयं को देह रूप समझ बैठा है, यह उसका अज्ञान है, यह देह तो पांच तत्वों से बनी हुई है और क्षणभंगुर है, इस देह में जो ज्योति आत्मा विद्यमान है तू वह आत्मा है।

पांच भूत की देह तुम्हारी, क्षणभंगुर नश्वर दुखकारी,
इस में आत्म ज्योति नियारी।[४]

कवि के अनुसार यह जगत् स्वपन सम मिथ्या है।

यह संसार सपन की माया, जूठी काया बादल छाया।
इस में मूर्ख क्यों भ्रमाया, क्या इस का ऐतिबार।
नश्वर सब संसार॥[५]

कवि के अनुसार गुरु-मंत्र की साधना द्वारा मुक्ति सम्भव है।

गुरु शब्द 'सोऽहम्' गाते चलो, मुक्ति का मार्ग बनाते चलो।[६]

---

१ सत्गुरु सार वचन एें सत् उपदेश — पृष्ठ ३४९
२ वही — पृष्ठ ३५६
३ वही — पृष्ठ ३५५
४ वही — पृष्ठ ३५३
५ वही — पृष्ठ ३५३
६ वही — पृष्ठ ३५४

कवि हूंदराज दुखायल

राष्ट्रीय कवि हूंदराज दुखायल का जन्म सिन्ध के ऐतिहासिक नगर लाड़काना में १६ जनवरी सन् १९१० ई में श्री लीलाराम माण्क के घर में हुआ। प्राथमिक शिक्षा के पश्चात् बचपन में ही सन् १९२१ में उन्होंने राष्ट्रीय आंदोलन में भाग लिया। साथ साथ आर्य समाज में भी भाग लेने लगे। सात वर्ष की उल्पायु में वे गीत गुनगुनाते थे। सन् १९२३ में वे सिन्धी के प्रतिनिधि कवि किशनचन्द 'बेवस' के सम्पर्क में आये। सन् १९२३ में उनके भक्ति गीतों का प्रथम संग्रह 'कृष्ण भजनावली' प्रकाशित हुआ। फिर सन् १९२६ में आर्य 'भजनावली' प्रकाशित हुआ। वे नाटक मंडली में भी भाग लेने लगे। सन् १९३० में उन्होंने 'हनुमान' साप्ताहिक सिन्धी का सम्पादन किया। इस पत्रिका में राष्ट्रीय आंदोलन सम्बंधी लेख होते थे। अंग्रेज़ सरकार ने इस पत्र पर प्रतिबंध डाला और श्री दुखायल पर मुकदमा चलाया गया। इसके परिणाम स्वरूप उन्हें दो बार जेल यात्रा करनी पड़ी। दुखायल उनका उपनाम था। अब वे सारी सिन्ध भूमि में प्रसिध्द हुए। वे महात्मा गांधी की विचार धारा से अत्यंत प्रभावित हुए, और वे उनके अनन्य उपासक हो गये। उन्होंने कांग्रेस में सक्रिय भाग लिया।

श्री दुखायल पर सरस्वती मां की अनन्य कृपा थी वे कवि के साथ साथ अच्छे गायक भी थे। अब उन्होंने सिन्ध प्रदेश के गांव गांव में अपने राष्ट्रीय भक्ति से ओत प्रोत गीतों द्वारा स्वतंत्रता का संदेश दिया। जब वे राष्ट्रीय गीत 'खंजड़ी' बजाते हुए गाते थे, तो नई चेतना आ जाती थी।

श्री दुखायल जी ने सन् १९३७ ई में दुखायल प्रेस की स्थापना की जहां से उन्होंने फिर 'दुखायल' पत्रिका का सम्पादन किया।

भारतीय स्वतंत्रता संग्राम के दौरान वे ६ बार जेल में गये। जेल में रहते हुए भी वे राष्ट्रीय गीतों की रचना करते रहे। सन् १९४८ में उन पर यह आरोप लगाया गया कि वे सिन्ध के 'रतेदेरे' आश्रम में सरकार के विरुध्द शस्त्र बना रहे हैं।

पाकिस्तान में प्रतिकूल परिस्थितियों के कारण कवि दुखायल जी मातृ-भूमि सिन्ध को विदा कर भारत भूमि में पधारे। उनके आगमन पर उनका भव्य स्वागत किया गया। कुछ वर्ष तक वे 'उल्हासनगर' में रहे। तत्पश्चात् भाई 'प्रताप' की प्रेरणा से कच्छ में 'नई सिन्ध' की कल्पना को साकार करने के लिए जुट गये, जो आज गांधीधाम के नाम से प्रसिध्द है। कवि दुखायल ने वहां गांधीधाम आदिपुर में मैत्री मंडल की स्थापना की। मैत्री मंडल द्वारा उन्होंने शिक्षा के क्षेत्र में अमूल्य सेवा की। मैत्री, विद्यालय, मैत्री महाविद्यालय एवं कन्या शाला की स्थापना की गयी। उन्होंने श्री तोलाणी को प्रेरणा देकर उनके सहयोग से उच्चस्तरीय शिक्षा केंद्रों की स्थापना की।

देश विभाजन के पश्चात् अगर वे चाहते तो अपनी राष्ट्रीय सेवाओं के कारण सरकारी महत्त्वपूर्ण पद प्राप्त कर सकते थे, किन्तु उनका जीवन सदैव त्यागमय रहा है। वे संत विनोबा भावे एवं श्री जय प्रकाश नारायण के संपर्क में आये। उन्होंने संत विनोबा जी के 'भूदान आंदोलन' में सक्रिय भाग लिया। उन्होंने विनोबाजी के विचारों और दर्शन को अपने गीतों में प्रस्तुत किया और वे विनोबाजी के साथ गांवों में गये। जहां उन्होंने भूदान सम्बंधी गीत गाकर भूमि पतियों को भूमिदान करने की प्रेरणा दी।

श्री दुखायल प्रतिभा संपन्न कवि हैं। उनका व्यक्तित्व बहुमुखी है। वे राष्ट्र-भक्त, राष्ट्रीय कवि, समाज सेवक, समाज सुधारक, निर्भीक नेता उच्च कोटि के गायक, एवं भावुक संत हैं। वे सच्चे कर्मयोगी हैं।

संत विनोबाजी कवि दुखायल जी के बारे मे लिखते हैं "कवि दुखायल के हृदय में मानव-मात्र के लिए प्रेम भरा हुआ है। उनकी भारत-भक्ति भी उसी व्यापक प्रेम की एक चिनगारी है। दुखायल तो दुखी दुनिया को दिलासा देने वाले कवि हैं। उनके शब्दों में पांडित्य नहीं, प्रेम भरा है। वे केवल शब्दों को नहीं जोड़ते, बल्कि हृदयों को जोड़ने की कोशिश करते हैं।"

लोक नायक श्री जय प्रकाश नारायण श्री दुखायल जी के सम्बंध में लिखते हैं, "कवि दुखायल के गीत जिन्होंने सुने होंगे, वही जानते हैं कि उन में कैसी जान होती है और किस प्रकार वे अपना पूरा दिल वाणी में निकालकर रख देते हैं। जब मैंने पहले पहल उनका 'दे दो अब भूमि–अधिकार नामक गीत सुना था तो ऐसा लगा था, जैसे विप्लव साक्षात् खड़ा होकर ललकार रहा हो। सिन्धी के तो वे माने हुए राष्ट्र–कवि हैं ही। दुखायल के गीतों में भारत की गरीब जनता के दुख दर्द की ऐसी पुकार होती है, जो पत्थर के दिलों को भी द्रवित कर देती है।

श्री दुखायल जी महात्मा गांधी के अनन्य उपासक हैं। उन्होंने गांधीजी के दर्शन एवं शिक्षा को अपने जीवन में प्रतिबिंबित किया है। कवि गांधीजी के त्याग, अहिंसा, सत्य, निष्काम कर्म का उल्लेख करते हुए कहते हैं:–

राज्य से बढ़कर कहीं तुमको फकीरी ही लगी,
क्यों कि दुखियों का था देखा हाय! तूने हाल जो।
जुल्म चारों ओर था ही, छल–कपट भी बढ़ रहा,
अहिंसा और सत्य का धारण किया अवतार तो।
कर्म के मार्ग पे चलते भी अकर्मी तुम रहे,
क्यों कि गीता को ही समझा सब सुखों का सार जो।
मनुष्य मात्र के लिए तेरे हृदय में प्यार था,
क्यों कि देखा था सब ही में तूने उस करतार को।
भिन्न जाति–धर्मों में बढ़ने लगा था द्वेष जब,
उन बिखरते फूलों को तूने किया इक हार जो।[1]

कवि दुखायल जी महात्मा गांधी के गुण गान गाते हुए कहते हैं कि गांधीजी एक सच्चे साधक निर्लिप्त योगी, निर्भय संत और आत्मिक शक्ति से संपन्न नेता थे! निर्भयता एवं शक्ति की मूर्ति थे। वे सत्य एवं अहिंसा के सहज उपासक थे। वे महान ज्ञानवान एवं ईश्वर–भक्त थे। कवि के मूल शब्दों में:–

तुम सच्चे साधक सहयोगी,
तुम निर्लिप्त निराले योगी,

---

१ धरती के गीत कवि हूंदराज दुखायल पृष्ठ १६९

तुम निर्भय निस्संग विरोधी,
तुम शक्ति के घोष!
ओ भारत के बापू गांधी।
राह तुम्हारी सब से न्यारी,
पुण्य–प्रेम के प्रबल पुजारी,
बलिदानों की प्रतिमा प्यारी,
तुम जन जन के प्राण। ओर भारत के बापू गांधी।[१]

देश का यथार्थ चित्र:– कवि दुखायल जी देश का यथार्थ चित्र प्रस्तुत करते हुए एक पंछी को संदेश वाहक बनाकर गांधीजी के यहां भेजते हैं। वे पंछी से कहते हैं:–

बापूजी से कहियो पंछी मोरी राम राम ...
कागज लिख लिख भेज रहा हूं और नहीं कुछ काम।
स्वदेशी की चाह कहां अब! अपने की परवाह कहां अब!
चीज परायी प्यारी है जी लूट विदेशी जारी है जी।
उच्च और नीच की है बीमारी, वर्णो का वियोग है भारी,
प्रांत और भाषाओं का रगड़ा, अब तो खूब बढ़ा है झगड़ा,
आपस का कुछ प्यार नहीं है, दुख का कोई पार नहीं है।
स्वार्थ का है जोर मगर है परमार्थ का नहीं नाम![२]

यद्यपि कवि दुखायल जी स्वयं महात्मा गांधी के सच्चे अनुयायी हैं, फिर भी वे गांधीजी के उन अनुयाइयों पर व्यंग्य करते हैं जो स्वार्थ– वश गांधीजी के सिद्धांतों को भूल गये हैं, स्वयं गुल छड़ी उड़ाते हैं।

आप के अनुयायी जीते हैं,
कुछ अच्छा खाते पीते हैं।
खादी भी पहना करते हैं,
तेरे स्नेह का दम भरते हैं।

---

१ धरती के गीत — पृष्ठ ५७
२ वही — पृष्ठ ५२

कोई न सुनता है जनता को,
न्याय न मिलता है जनता को![1]

कवि देश की दयनीय दशा का करुण चित्र प्रस्तुत करते हुए कहते हैं:-

अब तक राम का राज्य न आया, वह तेरा स्वराज्य न आया।
भूखों और नंगों का भारत, तेरा भिखमंगों का भारत,
जूठन पर झगड़ा होता है, कुत्ता और बच्चा लड़ता है!
बेकारी की मुश्किल भारी, बढ़ गयी भारत में बीमारी!
आज बहुत मन में आता है, संदेश पर बढ़ जाता है।
पंछी बापू को दे देना हम सब के प्रणाम![2]

राष्ट्रीय चेतना:- कवि दुखायल सिन्ध के राष्ट्रीय कवि माने जाते हैं। उन्होंने देश स्वतंत्रता संग्राम में सक्रिय भाग लिया; अपनी वाणी द्वारा सिन्ध के गांव गांव, नगर नगर में जाकर जनता को जागृत किया। जब वे देश भक्ति से ओत प्रोत स्वरचित गीत गाते थे, तब जनता में राष्ट्रीय चेतना आ जाती थी। वे भारतीय जन मानस में राष्ट्रीय चेतना का संचार करते हुए कहते हैं:-

जागो भारत की संतान।
नवयुग आशाओं से आया लेकर नया विधान,
पूरब से उजियारा लेकर निखरे सुनहली भान।
रात गयी अब हुआ सवेरा, बोलें सुबह पुकार,
अधिकारों ने ली अंगड़ाई खुला न्याय दरबार!
अब सोने का वक्त कहां, पल खोने का वक्त कहां?
गफ़लत की निद्रा को छोड़ो भारत के नर-नार।
जीवन वीणा बाज रही है, जाग उठा संसार;
जाग उठा संसार न जागा अब तक हिन्दुस्तान।
जागो भारत की संतान॥[3]

---

१ धरती के गीत — पृष्ठ ५३
२ वही — पृष्ठ ५७
३ वही — पृष्ठ ७९

भूदानः– कवि दुखायल जी, महात्मा गांधी के आध्यात्मिक उतराधिकारी संत विनोबा भावे के अनुयाता हैं। उन्होंने भूदान आंदोलन में सक्रय भाग लिया है। उन्होंने संत विनोबाजी के साथ गांव गांव में जाकर अपने क्रांतिकारी व हृदय द्रवित गीतों द्वारा भूपतियों के अवचेतन मन को जाग्रत किया ताकि वे बाबाजी को भूमि दान करें। कवि भूपतियों को आह्वान करते हुए कहते हैं:–

दे दो अब भूमि अधिकार!
दान करो अभिमान रहित तो होगा बेड़ा पार!
जो खेड़े वो खाये भैया, संत विनोबा यही बतैया
जो जोतेगा, वह जीतेगा, और की होगी हार।[1]

मोह के बंधन तोड़ो रे लोगो! मोह के बंधन तोड़ो!
प्रम का नाता जोड़ो रे लोगो! मोह के बंधन तोड़ो।
तेरे बेटे जग के बेटे, जग के बेटे तेरे,
फूलों पर कब छाप लगी है, तेरे हैं या मेरे?
जग व्यापी होवे दिल तेरा, छोटेपन को छोड़ो!
धरती पर अधिकार सभी का; धरती सब की माता,
भूमि सबै गोपाल की मानो है, जो जगत्–विधाता,
'सम्पत्ति सब रघुपति' की है, घट ममता का फोड़ो।[2]

ललकारः– कवि दुखायल जी क्रांति की भविष्यवाणी करते हुए पूंजी–पतियों को सचेत करते हुए कहते हैः–

सुलग रही है आग रे बाबू! सुलग रही है आग
भैरव शंक फूंक गाता है बलिदान के राग।
दिन आये अब युग बदलेगा, जब मानव का दिल पिघलेगा
गांव उठेंगे संघ बनेंगे, को जाने कब घोर क्रांति की भड़क उठेगी आग
कोई रहे राज़ी बेराज़ी मेहनत ही मारेगी बाज़ी;
काम करेंगे पेट भरेंगे, शोषक–शोषित अब न रहेगा देश उठा है जाग।[3]

---

१ धरती के गीत — पृष्ठ २८
२ वही — पृष्ठ ६८
३ वही — पृष्ठ ६४

मानवता के पुजारीः– कवि दुखायल जी मानवता के पुजारी हैं। उनके स्नेह की सीमा किसी जाति विशेष या राष्ट्र तक सीमित नहीं है। वे अपने काव्य में विश्व बन्धुत्व का संदेश देते हैं। उनकी दृष्टि में कोई हेय या श्रेष्ठ नहीं, सब समान हैं। कवि के अपने शब्दों में :–

रंग और जाति का भेद न जाने,
नीच और ऊंच का खेद न माने।
मानवता के प्यार की माला,
सब को जपाकर स्वयं भी जपना।
मानो सारा जग है अपना ।।[1]

कवि दुखायल के काव्य में 'वसुधा इव कुटुंबकम' की प्रतिच्छाया है। वे विश्व को अपना परिवार मानते हुए कहते हैं:–

प्रेम से जग भरपूर करें हम।
द्वेष की दुविधा दूर करें हम।
भाई–भाई बनके रहें हम।
माने बुरा आपस का झगड़ा,
मानो सारा जग है अपना ।।[2]

मानव करने निकला देखो मानवता का विनाश ।।
मार्ग–भ्रष्ट बना बेचारा, ज्ञान–रहित विज्ञान को पाकर।
भटक रहा है मारा मारा, डाल गले में पाश ।।[3]

कवि दुखायल के मन में केवल मनुष्य मातृ के लिए स्नेह नहीं किन्तु सभी प्राणियों के लिए स्नेह एवं करुणा है। वे सत्य एवं अहिंसा के मार्ग पर चलकर प्राणिमात्र की सेवा करना अपना धर्म समझते हैं। वे गांधीजी की भांति दूसरों के सुख में ही अपना सुख मानते हैं। कवि के मूल शब्दों में:–

सत्य अहिंसा अपना कर्म हो।
प्राणी मात्र की सेवा धर्म हो।

---

१ धरती के गीत — पृष्ठ ६
२ वही — पृष्ठ ६
३ वही — पृष्ठ ७२

सब के सुख में सुख माने हम,
सब के दुख में सीखे तड़पना।[1]

उपर्युक्ति काव्यांश में नरसी मेहता के रचित पद एवं महात्मा गांधी के प्रिय भजन 'वैष्णजन तो तेणे कहिये जो पीर पराई जाण रे' की प्रति ध्वनि प्रतिभासित होती है।

मनुष्य ने विज्ञान द्वारा कितनी न उन्नति की है, किन्तु उसके मन में करुण–भाव नहीं, प्यार नहीं, स्वार्थ–वश वह विज्ञान द्वारा मानवता का ही विनाश कर रहा है।

धरती का दिल डोल रहा है, कांप उठा आकाश!

ईश्वर भक्ति:– कवि दुखायल जी एक सच्चे देश भक्त के साथ साथ ईश्वर–भक्त भी हैं। उनका विश्वास है कि प्रभु की शरण में जाने से जीव का भाग्योदय होगा। प्रभु को प्रेम द्वारा ही प्राप्त किया जा सकता है। वे अपने एक पद में कहते हैं:–

शरण राम की लाग रे प्यारे, शरण राम की लाग,
तेरा खुल जायेगा भाग।
प्रेम के बस हैं राम हमारे, जूठे बेर थे जिसको प्यारे।
शबरी भीलनि बन गयी रानी छूकर, पावन पाग। शरण...
जान चिता चिंता को प्राणी मन को पहुंचायेगी हानी,
राम नाम के अमृत से ये बुझ जायेगी आग! शरण...[2]

कला पक्ष.– दुखायल जी कवि के साथ साथ एक हृदय स्पर्शी गायक भी हैं, इस लिए उनके काव्य में गेयत्व है, संगीतात्मकता है। वर्ग मैत्री वर्ण संगति, छेकानुप्रास, वृत्यानुप्रास, रूपक एवं उपमा अलंकार का उनके काव्य में यत्र तत्र प्रयोग हुआ है।

---

१ धरती के गीत पृष्ठ ६
२ वही पृष्ठ १००

पंडित कृष्णचन्द्र जैतली

पंडित कृष्णचन्द्र जैतली का जन्म २१ जुलाइ १९१० ई में हैदराबाद सिन्ध के ब्राह्मण कुल में श्री टोपणदास जैतली के घर में हुआ। उन्होंने गिदूमल संस्कृत पाठशाला में हिन्दी व संस्कृत का अभ्यास किया और सिन्धु मार्तण्ड आयुर्वेद विद्यालय में आयुर्वेद की शिक्षा ग्रहण की। पंडित काशीनाथ विनायक पाध्ये शास्त्री, पंडित प्राण शंकर शुक्ल और स्वयं उनके विद्वान पिता पंडित टोपणदास शेवाराम जैतली उनके विद्यागुरू थे। उन्होंने 'काव्य तीर्थ' साहित्य शास्त्री, आयुर्वेद रत्न, न्याय विशारद, वैद्य विशारद की उपाधियां प्राप्त की।

वे अधिकतर गवेषणात्मक निबंध लिखते हैं। 'सिन्धी भाषा का संक्षिप्त परिचय' पुस्तक उनकी एक गवेषणात्मक पुस्तक है और उनके गहन अध्ययन का द्योतक है।

काव्य रचनाः– पंडित कृष्णचन्द्र जैतली ने सिन्धी, संस्कृत व हिन्दी भाषा में काव्य रचना की है। हिन्दी में अधिकतर उन्होंने नई कविताएं लिखी हैं जो अप्रकाशित हैं, वे देश में व्याप्त दरिद्रता का चित्र प्रस्तुत करते हुए 'पश्यति' कविता में कहते हैंः–

मुख ऊपर बायें
बैठा है श्वान
एक, दो, तीन, चार
गिरे टुकरे रोटी के
फिलैट की बालकनी से
झपटा
मुख में पकड़ा
पास में है
अस्थिपंजर मानव!
देखा ऊपर
ललचाई आंखों से
फैलाई झोली
फटी मैली
गिरा ऊपर से
सूखा टुकड़ा
बहुत दिनों का...
ऊपर...
मंडरा रहा था कौआ
ले गया झपट कर, बाकी बचा खुचा!
यह लपट और झपट
है संसार की रपट!
तीनों ही पशु हैं
मूल क्रिया एक है
पश्यति।

कुत्ता, कौआ एवं दरिद्र दुर्बल मानव किस प्रकार रोटी के टुकड़े के लिए भटकते हैं। तीनों ही पशु हैं किन्तु मनुष्य सामाजिक पशु है, उसका जीवन अधिक मूल्यवान है। हम पशुओं पर दया करते हैं किन्तु मनुष्य के साथ निर्दयता का व्यवहार करते हैं, और जीवदया का ढोंग करते है। पंडित कृष्णचन्द्र जी जीवदया के हामी एवं एक भूखे मनुष्य का करुण चित्र प्रस्तुत करते हुए व्यंग्य करते है कि मनुष्य को तिरस्कार की दृष्टि से देखा जा रहा है।

चर रही है गाय
कचड़ा–कूंडी मे
घास–फूस
आम के छिलके
तिनके।

आया एक मनुष्य
लपेटे
कुछ कागज में
बढ़ाया हाथ
गाय के आगे।

चीथड़ों में लिपटा
दौड़ता आया
दूर से मानव
फैलाकर हाथ
बोला
दीन वाणी से –

"सा'ब!
रात का भूखा हूं"।

चल
हट
तूम्हारे लिए नहीं है,
गाय के लिए है!"

पंडित जैतली पुरातन परंपरागत साहित्यकार होते हुए भी नई वीचार धारा से प्रभावित प्रतीत होते हैं।

श्री जीवणदास आहूजा

श्री जीवणदास का जन्म जनवरी सन् १९१० ई में सक्खर ज़िला के चक गांव में श्री सच्चानंद आहूजा के घर में हुआ। विद्यार्थी जीवन में वे वीर हकीकतराय के जीवन से प्रभावित हुए। अपने गांव के जवानो को एकता के सूत्र में बांध कर आर्य वीर समिति की स्थापना की। उन्होंने देश की स्वतंत्रता के लिए क्रान्तिकारी आंदोलन में सक्रिय भाग लिया। वे पांच बार जेल में भी गये। उन्हें स्वामी शान्ति प्रकाश महाराज गुरू के रूप में प्राप्त हुए। देश विभाजन के बाद वे उल्हासनगर में आ बसे। उन्होंने सिन्धी एवं हिन्दी भाषा में काव्य रचना की है, प्रस्तुत है उनके हस्त लिखित हिन्दी पदों का विवेचनः–

श्री जीवणदास ब्रह्म सम्बंधी विचार व्यक्त करते हुए कहते हैं कि ब्रह्म जगत् का कर्ता है, सर्वव्यापक है, सत् चित् आनंद रूप है:–

सत् चित् आनंद सर्वव्यापक एको अजूनी जग के मालिक,
तुम हो सृष्टि सुलतान, हम पै दया करो भगवान।

कवि जगत् एवं जगत् के पदार्थों को ओस बिन्दु तुल्य क्षणभंगुर मानते हुए कहते हैं:–

यह संसार सुंदर जो मानत है, वो जैसे ओस का मोती,
इक क्षण में छिन भिन होता है, जब सूर्य का दीदार करूं।

कवि माया, विकारों ज्ञान एवं शान्ति का रूपक द्वारा उल्लेख करते हुए कहते हैं कि माया रूपी अंधकार के कारण पांचों चोर अर्थात् विकार लूट रहे हैं, जब ज्ञान रूपी दीपक प्रज्ज्वलित होता है तो माया रूपी अंधकार एवं विकारों

रूपी चोर भाग जाते हैं और शान्ति का संचार होता है। कवि के मूल शब्दों में:–

यह माया एक अंध्यारा है, पांचों चोर ही लूटत है,
जब जीवन ज्ञान का दीप जला तब शान्ति का संचार करूं।

कवि भगवान श्री कृष्ण के अनन्य उपासक हैं। उन्हें उनके दर्शन की ही आकांक्षा है। उनके नेत्रों में प्रेम के आंसू हैं। वे अपनी विरहावस्था का वर्णन करते हुए कहते हैं:–

भगवान तुम्हारे दर्शन की है आस हमारी आंखों में,
हैं नेत्र हमारे नीर भरे है प्यास हमारी आंखों में।
रूप तुम्हारा सांवलिया जैसे काली घटा हो बादल की,
मंद मंद मुश्क रहा मन मोहन, है तास हमारी आंखों में।

कवि राधा के रूप मे विरह वेदना करते हुए कहते हैं:–

आइ पीया की याद सखी, अब आइ पीया की याद!
कैसे करूं फरियाद! सखी, अब आइ पीया की याद!
उमड़ घुमड़ कर बादल आए नाव पड़ी मझधार,
मन की नैया प्रेम का सागर, कैसे हो बेड़ा पार सखी!

कवि श्री जीवणदास भगवद्–भक्त के साथ साथ देश–भक्त भी हैं। सिन्धी जाति ने देश के स्वतंत्रता संग्राम एवं देश की आजादी की रक्षा के लिए योगदान किया है। सिन्धी समुदाय में भारत माता के प्रति जो प्रेम व बलिदान की भावना है उसका उल्लेख करते हुए कवि कहते हैं:–

मीठी इस मातृ भूमि पै कटाया सीस सिन्धियों ने,
भारत माता के चरनों पै, झुकाया सीस सिन्धियों ने।
धर्म और देश के खातर, दीआ बलिदान हंस हंस कर,
कालाणी, प्रेम, पमनाणी, कंवर कुर्बान सिन्धियों ने।

कवि जीवणदास के काव्य में उपमा एवं रूपक अलंकार का अच्छा प्रयोग हुआ है।

प्रो. राम पंजवाणी

प्रो. राम पंजवाणी सिन्धी जाति के सांस्कृतिक एलची हैं। उनका व्यक्तित्व बहुमुखी है। वे उच्च कोटि के साहित्यकार, संगीतकार शिक्षा शास्त्री. समाज सुधारक, राष्ट्र भक्त, वर्चस्व व्यख्यानदाता हैं। उनका जन्म सिन्ध प्रदेश के ऐतिहासिक नगर लाड़काना में २० नवम्बर १९११ ई में श्री प्रताबराय पंजवाणी के घर में हुआ। बीस वर्ष की युवास्था में श्री राम पंजवाणी डी. जे. सिन्ध कालेज में सिन्धी के प्राध्यापक नियुक्त किये गये। उन्होंने स्वतंत्रता संग्राम में भी सक्रिय भाग लिया। सूफी संतों के संपर्क में रहकर उन्होंने उनकी वाणी को कठंस्थ कर लिया और जब वे संतों की वाणी मटका बजाते हुए गाते हैं तो श्रोतागण मंत्रमुग्ध हो जाते हैं।

देश के विभाजन के बाद वे बम्बई में आ बसे। जयहिंद कालेज की स्थापना में भी उनका महत्त्वपूर्ण योगदान हैं। वे जयहिंद कालेज में सिन्धी विभाग के अध्यक्ष थे। अध्यापन कार्य के साथ साथ प्रो. पंजवाणी ने हताश एवं बिखरी हुई सिन्धी जनता में नयी चेतना एवं उत्साह उत्पन्न करने का महान कार्य किया। उन्होंने सिन्धी समुदाय के अवतार वरुणदेव उडेरोलाल की उपासना द्वारा सिन्धी समुदाय में भक्ति एवं शक्ति का संचार किया।

प्रो. पंजवाणी जी ३ वर्ष तक बम्बई विश्व विद्यालय में सिन्धी विभाग के अध्यक्ष रहे।

नागपुर में आयोजित प्रथम विश्व हिन्दी सम्मेलन के अवसर पर उन के द्वारा की गयी उल्लेखनीय सिन्धी भाषा और साहित्य के विकासार्थ सेवाओं के उपलक्ष्य में उन्हें सम्मानित किया गया।

प्रो. पंजवाणी ने गद्य की विभिन्न विधाओं में योगदान किया है।

साहित्य अकादमी ने उनकी साहित्यिक सेवाओं का मूल्यांकन कर उन्हें "अनोखा आज़मूदा" कहानी–संग्रह पर पांच हज़ार रुपये का पुरस्कार प्रदान किया।

प्रो. राम पंजवाणी के मन में भगवान श्री कृष्ण के प्रति अनुराग है। वे श्री कृष्ण के दर्शन की प्रतीक्षा करते हुए उनसे प्रार्थना करते हुए कहते हैः–

आज गोपाला सांवरिया तेरी याद सताए।
बांट निहारूं नाथ तिहारी खड़ा हूं आस लगाए।
कब आओगे प्रीतम प्यारे जीवन बीता जाए?
जो भी मांगो दे दूं तुमको जीवन भेंट चढ़ाऊं,
जो भी बोलो करूं कन्हैया जिस बिधि तुमको पाऊं।

कवि सर्वत्र एक ब्रह्म का दर्शन करते हैं। जगत् में जो कुछ दृश्यमान है उस में उस ब्रह्म की ही सत्ता है। कवि ब्रह्म की स्तुति गाते हुए कहते हैः–

किस बिधि करूं बड़ाई तेरी किस बिधि करूं बड़ाई,
तू है जग का साई प्रभु जी तेरी सदा दुहाई।
तू सूरज का तेज चांदनी की मोहक मुस्काने,
अनगिनत तारों में बजती मीठी तेरी ताने।
पवन झूम कर मस्त राग में तेरी महिमा गाता।
हरि डाली में हरि पत्ते में तेरी ज्योति समाई।
तेरा एक इशारा पाकर सारा जग थम जाए,
तेरी हलकी सी हलचल से दुन्या भी हिल जाए;
तू चाहे तो वीरानों में महक उठे फलवाड़ी।
बरस पड़े सूखे पत्थर से रस की बूंदे प्यारी,
ढूंढ ढूंढ कर हारा सब जग तेरी थाह न पाई।

कवि प्रकृति का पुजारी होता है। प्रो. पंजवाणी अपनी एक कविता में प्रकृति का चित्र प्रस्तुत करते हुए कहते हैंः–

चंदा चमके तारे चमके गूंज रही है शहनाई,
कलियां नाचे कोयल कूके, हवा बसंती लहराई,

गुन गुन करते भंवरे गाते, फूली बगिया की कियारी।
सात रंगी साड़ही में लपटी नाच रही धरती सारी।

कवि चारों ओर भेद भाव, लूट खसोट मिथ्याचार एवं स्वार्थ का वातावरण देख कर कहते हैं कि राजनैतिक लोग अपना उल्लू सीधा करने में व्यस्त हैं, वे व्यर्थ के नारे लगाकर जनता को भटका रहे हैं। लाखों लोग भूख–बेकारी–बीमारी के शिकार हो रहे हैं। स्वार्थी मनुष्य यह भूल गया है कि वह दो दिन का अतिथि है। कवि के मन में मानवता के प्रति प्रेम है। वे कहते हैं:–

पूर्व पश्चिम उत्तर दक्षण भेद नहीं मिट पाया है,
खुद गर्जी में डूबे दिल से मेल नहीं कट पाया है।
चारों ओर दिखाई देते आंसू में भीगे चेहरे!
अलग अलग नारों को सुनकर कान हो जाते बहरे।
सिर पर मौत लिए फिरती है मानव की संतान!

कवि को विश्वास है कि ऐसे दुःखद वातावरण को बदलने के लिए भारत प्रयत्नशील रहेगा। भारत ने सदैव दुखियों को गले लगाया है। कवि कहते हैं:–

भारत ने हरिदम दुखियों को अपने गले लगाया है,
अंधयारे में दीप जलाकर जग को पंथ दिखाया हैं।
एक बार फिर भारतवासी सुख की नदी बहाएंगे,
सत्य अहिंसा और प्रेम का सुंदर महल बनाएंगे।
शान्ति शान्ति से गूंज उठेगा फिर से सकल जहान।

स्वामी रामकृष्ण

स्वामी रामकृष्ण का जन्म सन् १९१६ ई में सिन्ध के शिकारपुर नगर में श्री जेठानंद वलेछा के घर में हुआ। बचपन में ही उनके मन में भगवत्-भजन की भावना उत्पन्न हुई। सन् १९३४ ई में उनके भाग्योदय हुए कि उन्हें स्वामी ग्वालानंद महाराज आध्यात्मिक गुरु के रूप में प्राप्त हुए। उनकी आज्ञानुसार उन्होंने काशी के उदासीन संस्कृत विद्यालय में विद्याध्ययन किया, संस्कृत की परीक्षाएं उत्तीर्ण कर शास्त्रों का अध्ययन किया। सिन्ध के विभिन्न नगरों में वे अपने गुरु स्वामी ग्वालानंद महाराज के साथ रटन करते हुए नाम का सदेश देते रहे।

देश विभाजन के बाद उन्होंने पुणें में स्वामी ग्वालानंद आश्रम की स्थापना की। वे वहां सबेरे एवं संध्याकाल को ज्ञानगंगा प्रवाहित करते हैं, भारत के भिन्न भिन्न नगरों में जाकर वेदान्त के विषय पर प्रवचन करते हैं। प्रेमियों के अनुरोध पर वे विदेश में भी गये, जहां उन्होंने भारत की प्राचीन संस्कृति एवं वेदान्त पर व्याख्यान दिये।

काव्य रचना – स्वामी रामकृष्ण ने सिन्धी एवं हिन्दी में काव्य रचना की है। उनका काव्य अप्रकाशित है। प्रस्तुत है उनके हिन्दी काव्य का संक्षिप्त विवेचन।

गुरु महिमा – स्वामी रामकृष्ण सत्गुरु की महिमा गाते हुए कहते हैं कि सत्गुरु ने उन्हें आध्यात्मिक ज्ञान देकर जन्म मरण के चक्र से मुक्त कर दिया और संशय भी नष्ट कर दिया। कवि के मूल शब्दों में –

जन्म मरण के चक्र में भटक रहा दिन रात।
राम कृष्ण मुझे ज्ञान दे सत्गुरु मेटी भ्रांति ॥

दार्शनिक विचार – स्वामी रामकृष्ण सारे जगत् में, सभी प्राणियों में एक ब्रह्म का साक्षात्कार करते हुए कहते हैं कि सब ही प्राणियों में वह ब्रह्म विद्यमान है और सब प्राणी उस ब्रह्म के रूप हैं। वह ब्रह्म आत्मा के रूप में सब में विद्यमान है। कवि के मूल शब्दों में –

जो सब में रम रहिया सब हैं जिसका रूप।
राम कृष्ण सो ब्रह्म है व्यापक आतम रूप ॥

जीव ने जब आत्म साक्षात्कार किया तो उसे ब्राह्म पुस्तकों के ज्ञान की कोई आवश्यक्ता नहीं।

जब जानिया अपना आप तो वेद पुरान क्या?

योग साधना – स्वामी रामकृष्ण योग साधना का उल्लेख करते हुए कहते हैं कि चित्त की एकाग्रता ही योग है। ऐसी अवस्था में मन ध्यायाकार होकर संशय रहित होता है। कवि के मूल शब्दों में –

ध्याकार जब मन होइ रहे न संशय सोग।
एकाग्रता चित्त की राम कृष्ण सो योग ॥

प्राचार्य हरि दिलगीर

श्री हरि दिलगीर का जन्म सिन्ध के ऐतिहासिक नगर लाड़काणा में सन् १९१६ ई में श्री गुरदिनोमल दरियाणी के घर में हुआ। वे सिन्ध में ही अधिशासी अभियंता के पद पर रहे। सन् १९५७ में वे आदिपुर कच्छ में आये और वहां वे तोलाणी पालेटेक्निक के प्राचार्य पद पर रहे। उन्होंने हिन्दी में कुछ गज़ल लिखे हैं जो अप्रकाशित हैं।

कवि दिलगीर आशावादी कवि हैं, वे पीड़ा में भी मुस्कराते हैं, दुखों को दिल में छिपाकर आनंद के गीत गाते हैं। कवि के मनोभावों का सजीव चित्रण उनकी गज़लों में मिलता है। वे कहते हैं:–

नीर मेरे नैनों में फिर भी मुस्कराता हूं,
दुख छिपाके सीने में सुख के गीत गाता हूं।
मुझको देखना साथी, सब को फूल देता हूं,
अपने मन को कांटों के सेज से सजाता हूं।

कवि दिलगीर के काव्य में विश्व प्रेम की भावना समाहित है। कवि के हृदय विशालता की झलक उनकी काव्य पंक्तियों से प्रतिबिंबित होती है:–

मेरा देश पूरा जग सब से दोस्ती मेरी,
इस विशाल दुनिया को दिल म तंग पाता हूं।
मेरी मधु में जादू है बांटने से बढ़ती है,
सब को मैं बुलाता हूं सब को मैं पिलाता हूं।

कवि दूसरों के सुख में अपने दुख को भूल जाते हैं। वे अपनी व्यथा का विचार नहीं करते वे दूसरों के लबों पर मुस्कान देखना चाहते हैं।

मैं दुखी सही लेकिन तू तो मुस्करा प्यारे,
तेरे सुख में मैं अपने दुख को भूल जाता हूं।

साधारण लोग मृत्यु की चिन्ता से चिन्तित रहते हैं किन्तु कवि अपने लिए सूर्य की उपमा देते हुए अपने ज्वलन्त जीवन एवं निर्भीकता का उल्लेख करते हुए कहते हैं:–

मुझको मौत से क्या डर, मैं तो सूर्य भांति हूं,
इक दिशा से आता हूं दूसरी से जाता हूं।

कवि ने गज़ल के नियमों का पूरा पूरा निर्वाह किया है।

कवि देवीदास

कवि देवीदास का जन्म व्यास पूजा के दिन जुलाई सन् १९१७ ई में सिन्ध के शिकारपुर नगर में श्री रोचलदास कटारिया के घर में हुआ। उनके जन्म का नाम दीपचन्द्र था। बाल्यावस्था में ही उनकी वैराग्य वृत्ति थी। १६ वर्ष की आयु में उन्हें स्वामी नंदलाल महाराज गुरु रुप में प्राप्त हुए। गुरु की अनुकम्पा से उन्होंने श्रीमद् भगवद् गीता, श्री राम चरित मानस एवं अन्य शास्त्रों का अध्ययन किया। उन्होंने उदासीन सम्प्रदाय में प्रवेश किया। उन्होंने संगीत की भी साधना की, स्वतंत्रता संग्राम में भी सक्रिय भाग लिया। उन्होंने अपने राष्ट्रीय गीतों द्वारा राष्ट्रीय चेतना उत्पन्न की। साधु समाज एवं दीन दुखियों की सेवा में रत रहे हैं। देश-विभाजन के बाद वे उल्हासनगर में आ बसे। भारत के विभिन्न नगरों में जाकर उन्होंने वेदान्त एवं आध्यात्मिक विषयों पर प्रवचन दिये हैं। वे प्रभावोत्पादक कथा-वाचक एवं कवि भी हैं। उन्होंने सिन्धी एवं हिन्दी भाषा में कुछ पद लिखे हैं, जो अप्रकाशित हैं।

कवि देवीदास भगवान श्री कृष्ण के अनन्य उपासक हैं। वे श्री श्याम सुंदर के वियोग से व्यथित हैं। वे एक साखी के मुख से अपनी मनोव्यथा कहलाते हैं:-

सखी री मैं तो आज बैरागिन भई।
जब से पिया परदेस गयो री, तब से मैं मर गई!
छोड़ दियो पिया हमारा देसा जाय बसियो अब वह परदेसा
मैं तो संग ना गई।

कवि श्री कृष्ण के दर्शन में ही अपने जीवन का उद्धार मानते हैं-

इक बार श्याम तू आ जा, जी भर के प्यार कर लूं,
तेरा दीदार कर दूं, अपना उद्धार कर दूं।

माया वैमनस्य, तनाव शत्रुता का वातावरण उत्पन्न करती है, वीरों को भी भटकाती है। कवि माया का उल्लेख करते हुए कहते हैं:-

माया तेने सब जग खाया।
भाई भाई से वेर बढ़ावे,
बाप बेटे को अलग करावे,
पती पत्नी का नाता टाड़ावे,
तेने वीर बड़े भुलवाया।

दादा जे. पी. वास्वाणी

विश्व विख्यात संत, साहित्यकार समाज सुधारक, शिक्षा शास्त्री, तत्वज्ञानी साधु टी. एल. वास्वाणी के उत्तराधिकारी दादा जशन वास्वाणी का जन्म २ आगस्ट सन् १९१८ ई में सिन्ध प्रदेश के हैदराबाद नगर में श्री पहिलाजराय वास्वाणी के घर में हुआ। श्री पहिलाजराय भी शिक्षा शास्त्री, साहित्यकार एवं भक्त हृदय थे। दादा जशन की माता कृष्णा देवी ईश्वर आराधिका एवं संत सेवी थी। माता, पिता के उत्तम संस्कारों एवं चाचा साधु वास्वाणी के संसर्ग के कारण बालक जशन जी का भविष्य उज्ज्वल हुआ।

दादा जशन जी बचपन से ही प्रवीण और विनम्र स्वभाव के थे। वे परीक्षा में सदैव प्रथम रहे। १३ वर्ष की छोटी आयु में उन्होंने मैट्रिक की परीक्षा उर्त्तीर्ण की। वे बड़े अध्ययनशील रहे हैं, प्रति दिन एक पुस्तक पढ़कर पूरी करते थे। उन्होंने एम एस. सी. की परीक्षा प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण की। विद्यार्थी जीवन में ही उनके विद्वता के चिन्ह दिखाई देते थे। एम. एससी. उपाधि प्राप्त करने के बाद वे कालेज में अध्ययेता होकर रहे।

सन् १९३९ से वे दादा साधु वास्वाणी के साथ रहे। जैसे ही वे दादा वास्वाणी के अत्यंत निकट आए तो उन्हें आध्यात्मिक रंग चढ़ता गया। उन्होंने उन्हें गुरु के रूप में स्वीकार कर उनके आदर्शों का अनुसरण आस्था के साथ किया। दादा साधु वास्वाणी की भांति दादा जशन का जीवन भी भक्ति, कर्म व ज्ञान की त्रिवेणी सदृश बन गया। वे अब दादाजी के साथ न केवल सिन्ध परन्तु भारत के विभिन्न नगरों एवं सीलान गये जहां दादाजी ने अज्ञानी जीवों को जाग्रत किया। दादा जशनजी ने 'एक्सीलसर' Excellsior अंग्रेज़ी पत्रिका का सम्पादन किया जिस में आध्यात्मिक विषय सम्बंधी लेख प्रकाशित होते थे।

दादा जशन जी ने ज्योतिष विद्या का भी गहन अध्ययन किया। कई लोग उन्हें हस्त रेखाएं दिखाने आते थे। आध्यात्मिक उन्नति की ओर अग्रसर हते हुए उन्होंने ज्योतिष एवं सांसारिक आकर्षणों का परित्याग किया। वे सारा समय दादा वास्वाणी की सेवा में सफल करने लगे।

देश विभाजन के बाद वे दादाजी के साथ पुणे में आये, वहां दादाजी ने विद्या, सेवा, भक्ति की ज्योति जगाई, दादा जशन भी इन सत्कार्यों में समर्पित थे। दादाजी के अनुरोध पर वे मीरां कालेज के प्राचार्म होकर रहे। प्राचार्य के पद पर रहते हुए उन्होंने हज़ारों विद्यार्थियों के जीवन में परिवर्तन लाया उन्हें नई दिशा दिखाई।

दादाजी की भांति दादा जशन वास्वाणी भी भारत के भिन्न भिन्न नगरों में जाकर प्रेमियों की प्यास पूरी करते हैं, उन्हें स्मरण–सेवा का संदेश देते हैं, जीव दया की ज्योति जगाते हैं, प्रेम के बीज बोते है। दादाजी की भांति वे भी महान, विद्वान, ज्ञानी ध्यानी हैं, करुणा प्रेम और विनम्रता की मूर्ति हैं। वे दरिद्र दुखियों में प्रभु का दर्शन करते हैं और उनकी सेवा करते हैं। इनके प्रवचनों में भी आध्यात्मिक आकर्षण है। इनके दर्शन करने से पलकों में प्रेम का पानी छलकता है। इनका जीवन भी त्याग तपस्या का जीवन है। वे हज़ारो भूले–भटके व्यक्तियों का मार्गदर्शन कर रहे हैं।

दादा जशन वास्वाणीजी उच्च कोटि के लेखक एवं कवि हैं। उनकी विद्वता के कारण कैनाडा इंटरनैशनल अकादमी ने उन्हें पी. एच. डी की मानद् उपाधि प्रदान की। आध्यात्मिक एवं भक्ति परक विषयों पर उनकी कई पुस्तकें प्रकाशित हुई हैं। वे सहृदय कवि हैं। उन्होंने अधिकतर सिन्धी एवं अंग्रेज़ी में साहित्य सृजन किया है। उन्होंने कुछ कविताएं हिन्दी में भी लिखी हैं। उनके काव्य में विरह वेदना है। वे सच्चे गुरु भक्त हैं। अपने गुरु दादा साधु वास्वाणी के विछोह मे उन्होंने अनेक कविताएं लिखी हैं। कवि के मन में अपने सतगुरु के दर्शन की उत्कट उत्कंठा है। वे कहते हैः–

कहां जाके प्रियतम दर्शन तेरा पाऊं?
तुम्हें छोड़कर के कहां और जाऊं!

आंखों में तू ने नशा आकर डाला,
तुम्हें याद करके मैं आंसू बहाऊं।
दिलबर तू ने दिल को ज़ख्मी किया है.
दिन रात तुम को मन में ध्याऊं।
तेरे लिए दादा तोड़े और नाते,
और कुछ न मांगूं दीदार चाहूं।
तेरे विना अंजलि न किस को पहचानूं,
शरण तेरी मैं हूं तेरे पास आऊं।

दादा जशनजी भगवान श्री कृष्ण के अनन्य उपासक हैं। उनके मन में श्री कृष्ण के दर्शन की प्यास है। वे श्री कृष्ण से अनुरोध करते हुए कहते हैं:–

मेरे मन मंदिर में आकर चमको तू प्यारे,
निर्मल सुंदरता मैं देखूं तेरी प्रियतम नियारे।
दिल के कमल में खिली तेरी ज्योति,
तेरी अनुकम्पा है आनंद के मोती।

कवि प्रभु दर्शन के लिए उत्सक हैं वे अपनी जिज्ञा ाा प्रकट करते हुए कहते हैं:–

मुहिब मिलन की राह, मुझे कोई बतावे,
राम जपण की राह मुझे कोई बवावे।
झूठा जग यह सब कुछ फानी इक इक जावत राह रबानी,
का ठ कटण की राह मुझे कोई बतावे।
अकाल अरुप यह रूप बनाया, उसके भीतर आप छिपाया,
भीतर खोजन की राह, मुझे कोई बतावे।

दादा जशनजी एक महान संत होते हुए भी सच्चे देश भक्त हैं। उनके

विचारानुसार हमारा भारत देश सच्चे अर्थ में आज़ाद नहीं हुआ है। चारों ओर गरीबी, बेकारी फैली हुई है। नेता लोग अपने स्वार्थ के कारण अखंड भारत को खंड खंड कर रहे हैं। कवि परमात्मा से प्रार्थना करते हैं कि आप भारत भूमि में अवतार धारण कर राष्ट्रीय एकता का नाद बजाओ। कवि के मूल शब्दों में:-

कहां तिलक गांधी लाल जैसे देश दुलारे,
जिन्होंने स्वराज्य के लगाये डंके के चोट नारे,
चारों ओर अंधेरा छाया नहीं चमकते तारे,
मेरा देश प्यारा भारत कब होगा आज़ाद!
देश को करके खंड खंड करते हैं उसको बर्बाद!
नहीं कोई सुनता अब मेरे दिल का है फरियाद,
आओ प्रभु तुम्हीं बजाओ आकर एकता का अब नाद,
मेरा देश प्यारा भारत कब होगा आज़ाद!
जहां देखूं वहां दुख ही दुख है, दीनों को विश्राम नही,
गांवों में भी भूख बेकारी, सुख का सुनता नाम नहीं!
तू ही प्रभु कष्ट कटेगा और किसी का काम नहीं।
मेरा देश प्यारा भारत कब होगा आज़ाद!

दादाजी की उपर्युक्त कविता में भारत देश का यथार्थ चित्र प्रस्तुत है। कवि की दृष्टि में देश की बिगड़ी हुई राजनैतिक, सामाजिक एवं आर्थिक व्यवस्था को प्रभु ही बना सकते हैं।

कवि वासुदेव

कवि वासुदेव का जन्म सन् १९१८ ई में सक्खर जिला के सांगी गांव में श्री हीरानंद रामरख्याणी के घर में हुआ। बचपन में ही उन पर स्वामी नेभूराम का प्रभाव पड़ा। वे चौथी कक्षा में पढ़ते थे कि मन में वैराग्य वृति उत्पन्न हुई। उनके भाग्योदय हुए कि उन्हें संत स्वामी ग्वालानंद महाराज आध्यात्मिक गुरु के रूप में प्राप्त हुए। श्री वासुदेव कवि भी हैं तो गायक भी। देश विभाजन के बाद वे लखनऊ आ बसे। वे गृहस्थी हैं। वे विदेश में भी नाम संकीर्तन कर आये हैं। उन्होंने सिन्धी एवं हिन्दी में फुटकर काव्य रचना की है। उनके हिन्दी पद अप्रकाशित हैं।

कवि ब्रह्म की स्तुति गाते हुए कहते हैं कि उनकी महिमा भी असीम है। ऋषियों ने मुनियों नेति नेति कहा।

भगवान तेरी महिमा का भेद किसी ने नहीं पाया।
है लीला अनोखी तेरी ये ग्रन्थों ने बतलाया।

कवि भगवान से प्रार्थना करते हुए कहते हैं:–

वासुदेव है तेरा पुजारी, कभी न उसको भुलाना।
तेरे चरणों का ध्यान धरे नित, प्रेम का जाम पिलाना।
खेवट जैसे को प्रभु तू ने चरणामृत पिलाया।

कवि वासुदेव श्री कृष्ण के उपासक हैं। वे उनके वियोग से व्यथित हैं। वे भगवान श्री कृष्ण से अनुरोध करते हुए कहते हैं:–

मुझको सुनाओ नंद के दुलारे, छोड़ गये हो किसके सहारें!
नित तेरा ही ध्यान धरूं।
चैन नहीं है मुझको प्यारे, तड़प रहे हैं नैन हमारे,
मैं तेरे लिए मरूं।

कवि की यह धारणा है कि मनुष्य देह ईश्वर की अहैतुकी अनुकम्पा से मिलती है। जीव को ऐसा अमूल्य जीवन व्यर्थ गंवाना नहीं चाहिए। सत्गुरु एवं संतों से ज्ञान ग्रहण कर भगवद भजन में लीन होना चाहिए। कवि के मूल शब्दों में:-

मानुष देही तुम ने पाई, है प्रभु की भलाई।
जीवन अपना सफल बनाओ, जाओ गुर की शरनाई।
संतो से नाता निभाते चलो, गीत गोविंद का गाते चलो।

श्री गोबिंद भाटिया

श्री गोबिन्द भाटिया का जन्म सिन्ध के ऐतिहासिक नगर लाड़काना में सन् १९१८ ई में श्री लोकराम भाटिया के सद्गृहस्थ में हुआ। उन्होंने वकालत की परीक्षा उत्तीर्ण की। कवि किशनचन्द बेवसि उनके साहित्यिक गुरू थे। उनके निबंध संग्रह 'वर्क' पर पुरस्कार प्राप्त हुआ। उन्होंने भारतीय स्वतंत्रता संग्राम में सक्रिय भाग लिया। स्वामी शान्ति प्रकाशजी महाराज उन्हें गुरू रूप में प्राप्त हुए। वे सदैव दुखियों की सेवा के लिए तत्पर रहते हैं। उन्होंने सिन्धी एवं अंग्रेज़ी में काव्य साधना की है। उन्होंने कुछ हिन्दी में गीत भी लिखे हैं।

श्री गोबिन्द भाटिया सच्चे गांधी वादी हैं। राष्ट्र भक्त हैं। राष्ट्र को एकता के सूत्र में बांधने के लिए जब छोटे छोटे राज्यों को विल्लीन किया गया और जन साधारण एवं शासकों को एक सरीके अधिकार प्रदान किये गये तब कवि का हृदय फूला नहीं समाया उनका कवि हृदय बोल उठा:–

गाँव शहर सब गले मिला प्रदेश बना है हिन्दुस्तान।
जिस में राजस्थान के राणा रखते अपनी निशान।
थोड़े से राजाओं थे, अब राजे बन गये सब इन्सान,
हर राजस्थानी राजा है, राजाओं का यह स्थान।
पद्मिणि वो प्रताप प्यारा कौन भुलाने वाला,
बिखरे मोती जब मिलते हैं बन जाती है माला।

कवि की हृदय विशालता का दर्शन निम्न लिखित काव्य पंक्तियों से होता है –

भूल न जाना पर राजस्थानी पहले है तू हिन्दुस्तानी।
संसार सरासर देश हमारा, जाती है तेरी इन्सानी।।
मेरा दिलबर मेरा रहबर लाल जवाहर है लासानी,
जिस के सुलह संदेश पर दुनिया है हैरानी।
मेरा मोहन सारे जग को मोहत करने वाला,
बिखरे मोती जब मिलते हैं, बन जाती है माला।

महंत आचार्य स्वामी गणेशदासजी महाराज

साधुबेला आश्रम के पीठाधिपति महंत आचार्य स्वामी गणेशदास जी का जन्म १४ फरवरी सन् १८२९ ई में सिन्ध प्रांत के एक प्रतिष्ठ परिवार में हुआ। उन्हों ने सन् १९४१ में सिन्ध के महान कर्मयोगी संत एवं साधुबेला आश्रम के पीठाधीश्वर स्वामी हरिनामदास जी महाराज से दीक्षा ग्रहण की। उन्हों ने वृन्दावन व वाराणसी में हिन्दी–संस्कृत का गहन अध्ययन किया। प्राचीन संस्कृत साहित्य, भारतीय दर्शन एवं श्रीमद् भगवद् गीता का विशेष अभ्यास किया। उन्होंने अपने गुरु स्वामी हरिनामदासजी महाराज की बड़ी निष्ठा एवं श्रद्धा के साथ सेवा की। देश विभाजन के पश्चात् वे दो वर्षों तक साधुबेला आश्रम सक्खर में संकटों का सामना करते हुए आश्रम की अच्छी तरह देख–रेख करते रहे।

सन् १९४९ में पूज्यपाद महंत स्वामी हरिनामदासजी महाराज ब्रहम लीन हुए। उनके सिंहासन पर स्वामी गणेशदाजी महाराज को प्रतिष्ठित किया गया। स्वामी गणेशदासजी महाराज प्रतिभा संपन्न, कर्मठ वरिष्ठ विद्वान संत हैं। उनके ही प्रयास–परिश्रम से बम्बई के साधुबेला आश्रम पर विशाल दर्शनीय भवन एवं मंदिर बना। स्वामीजी की प्रशंसनीय प्रबंध–पटुता के कारण ही वाराणसी वृन्दावन, हरिद्वार, पंचवटी, देहरादून, उत्तर काशी, दिल्ली, रायपुर व पटियाला में साधुबेला आश्रम की स्थापना हुई है। वाराणसी में तो विद्यार्थियों के विशेष अध्ययन के लिए स्वामीजी ने साधुबेला संस्कृत महाविद्यालय की स्थापना की है। वहां विद्यार्थियों को न केवल निःशुल्क विद्या दी जाती है अपितु उनके आवास, भोजन, पुस्तकों एवं वस्त्रों की भी व्यवस्था की है। हरिद्वार में 'आत्थियम्' स्वामीजी की अनमोल देन हैं।

आचार्य स्वामी गणेशदासजी महाराज की प्रेरणा से साहित्य, स्वास्थ्य, कृषि एवं विद्या के क्षेत्र में अनेक सेवा के कार्य हो रहे हैं। उन्होंने उल्हासनगर में विद्यालय एवं महाविद्यालय स्थापन करने की योजना बनाई हैं, जो शीघ्र ही कार्यन्वित होगी।

प्रेमियों के अनुरोध पर स्वामीजी ने दक्षिण–पूर्व एशियाई राष्ट्रों का भ्रमण भी किया। वहां उन्होंने सनातन धर्म एवं भारतीय संस्कृति–सभ्यता पर विद्वत्ता पूर्ण व्याख्यान दिये। स्वामीजी भारत के विभिन्न नगरों में जाकर आध्यात्मिक एवं राष्ट्रीय चेतना लाने का प्रयास कर रहे हैं। राष्ट्रीय रक्षा कोश में भी स्वामीजी ने यथायोग्य योगदान दिया।

स्वामीजी ने सत् साहित्य का सृजन किया है। उन्हों ने 'वेदान्त और अद्वैतवाद' पुस्तक लिखी है । उनके लेख भी विभिन्न पत्र पत्रिकाओं में प्रकाशित हुए हैं। काव्य सृजन :– स्वामीं गणेशदासजी महाराज संत के साथ साथ सहृदय कवि भी हैं । कविता उनकी भक्ति साधना की उपज है । स्वामीजी उदासीन सम्प्रदाय के संत हैं, इसलिए उदासीन सम्प्रदाय के संस्थापक जगद्गुरु श्रीचन्द्राचार्य के लिए उन के मन में जो अटूट अनन्य भक्ति भावना एवं श्रद्धा है, वह काव्य के रूप में परिणत हुई है । 'चरितामृत' उनकी अमूल्य काव्य कृति है । इस खंडकाव्य में स्वासीजी ने जगद्गुरु श्री श्रीचन्द्र आचार्य के जीवन एवं कार्य कलापों का प्रवाहोत्पादक हिन्दी भाषा में वर्णन किया है। भारतीय परम्परा को अपनाते हुए उन्होंने मंगलाचरण से उपर्युक्त खंड काव्य का प्रारंभ किया है । मंगलाचरण में कवि गंगा यमुना सरस्वती नदियों एवं अन्य तीर्थों की स्तुति गाते हुए कहते हैं :–

जय माँ गंगे जय सुर सरिते, जय कालिन्दी अगम अपार ।
जय सरस्वती ! जय अक्षयवट ! ज्योति तीर्थ पति परमोदार ।
नीलाम्बर यह अरुणोद्य, कलकल छलछल ध्वनि अविराम,
पुण्य त्रिवेणी के सिक्ता कण, धन्य धन्य शिव शोभा धाम ।[1]

स्वामीजी जगद्गुरु श्री श्रीचन्द्र आचार्य को भगवान श्री शंकर महादेव का अवतार मानते हुए उनके अवतरित समय का उल्लेख करते हुए कहते हैं कि श्री श्रीचन्द्र आचार्यजी ज्ञान के दीप थे जिनके प्रकाश से जगत् में से अज्ञान अंधेरा दूर हो गया और संसार सुखमय हुआ । कवि के मूल शब्दों में :–

माँ सुलक्षणा की गोदी का लाल बना जग का आलोक ।
ज्ञान–दीप बन कर वह चमका सारी संसृति हुई अशोक ।।
धन्य धन्य माता सुलक्षणा, धन्य पिता गुर नानक देव ।
जिनकी पावन गोदी में अवतरित हुए शंकर स्वयमेव ।।

कवि इस खंड काव्य में श्री श्रीचन्द्राचार्य के समय का चित्र प्रस्तुत करते हुए कहते हैं कि चारो ओर आतंक एवं अत्याचार का वातावरण था । धर्म व संस्कृति को नष्ट भ्रष्ट किया जा रहा था :

ऊपर गगन उदास धरा पर प्राण हीनता का साम्राज्य ।
लूट लिया बर्बर बाबर ने भारत का अवशेष स्वराज्य ।
उधर संस्कृति मरण शील थी, इधर यवन वैभव विस्तार,
मांस मद्य मैथुन मुद्रा मत्स्य प्रेम के मनोविकार ।[1]

---

१ चरितामृत आचार्य स्वामी गणेशदासजी महाराज

गुरु श्री अविनाशी मुनिने श्री श्रीचन्द्रजो महाराज को उदासीन सम्प्रदाय की शिक्षा देते हुए आज्ञा दी :–

उदासीन का सहज धर्म है, आत्म मुक्ति मानव कल्याण ।
चतुर्थाश्रमी बनकर भी वह देता रहे जगत् को त्राण ।
उदासीन जन–नायक बनकर, करें समुन्नत सकल समाज ।
यह गम्भीर गिरा गुरवाणी, यह जीवनमय मंत्रोच्चार ।
सारी सुधा ही कुटुम्ब है. सारा भारत है परिवार ।
इसके ही रक्षार्थ करो तुम उदासीन व्रत अंगीकार ।

स्वामी गणेशदासजी महाराज की राष्ट्रीय भावना निम्न काव्य पंक्तियों से प्रतिभासित होती है :–

अपना धर्म, कर्म सब अपना, अपनी भाषा अपना देश ।
अपनी यह भारत माता ही सच ब्रह्मा है विष्णु महेष ।

स्वामीजी का यह विश्वास है कि राम–राज्य द्वारा ही समाज व देश की उन्नती होगी । वे कहते है :–

मर्यादा पुरुषोत्तम का भी एक मात्र यह था आदर्श।
राम राज्य की यही कल्पना इस में ही सब का उत्कर्ष।
जो शास्क अन्याय करेगा हो न सकेगा वह कृतकार्य ।
उनका नाश सुनिश्चित जानो सत्य कह रहा हूं मैं आर्य ।

स्वामीजी के काव्य में छेकानुप्रास एवं रुपक अलंकार का अच्छा प्रयोग हुआ है। उनकी भाषा संस्कृत निष्ठ है प्रस्तुत हैं छेकानुप्रास, रुपक के कुछ उदाहरण–छेकानुप्रास

धन्य धरा हो गयी वहां की हुआ पंचनद परम पुनीत।
यह गम्भीर गिरा गुरवाणी यह जीवनमय मंत्रोच्चार ।

रुपक : भाग्य भास्कर उठा देश का चमका वैभव पूर्ण ललाट ।
महक उठा जीवन का उपवन पाकर पावन पद्म पराग ।

वर्ण मैत्री एवं समासों का इनके काव्य में सुंदर समावेश हुआ है ।
यह नीलाम्बर यह अरुणोदय कल कल छल छल ध्वनि अविराम ।
जय माँ गंगे जय सुर–सरिते ।
यहां नीलाम्बर, अरुणोदय, सुर–सरिते समास हैं, कल कल छल छल वर्ण मैत्री के उदाहरण हैं ।

भाव पक्ष एवं कला पक्ष की दृष्टि से आचार्य स्वामी गणेशदासजी का 'चरितामृत' खंडकाव्य महत्त्वपूर्ण है ।

डॉ० अर्जुन सिकायल

डा० अर्जुन सिकायल का जन्म सन् १९१९ ई में सिधूजा गांव में हकीम डेटाराम नाथाणी के घर में हुआ। श्री अर्जुन ने अपने पिताजी से हक्मत की शिक्षा ली। वे कवि के साथ साथ अच्छे गद्यकार एवं पत्रकार भी हैं।

उन्हें 'लेनिन' पुस्तक पर सोवियत भूमि पुरस्कार भी प्राप्त हुआ है। उनका उपनाम 'सिकायल' है। उन्होंने हिन्दी में फुटकर काव्य की रचना की है।

कवि सिकायल ब्रह्मा, विष्णु महेश को एक ही निराकार ब्रह्म का रूप मानते हुए कहते हैं –

ब्रह्मा विष्णु महेश को जानू एक सरूप।
निरविकार निर्लेप व निरभै आदि अनूप।।

सूर्य में भी उस ब्रह्म का ही प्रकाश है, इस लिए कवि सूर्य देवता को भी प्रणाम करते हैं –

सूर्य देव संसार में है प्रभु का प्रकाश।
वंदन उस को सब करें होत अंधेरा नाश।।

कवि सिन्ध के अवतार उडेरोलाल की महिमा गाते हुए कहते हैं –

लाल उडेरा लाडला, पूरन कामी आप।
दर्शन दूलह लाल का, काट सके संताप।

कवि सिकायल के मन में देश के प्रति जो प्रेम है वह उनके निम्न काव्यंश से परिलक्षित होता है –

अमानत देश की ये ज़िन्दगानी है चले आओ!
कि पाकिस्तान की गर्दन झुकानी है चले आओ!
कसम तुझको है गंगा की व यमुना की कसम तुझको,
कि ख़तरे में पड़ा रावी का पानी चले आओ!
हिमालय ने पुकारा है, अजन्ता ने पुकारा है,
मिटाना है अदू को बात ठानी है, चले आओ!

श्री गोवर्धन भारती

श्री गोवर्धन भारती का जन्म सिन्ध प्रदेश के दादू ज़िले के 'आरामनी' गाँव में १३ जनवरी सन् १९२९ में श्री आसूमल महबूबाणी के घर में हुआ। 'भारती' उनका उपनाम है। वे १९४७ से अजमेर में पश्चिम रेलवे के लेखन विभाग में काम करते हैं। वे लोक प्रिय कवि एवं गायक भी हैं। आधुनिक सिन्धी साहित्य में उनका महत्त्वपूर्ण योगदान है। वे कवि के साथ साथ कहानीकार, नाटककार एवं कलाकार भी हैं। उनके गीतों, कविताओं, कहानियों नाटकों की करीब १८ पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं। उन्हें भारत सरकार के शिक्षा एवं समाज कल्याण मंत्रालय द्वारा उनकी दो पुस्तकों 'लातियूं' एवं 'नई बस्ती' पर पुरस्कार भी प्राप्त हुए हैं। आकाशवाणी के विभिन्न केंद्रों से उनके गीत प्रकाशित होते रहते हैं।

उन्होंने हिन्दी में 'उमर मारुई' नाटक भी लिखा है। उन्होंने सिन्धी के साथ साथ हिन्दी में भी कुछ गीतों की रचना की है। प्रस्तुत है उनके अप्रकाशित हिन्दी गीतों का विवेचन –

कवि गोवर्धन भारती एक प्रगतिशील कवि हैं। प्रस्तुत है उनके क्रान्ति-कारी भावनाओं से ओत प्रोत पद्यांश –

मैं राख नही, अंगारा हूँ।
जो जग को खाक बना डाले, चाहूं तो ऐसी आग बनूं,
चाहूं तो दीपक-राग बनूं जग का सिन्दूर सुहाग बनूं,
झूमूं तो जगमग ज्योति बनूं मचलूं तो एक शरारा हूं।
मैं राख नहीं अंगारा हूँ।

बन जाती है इक रात नई, जिस ओर कदम बढ़ जाते हैं।
पैरों के धूल भरे छाले, फूलों की तरह मुस्काते हैं,
जो चटानों को चीर चले, मैं वह बलशाली धारा हूं।
मैं राख नहीं अंगारा हूँ।

विरह वेदना:– कवि गोवर्धन भारती के कुछ विरह–गीत भी हैं, जिन में उनके वियोग व्यथित मन का चित्रण मिलता है। कवि भारतीजी कवि कालिदास से प्रभावित होकर धनघोर घटाओं से अपनी विरह व्यथा का वर्णन करते हैं –

ओ मतवाले, बादल काले,
जा साजन के देश उनसे कहना ये संदेश!
घड़ियां गिन, दिन काट रही हूं, तारे गिन गिन रात,
दिल में आस लिए बैठी हूं, नयनों में बरसात.
चंदन जैसी काया मेरी, जोगन जैसा भेष।

कवि मन के आँगन में कल्पना के आगमन की प्रतीक्षा करते हुए कहते हैं –

आओ मेरी मधुर कल्पना आओ! छम छम करती आओ!
धीरे धीरे आँखों में सपना बन छा जाओ!...
नव प्रकाश सी दीप्त तुम्हारी छाया कंचन काया,
देख तुम्हारा मुखड़ा चन्दा भी शर्माया
खोलो गीले, होठ रसीले, फूलों सी मुस्काओ ... आओ.

कवि के मन में जब प्रियतम का विस्मरण होता है तब उनकी भावनाएं गीतों के रूप में प्रकट होना चाहती हैं। किन्तु वे गीत एक शर्मीली दुल्हन की भाँति बाहर नहीं आते। ऐसी मनोदशा का चित्रण प्रस्तुत करते हुए कवि भारती कहते हैं –

होठों के पास न आते हैं,
मन ही मन में रह जाते हैं,

ये गीत बड़े शर्मीले हैं,
दुल्हन की तरह लजीले हैं।
बदली को देख बरसते हैं, सावन की भीगी रातों में,
दीपक से जल जल बुझते हैं, रिम झिम रिम झिम बरसातों में,
किस निर्मोही की याद लिए व्याकुलता विरह विषाद लिए,
ये नयन अभी तक गीले हैं....

कवि अपनी दुखद मनोदशा की प्रतिछाया चारों ओर प्रकृति में भी देखता है –

मेरा दुःख जब जब गाता है,
दुनिया का दिल भर आता है।
दो पहरी गुम सुम रहती है, संध्या लगती है बेगानी,
दिन ढलते ही आ जाता है, अम्बर की आंखों में पानी।
रोती है रजनी, चंदा का खिलता मुख, कुम्हला जाता है,
मेरा दुःख जब जब गाता है, दुनिया का दिल भर आता है।

कवि भारती के गीतों में वीर रस एवं व्योग श्रृंगार का परिपाक हुआ है। उनके काव्य में छेकानुप्रास, रूपक एवं उपमा अलंकार का अच्छा प्रयोग हुआ है। उनकी भावुकता उनके गीतों से छलक पड़ती है। उन्होंने कुछ गज़ल भी लिखे हैं, जिन में गज़ल के नियमों को निभाया हैं और भावों के अनुरूप भाषा का प्रयोग किया है। प्रस्तुत है उनके गज़ल का एक शैर जिस से उनकी गजल की शैली का अंदाजा लगाया जा सकता है –

नशीले शब नज़ारों के कदम भी लड़खड़ाते हैं,
सितारों के लबों तक जाम आकर टूट जाते हैं।
अभी तो आस्माँ के हाथ में है, चाँद का साग़र,
अभी तो चाँदनी की झील में सपने नहाते हैं!

स्वामी गणपतिप्रसाद महाराज उदासीन

स्वामी गणपतिप्रसादजी महाराज का जन्म सिन्ध प्रदेश के सक्खर नगर में सन् १९३२ ई. में सेठ बीखचन्द लखोमल बनवारी के घर में हुआ । उनके जन्म का नाम गोबिन्द था । आठ वर्ष की आयु में उनके माता-पिता ने उन्हें तत्कालीन सूखा साधुबेला के महंत स्वामी संत प्रसाद के कमल चरनों में अर्पित किया । सत्गुरु स्वामी संत प्रसाद के चरनों में बैठकर बालक गोबिंद ने संस्कृत भाषा का अध्यन आरंभ किया । बारह वर्ष की आयु में सत्गुरु स्वामी संत प्रसाद ने उनका यज्ञोपवीत संस्कार कर उनका नाम गणपति प्रसाद रखा । उन्होंने श्रीमद् भगवद् गीता, श्री रामायण एवं शास्त्रों का अभ्यास किया । देश विभाजन के बाद सन् १९४७ में वे अपने गुरु स्वामी संत प्रसाद के साथ आगरा में आये । उन्होंने 'आयुर्वेद रत्न' की उपाधि प्राप्त की, साथ साथ ज्योतिष विद्या का भी अभ्यास किया । सन् १९५८ ई. में उनके गुरु स्वामी संत प्रसाद ब्रह्मलीन हुए और महंत स्वामी गणेशदासजी महाराज ने उन्हें स्वामी संत प्रसाद महाराज की गदी पर बिठाया । स्वामी गणपतिप्रसाद महाराज धर्मपीठाधींश होने के बाद भारत के विभिन्न नगरों एवं विदेश के कई देशों, हांगकांग, सींगापुर. फिलपाईन, इन्डोनेशिया, एवं अरब देशों में गये, जहाँ उन्होंने भारतीय संस्कृति सभ्यता एवं हिन्दू धर्म का संदेश दिया । वे महान कर्मयोगी संत हैं । वे साधुबेला आश्रम काला महल आगरा में सेवा व स्मरण की ज्योति जगा रहे हैं । उन्होंने सिन्धी एवं हिन्दी में फुटकर काव्य लिखा है । प्रस्तुत है उनके हिन्दी काव्य का संक्षिप्त विवेचन ।

गुरु महिमा :- स्वामी गणपति प्रसाद महाराज अपने सत्गुरु एवं उनके पूर्वज गुरुओं की स्तुति गाते हुए उनसे अनुकम्पा की याचना करते हुए कहते हैं :-

श्री गुर बनखण्डी प्रभु श्री गुर हरि प्रसाद ।
कृपा करो अब दास पर, नाशो मम प्रमाद ।
मुनि आतम प्रासादजी, सद्गुरु दीन दयाल ।
हम हैं अवगुण युक्त प्रभु, क्षमा करो कृपाल ।।
सद्गुरु संत प्रसादजी, दीनानाथ दयाल ।

गणपति अपने भक्त पर, कृपा करो कृपाल ॥[1]

दुर्गादेवी स्तुति :– स्वामी गणपति प्रसादजी दुर्गामाता की स्तुति गाते हुए कहते हैं :–

दुर्गा माँ तू, काली माँ तू, लक्ष्मी तेरो नाम ।
जो भी तेरी शरण में आए, तांके पूर्ण काम ॥
'गणपति' तेरे द्वार पै आये, निशि दिन तेरा ध्यान लगाये ।
शत्रु निवारणी, मम सुख दायिनी, माँ तुझको प्रणाम ॥[2]

स्वामी गणपति प्रसादजी ने भगवान श्री रामचन्द्र एवं केवट का संवाद कविता बध्द किया है । जब श्री राम गंगा पार जाकर केवट को अंगूठी देते हैं तब केवट श्री राम से कहता है :–

तब केवट कहता प्रभु रामजी हम दोनों एक भाई हैं ।
लेता नाई से नाई है न लेता धोबी धुलाई है ।
जैसा काम तुम्हारा स्वामी वैसा काम हमारा है ।
हम इस गंगा के केवट हैं, तुम दुनिया भर के केवट हो ।
प्रभु काम दोनों का एक ही है फिर यह क्यों मुझे देवत हो ।
इन बातों को कह कर केवट चरणों पर गिर जाता है ।
देख प्रेम श्री राम उठा कर प्रेम से गले लगाता है ।[3]

भगवान श्री राम के जिन चरण–कमलों को देवता भी छू नहीं सकते, केवट ने भक्ति के कारण उन पाद पंकजों को प्राप्त किया ।

जो पद दुर्लभ सुरन को, पाया केवट राज ।
गणपति प्रभु की भक्ति में पावत सब सुख माज ।[4]

---

१ संत भजन माला — प्र : स्वामी गणपतिप्रसाद — पृष्ठ १
२ देवी कवच — प्र : स्वामी गणपतिप्रसाद — पृष्ठ १४
३ संत भजन माला — पृष्ठ १२
४ संत भजन माला — पृष्ठ १२

स्वामी रघुनंदन प्रसाद उदासीन

स्वामी रघुनंदन प्रसादजी का जन्म सिन्ध प्रदेश के सक्खर नगर में सन् १९३२ ई. में श्री रुपचंद खटर के घर में हुआ । इसके पूर्व श्री रुपचन्दजी को संतान नहीं थी, स्वामी संत प्रसाद की आशीर्वाद से ही उन्हें दो पुत्र हुए । श्री रुपचन्द ने अपने प्रथम पुत्र श्री रघुनंदनजी को सत्गुरु स्वामी संत प्रसाद के चरणों में अर्पित किया । बालक रघुनंदन ने स्वामी संत प्रसादजी से दीक्षा ग्रहण की । उनके मार्गदर्शन से हिन्दी, संस्कृत एवं सिन्धी भाषा का अभ्यास किया । देश विभाजन के पश्चात् वे वृन्दावन में सत्गुरु महाराज जी के साथ आये । तद्नन्तर वे आगरा में आये, जहाँ उनके गुरु महाराज ने साधुबेला आश्रम की स्थापना की । सन १९५४ ई. में उन्होंने आगरा में सिन्धु साहित्य मंडलकी स्थापना की ।

स्वामी रघुनंदन प्रसाद महाराज भारत के विभिन्न नगरों में धार्मिक, आध्यात्मिक व सामाजिक विषयों पर व्याख्यान देते हैं । उन्होंने सिन्धी एवं हिन्दी में काव्य रचना भी की है। सिन्ध के महान कवि सामी साहब के कुछ श्लोकों का हिन्दी पद्य में अनुवाद किया है । उनका अधिकतर हिन्दी काव्य अप्रकाशित है । प्रस्तुत हैं उनके हिन्दी काव्य का संक्षिप्त विवेचन ।

महाराज रघुनंदन प्रसाद भगवान श्री राम के अनन्य उपासक हैं। वे भगवान श्री राम की स्तुति गाते हुए कहते हैं कि श्री राम सर्वत्र विराजमान हैं, वे जगत् का कल्याण करते हैं, जो आस्था, श्रद्धा व विश्वास के साथ उनका ध्यान करता है, उसकी कामनाएं पूर्ण होती हैं । कवि के मूल शब्दों में–

मंगलदायक राम है सब घट बसते राम ।
अंतर मुख जिन देखिया, तिनके पूरन काम ॥

स्वामी रघुनंदन प्रसाद भगवान श्री राम एवं रावण की तुलना करते हुए, श्री राम की महानता प्रतिपादित करते हैं । वे कहते हैं :–

सत्य राम शासक किन्तु प्रजातंत्र का मूर्तिमान प्रहरी ।
असत्य रावण शासक भी है जातन्त्र का विगठनकारी ।
दोनो शासक हैं किन्तु एक पोषक दूसरा शोषक है ।
प्रथम नाम अक्षर की समता भी बड़ी रोचक है ।
राम का 'र' शान्ति का दाता अज्ञान हटाता है ।

रावण का 'र' अज्ञान दुर्जन अत्याचार बढ़ाता है ।
एक का चित्र मंदिर में खूब सजाया जाता है।
एक का पुतला प्रति वर्ष जलाया जाता है ।
कुल में राम का नामकरण करना सब को प्रिय भाता है ।
किसी को भी रावण सम्बोधित करना अपमान जनक कहलाता है।

स्वामी रघुनंदन प्रसादजी ने विभिन्न विषयों पर दोहे भी लिखे हैं । उदाहरणार्थ प्रस्तुत हैं उन्ही द्वारा रचित कुछ दोहे ।

सांची सेवा कीजिये, भक्त मये हनुमान ।
जहाँ राम सेवक वहीं, दोनों का जय गान ॥
माला फेरै मन फिरे तब तो करनी होय ।
माला भी घिसती गई समय भी दीया खोय ।
सत् संगति नित होय जहाँ संतन कउ सम्मान ।
राम राज्य तहं है सदा मिलते नित भगवान ॥
नर तो तुम अब बन गये नारायण जब होय ?
पारायण भी बहु किये, पारायण कब होय ।

कवि शरीर के लिए साबुन की उपमा देते हुए जीवन का यथार्थ चित्र प्रस्तुत करते हैं। चिन्ता रुपी डायन आत्म बल का भक्षण करती है, इसी कारण शरीर भी क्षीण होता जाता है । कवि ने एक ही दोहे में उपमा व रूपक अलंकार का प्रयोग किया, यह उनकी काव्य विशेषता है ।

साबुन जैसा घिस गया, तेरा तन यह हाय ।
चन्ता डायन है बड़ी, आत्म–बल भी खाय ।

कवि संतों एवं दुर्जनों के स्वभाव में अंतर बतलाते हुए कहते हैं :–

नौ की संख्या साधु है समता के हैं रुप।
दुर्जन संख्या आठ है घटत बढ़त ज्यों धूप ।

कवि के मन में भगवान श्रीकृष्ण के दर्शन की उत्कट अभिलाषा है । वे उनके विरह में व्यथित हैं । वे विनीत भाव से कहते हैं :–

हे कृष्ण कन्हैया आजा तू तेरे दर्शन की है प्यास ।
रात दिन तेरी राह निहारुं, मैं बलिहारी जाऊँ।
तेरे बिना मैं पल पल रोऊँ नैना नीर बहाऊँ।
अब श्याम मुरारी दर्शन दे दे है तेरे दर्शन की आस ।[१]

---

१ संत भजन माला पृष्ठ १७

प्राचार्य आसनदास वास्वाणी

श्री आसनदास का जन्म बंगुलदेरा लाड़काणा में सन् १९३३ ई में श्री साबलदास वास्वाणी के घर में हुआ। उनका उपनाम 'मजबूर' है। वे तोलाणी आर्टस कालेज के प्राचार्य हैं। उन्होंने सिन्धी, हिन्दी एवं अंग्रेज़ी भाषा में साहित्य साधना की है। उनका सिन्धी काव्य संग्रह 'ज़िदगीअ जा नगमा' प्रकाशित हुआ है। वे अधिकतर व्यंग्यात्मिक गद्य लिखते हैं। आकाशवाणी के भुज केंद्र से उनके व्याख्यान प्रसारित होते हैं। प्रस्तुत है उनके हिन्दी काव्य का संक्षप्ति विवेचन –

श्री वास्वाणीजी ने अधिकतर देश भक्ति से ओत प्रोत कविताएं लिखी हैं, जिन में वीर रस का परिपाक हुआ है। वे पथिक को प्रोत्साहित करते हुए कहते हैं –

आगे आगे चल तू राही,
आंधी और तूफान देखकर, आती है क्यों तुझे रुलाई।
लड़ने से तुम जी न चुराओ,
अपने पथ पे बढ़ते जाओ,
रुकना काम नहीं वीरों का,
क्यों तू ने यह बात भुलाई!
आगे आगे चल तू राही।

कवि महात्मा गांधी को श्रद्धांजलि अर्पित करते हुए कहते हैं –

निराशा की आंधी तू आये मिटाने,
हमें एक नूतन सहारा दिलाने।
हिल्लोरित तेरे दिल में था प्रेम सोता,
तेरे हित कोई भी पराया न होता,
दुखी बेबसों को तू आये उठाने।

कवि की निर्भीकता एवं राष्ट्रीयता की भावना निम्न काव्य पंक्तियों से झलकती है –

हम हैं भारत के जवां, हम हैं वीरों की संतान,
हम हैं शेरों से बलवान, आगे बढ़ना अपनी शान।

कृष्णलाल बजाज 'प्रदीप'

श्री कृष्णलाल का जन्म १५ फरवरी सन् १९३५ ई. में सिन्ध प्रांत के गढ़ीयासीन नगर में श्री सूमोमल बजाज के घर में हुआ । उन्होंने संस्कृत एवं हिन्दी भाषा का गहन अध्ययन किया है। पंडित श्रीपाद दामोदर सातवलेकर के सान्निध्य में श्री कृष्णलालजी ने वैदिक साहित्य का अध्ययन किया, साथ साथ 'वैदिक जीवन' पत्रिका का संपादन भी किया । श्री कृष्णलालजी युवा साहित्यकार एवं पत्रकार हैं । वे 'युगधारा' मासिक का सम्पादन करते हैं । वे नई पीढ़ी के सिन्धी साहित्यकारों मे माने हुए कवि हें। उन्होंने सिन्धी एवं हिन्दी में काव्य साधना की हैं ।

श्री कृष्णलाल ने छंद–बध्द कविताएं भी लिखी हैं और नई कविताएँ भी लिखी हैं। छंद बध्द कविताओं में उन्होने छंदों के नियमों एवं अन्तयानुप्रास का निर्वाह किया है ।

कवि कृष्णलालजी ब्रह्म के साथ अपना तादातमय अनुभव करते हुए कहते हैं–

मेरा अनुभव है
हम दोनों एक ही हैं,
और मैं एक की ही खोज में हूँ,
एक को ही जानता हूँ,
एक को ही मानता हूँ,
एक की ही पूजा करता हूँ,
वही प्रथम है ।

ब्रह्म सर्व समर्थ है, उसकी अनुकम्पा से ही जगत् का कार्य चल रहा है, वह ही बाह्य जगत् एवं अंतरतर जगत् का ज्ञाता है, त्राता है, दाता है । कवि के मूल शब्दों में :–

सर्व समर्थ है,
अहैतुकी अनुकम्पा का दाता,
मानव जीवन का त्राता,
ब्रह्म जगत् एवं अन्तरतर–ज्ञाता ।

ब्रह्म सर्व व्यापी है, सब में समान रुप से विद्यमान है । कवि कहते हैं –

सब के एक तुल्य हृदयेश,
प्रिय हो तुम सबके अविशेष ।

सच्चे मानव के गुणों का वर्णन करते हुए कवि कहते हैं ।

जो सभी प्राणियों का हितैषी है, वैमनस्य एवं ईर्ष्या की भावना से दूर है, जिसका अपने इन्द्रियों पर नियंत्रण है, जो सदैव शान्त चित्त है, जो अहंत्व का त्याग कर प्रभु स्मरण में तल्लीन रहकर दीन दुखियों के दुःख दूर करने में व्यस्त है, जो निष्काम भावना से कर्म करता है, सब ही प्राणियों में आत्मा का साक्षात्कार करता है वह ही सच्चा मनुष्य है। कवि के मूल शब्दों में :–

हैं हितैषी जगत्–जन का दोष जों नहिं देखता,
है न ईर्ष्या–भाव जिस में, राग द्वेष नहिं पोषता।
इन्द्रियाँ अधीन जिसके , निःस्पृही औ' शान्त हैं,
है वही मानव सही यह सत्य औ' निर्भ्रान्त है,
खो अहं प्रभु–याद में जो, सर्वदा ही लीन हो,
दुःख दुखियों का मिटाने में सदा तल्लीन हो,
गुणों का अभिमान त्यागे, मेल दुर्गुण से न हो,
स्वात्म–सम समझे सभी को, है वही मानव सही।

दीपक स्वयं जल जल कर दूसरों को प्रकाश देता है, किन्तु जलते हुए दीपक की ओर कोई ध्यान नहीं देता है, जब वही दीपक बुझ जाता है, तब उसका मूल्य एवं महत्व आंका जाता है। निष्काम कर्मयोगी मनुष्य जो दूसरों की भलाई के लिए जीवन व्यतीत करता है, स्वयं कष्ट झेलकर दूसरों का उपकार करता है, जब ऐसा मनुष्य संसार से चल बसता है तब उसके महत्व एवं गुणों की महिमा गाई जाती है। कवि कृष्णलाल बजाज ने 'स्वार्थहीन दीपक' कविता द्वारा यह चित्र प्रस्तुत किया है :–

दीपक जब जलता है तब,
कोई ध्यान नहीं देता।
उस स्वार्थ–हीन सेवक को,
कोई मान नहीं देता!!
पर जब वह बुझ जाता है,
और तिमिर छा जाता है,
तब जग को उसके गुण का,
ठीक पता लग जाता है।

कवि कृष्णलाल जी के मन में भव्य भारत भूमि के प्रति जो प्रेम है वह उनकी निम्न काव्य पंक्तियों से छलकता है –

पावन धरती, पावन धूल,
खिलते रंग बिरंगी फूल,
मोद भरे मंगल के मूल,
गंगा और यमुना के कूल,
सारे सुख–सुषमा की खान,
दुन्या देती है सम्मान,
मेरा भारत वर्ष महान।

भारत वर्ष ने विश्व का मार्गदर्शन किया, विश्व को सत्य–स्नेह की राह दिखाई, सिद्धांतों पर मर मिटने का जिसने पाठ पढ़ाया, आज उसी भारत की संतान सिद्धांतों का त्याग कर एवं कर्तव्य विमूढ होकर असत्य के मार्ग पर चल रही है अर्थात् अधिकांश भारतवासीं अपने प्राचीन जीवन मूल्यों को भूल कर भौतिकता की ओर भाग रहे हैं। कवि के मूल शब्दों में:–

सत्य 'जीवन–ध्येय' पूरा प्राण देकर कर दिखाया।
ध्येय रक्षा में जिन्होंने हर्षयुत मरना सिखाया।।
उन्हीं की संतान अब क्यों!
हा अस्त्–पथ गह रही हैं?

कवि कृष्णलाल जी आशावादी कवि हैं। उन्होंने भाग्य की टूटी लड़ी में विश्वास को जोड़कर हार में भी जीत मानी है। जीवन में जो विपदाएं विकलताएं आई हैं उनसे वे कभी डरे नहीं, वे मृत्यु में भी जीवन के गीत गाते हैं।

भाग्य की टूटी लड़ी में जोड़ कर विश्वास,
हार को मैंने बनाया हर कदम पर जीत।
क्या हुआ जो ज़िन्दगानी में विकलता है,
और पीड़ा में दुखी इन्सान पलता है।
रोशनी आकर रहेगी इस अंधेरे में,
एक क्षण को हार जाना भी सफलता है,
इस लिए ही ले हृदय में ज्योति का सम्बल,
गा रहा हूं मौत में भी ज़िन्दगी के गीत।

प्राचार्य कन्हैयालाल तलरेजा

श्री कन्हैयालाल तलरेजा का जन्म सन् १९३६ ई में सिन्ध प्रदेश के हयात पिताफी गांव में श्री मघनदास तलरेजा के घर में हुआ। वे अंग्रेज़ी सिन्धी एवं फारसी भाषा के विद्वान हैं। 'भक्त कंवरराम' एवं 'वीर सावरकर' उनकी अमूल्य देन है। महर्षि स्वामी दयानंद को वे अपना आध्यत्मिक गुरु और वीर सावरकर को राजनैतिक गुरु मानते हैं। उनके मन में राष्ट्रीयता एवं हिन्दुत्व की भावना कूट कूट भरी हुई है। सम्प्रति वे चाँदीबाई हिमथमल मन्सुखाणी कालेज के प्राचार्य हैं। उन्होंने हिन्दी में फुटकर काव्य की रचना की है।

कवि समाजवाद का संदेश देते हुए देश में फैली हुई दरिद्रता का चित्रण प्रस्तुत करते हुए पूंजी पतियों से कहते हैं–

तेरे भाई हैं दरबदर तू रहता महलात में!
तेरे कुत्ते भी हैं ऐश में, वे रहते फिकरात में!
सब का है अधिकार, सब धरती की संतान,
तू लाख लुटाते हो, वे रोटी को परेशान!

कवि के मन में जो राष्ट्रीय भक्ति है उसकी प्रतिछाया उनके निम्न काव्य पंक्तियों से प्रतिभासित होती है:–

खून शहीदों का हरगिज़ि न होगा रायगां।
हर क़तरा पैदा करेगा उजड़े चमन में बागबां।
जिस भूमि ने जन्म दिया है वही हमारी माता है,
प्राण देंगे इस माता को जिससे खून का नाता है।

कवि प्रेम का महत्त्व प्रतिपादित करते हुए कहते हैं कि प्रेम से बढ़कर और कोई प्रार्थना नहीं। प्रेम द्वारा ही जीव आत्मा में परमात्मा का दर्शन कर सकता है।

प्यार से न बेहतर है कोई प्रार्थना।
प्यार ही दिखाता है आत्मा में परमात्मा।

डॉ. दयाल आशा

डॉ. दयाल आशा का जन्म सिन्ध प्रदेश के 'खैरपुर मीरस' नगर में सन् १९३६ ई. में श्री कोटूमल सोभराज धामेजा के घर में हुआ। उनके पिताजी श्री कोटूमल एवं माता पारीबाई संत सेवी थे। श्री दयालजी के चाचाजी श्री विशनदास एवं भाभी सदोरीबाई अपितु भक्त जन थे। वे नित नियम गुरुवाणी पढ़ते थे। घर के धार्मिक वातावरण में श्री दयालजी का पालन पोषण हुआ। 'आशा' उनका उपनाम है।

डॉ. सी. एल. प्रभात अध्यक्ष हिन्दी विभाग बम्बई विश्वविद्यालय के निर्देशन में श्री दयालजी ने "सिन्धी कवियों की हिन्दी साधना" शोध–प्रबंध प्रस्तुत किया। इस शोध प्रबंध पर उन्हें बम्बई विश्व विद्यालय ने पी. एच डी. की उपाधि प्रदान की। इस ग्रंथ की बुद्धिवादी समाज में काफी चर्चा हुई। श्री दयालजी अध्ययन, अध्यापन के साथ साथ दीन दुखियों की सेवा व साहित्यिक साधना में भी संलग्न रहे। वे सिन्धी एवं हिन्दी दोनों भाषाओं में साहित्य सृजन करते रहे। भारत उन्हें सरकार के शिक्षा एवं समाज कल्याण मंत्रालय की ओर से उनकी दो पुस्तकों "लाल बहादुर शास्त्री" एवं "बापू जे बाग मां" पर एक एक हजार के दो पुरस्कार प्राप्त हुए। सन् १९६९ में उन्हें उनकी हस्तलिखित 'शल अहिड़ा लाल ज़मन' पर यूनिस्को का १४०० रुपये का पुरस्कार प्राप्त हुआ। राष्ट्रीय प्रशिक्षण अनुसंधान परिषद की ओर से भी उन्हें 'दादा दर्शन' एवं 'महकंदड़ मुखिड़ियू' पुस्तकों पर एक एक हजार रुपये के दो पुरस्कार प्राप्त हुए।

सम्प्रति श्री दयालजी चाँदीबाई हिम्मतमल मनसुखाणी कालेज में सिन्धी विभाग के अध्यक्ष हैं। वे सिन्धी एवं हिन्दी के उदीयमान कवि भी हैं। सरस्वती माँ की कृपा से वे गायक भी हैं। आकाशवाणी के बम्बई, दिल्ली एवं विविध भारती केंद्रों से इनके कार्यक्रम प्रसारित होते रहते हैं।

उन्हें विश्व विख्यात साधु टी. एल. वास्वाणी जैसे महान संत एवं संत लीला शाह महाराजके कमल चरणों में बैठने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। स्वामी गुरदासराम स्वामी बाबा केशवदास उनके कुल गुरु हैं। ब्रह्मज्ञानी, ब्रह्मनेष्ठि ब्रह्मश्रोत्री संत स्वामी शान्तिप्रकाशजी महाराज एवं दादा जे. पी. वास्वाणी उन्हें गुरु रुप में प्राप्त हुए। परमराम 'जिया' व श्री हूंदराज दुखामल उन्हें साहित्यिक गुरु के

रुप में प्राप्त हुए । कवि दयालजी का व्यक्तित्व बहुमुखी है। वे साहित्यकार हैं, गायक है, समाज सेवी हैं, सुधारक हैं।

काव्य साधना : श्री दयालजी ने सिन्धी एवं हिन्दी में काव्य रचना की है । वे लोक कवि हैं । उनकी सिन्धी कविता का संग्रह 'पुष्प पंखिड़ियूं' एवं हिन्दी कविताओं का संग्रह 'तरंगे' प्रकाशित हुए हैं । विभिन्न पाठय पुस्तकों में भी उनकी रचनाएं दी गई हैं। प्रस्तुत है उनके हिन्दी काव्य का संक्षिप्त विवेचन ।

राष्ट्रीय भक्ति :– कवि दयालजी एक राष्ट्र भक्त हैं। उनके काव्य में उनकी राष्ट्रीय भावना का दर्शन मिलता है। वे भव्य भारत भूमि की स्तुति करते हुए गाते है :–

जय हो ! ज्योतिर्मय हो ? देश हमारा हिन्दुस्तान ।
स्वर्णमय हो मंगलमय हो, भारत वर्ष महान ।।
ये देश है वीर विज्ञानियों का, ये देश आध्यात्मिक ज्ञानिओं का ।
रामकृष्ण गांधी की भूमि गाते देव भी जिसका गान ।।

जब हमारे देश पर चीन एवं पाकिस्तान ने आक्रमण किया उस समय श्री दयालजी ने देशभक्ति से ओत–प्रोत कविताएं लिखकर भारतीय जनता को जागृत किया । उन्होंने स्वरचित कविताएं गा गा कर राष्ट्रीय भक्ति का संचार किया। प्रस्तुत है उदाहरणतः एक पद्यांश :–

जागो भारत की संतान !
गाओ ऋण भूमि का गान !
विद्युत बनकर रिपु पर टूटो,
हो शत्रु भूमि शमशान !
जागो भारत की संतान !

श्री दयाल आशा शहीद मेजर प्रेम रामचन्दाणी को श्रद्धांजली अर्पित करते हुए कहते है :–

विदा होके घर से तू सरहद पै आया,
सरगोदा अड्डे पर बमों को गिराया
तू बिजली व भूंचाल को साथ लाया,
रिपु आग पर तूने बरसाया पानी ।
वतन के लिए तूने दें दी जवानी !
रहेगी सदा याद तेरी कहानी ।

इष्ट की स्तुती :- डॉ. दयाल 'आशा' अपनी इष्ट वीणा वादिनी सरस्वती देवी भगवती मां से विनय करते हुए कहते हैं :-

जब तेरी स्मृति आती है,
सुप्त आशाओं को जगाती है।
मैं स्व को खोकर तुझको पाऊँ,
और चीज न मन को भाती हैं।
तेरा ही निरन्तर ध्यान रहे,
माँ तेरी स्मृति भक्ति है।

कवि भगवान श्री कृष्णचन्द्र आनंदकंद के विरह मे व्यथित हैं। वे वियोगावस्था में श्री कृष्ण से विनय करते हैं:-

कब दर्शन दोगे मुरारी,
मैं विरह की मारी मारी !
जीवन ज्योति बुझ जायेगी,
करुणा तुम्हें क्या तब आयेगी,
मैं न रहूगी मेरी भस्म मिलेगी !
तू लौट जाओगे बिहारी !
मैं बिरह की मारी मारी ! (अप्रकाशित)

नाम स्मरण :- कवि जीव को अज्ञान की गहरी नींद से जागृत करते हुए कहते हैं :-

मन राम नाम से लागो,
इक प्रेम प्रभु से मांगो !
रात गई अब हुआ सवेरा,
ना कछु तेरा ना कछु मेरा,
उठो मोह नींद से जागो।

कवि दयालजी प्रभु के कमल-चरणों में ही आनंद की उपलब्धि मानते हैं। वे प्रभु से प्रार्थना करते हुए कहते हैं :-

तेरे चरनों में ही सुख है,
और जगह पै दुख ही दुख है,
सुबह के भूले भटके हैं हम,
आए शाम को तेरे द्वार।
लगाओ नैया हमारी पार। (अप्रकाशित)

पीड़ितों के प्रतिनिधि :– डॉ. दयाल आशा दीन दुखियों, पीड़ितों के प्रतिनिधि हैं। उनके मन में दरिद्रों–पीड़ितों के लिए जो सद् भावना एवं सहानुभूति है वह उनके काव्य में झलकती है। कवि "बिहार का आँखों देखा हाल" कविता में अकाल पीड़ित बच्चों का दयनीय चित्र प्रस्तुत करते हुए करुण रस का संचार करते हैं।

क्या मैं सुनाऊँ बिहार का भाई आंखों देखा हाल !
हाल देखकर दिल भर आया, वहाँ नाच रहा था काल !
इंद्र देवता रुठ गया था, रुठ गया शायद भगवान !
त्राहि ! त्राहि ! कर भूख में मरने वहाँ लाखों थे इन्सान !
खेत भी सूखे, कुएं भी सूखे, सुमन हृदय का सूख गया,
पंखों वाले उड़ सकते हैं, बे पंखों को ही दर्द भया !
मुझे देखकर एक अचानक लड़की दौड़ी आयी।
वो पतली दुबली हड्डों की काया, रोती हुई चिल्लायी !
ठंडी ठंडी आहें भरती बोली बालिका रो रो कर !
बाप रहा नहीं माँ है मेरी, एक नन्हा भैया है घर !!
दो दिन से उसे दूध मिला नहीं, खाने को नहीं चीज़ !
सूख गये हैं होंठ उसीके, बुझ न जाये यह दीप !
जिस आंगन में रहती थी मैं गया उसी के साथ वहाँ !
तड़प तड़प कर मौत की सेजा पर सोया था नन्हा जहाँ !!
मैं किस को दूध पिलाऊँगी ! मैं किस को गले लगाऊँगी !
भैया मेरा ! भैया मेरा किसे अभी मैं बुलाऊँगी !!
ऐसे बिहार के दृश्य को देखकर करुणा भी रो पायी !
मैं भावुक रह सकता कैसे गंगा यमुना बह आयी !!

उर्दू शायरों की तरह श्री दयालजी ने हिन्दी में कुछ गज़ल भी लिखे हैं; जिन में उन्हों ने भावों के अनरुप भाषा का प्रयोग किया है। उनके जीवन की अनुभूति एवं मनो दशा का दर्शन उनके गज़लों में मिलता है। उदाहरण: प्रस्तुत है गज़ल के कुछ बंद :–

तमन्ना है न जीने की तो जीने की जरुरत क्या !
मुहब्बत का नशा गरि है तो पीने की जरूरत क्या !
बहाये उमिर भर आँसू जब दिल पे गम का डेरा था।
न अरमां है अगर कोई तो रोने की ज़रुरत क्या !

डॉ० मोतीलाल जोतवाणी

डॉ० मोतीलाल जोतवाणी का जन्म सिन्ध प्रांत के सक्खर नगर में सन् १९३६ ई में हुआ। वे सिन्धी, हिन्दी एवं अंग्रेज़ी के युवा विद्वान हैं। सम्प्रति वे देश बन्धु कालेज दिल्ली में सिन्धी विभाग के अध्यक्ष है। उनके शोध प्रबंध "शाह अब्दुल लतीफ: हिज़ लाईफ एण्ड वर्क" पर पी. एच. डी की उपाधि मिली। उन्होंने साहित्य के विभिन्न विधाओं में योगदान किया है। भारत सरकार के शिक्षा मंत्रालय की ओर से उन्हें 'ज़ीनत' उपन्यास का हिन्दी अनुवाद पर एक हज़ार रुपये का पुरस्कार मिला। प्रथम विश्व हिन्दी सम्मेलन में उन्हें ससान्नित किया यया। 'चांद के गीत' पुस्तक में उनके कवि हृदय का दर्शन होता है, उदाहरण प्रस्तुत है –

चन्दा लहरों में लौट – लौट जाता है,
जैसे कोई युवा घर में अपनी शैया पर मस्ता उठे
चंदा लहरों के दर्पण में अपनी छबि निहार–निहार उठता,
जैसे कोई मुग्धा आईने से बार बार देखें और हर बार रस ले।
लहर लहर में चाँद सो रहा है।
हर गोपी के साथ कृष्ण है।
यहाँ नफरत करने लायक कौन है?
सब सुंदर है। दुनिया सुंदर है।

कवि की भावनात्मक विचार–धारा एवं मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण की झलक निम्न नई कविता से मिलती है। कभी कभी ख़ामोशी शेष की सहस्र जिहाओं से बोलती है –

तो क्या ये मूक अश्रु कुछ नहीं बोलते?
यह कहना चाहता है, लेकिन कह नहीं पाता।
यह दिल है ज़बान नहीं!
ज़िबान क्या कहे?
यह ज़बान है, दिल का इसे क्या पता?
मैं क्या उत्तर दूं? गणित नहीं है कि दो और दो चार कहूं,
तो क्या ये मूक अश्रु, कुछ नहीं बोलते?

कवि हेमनदास

कवि हेमनदासजी का जन्म सन् १९३७ ई में हैद्राबाद सिन्ध में गोपालदास खूबचन्दाणी के घर में हुआ। स्वामी शान्तिप्रकाशजी महाराज उनके आध्यात्मिक गुरु हैं। श्री हेमनदास, कवि के साथ साथ अच्छे गायक भी हैं। उन्होंने सिन्धी एवं हिन्दी में काव्य रचना की है।

वे भगवान श्री कृष्ण से प्रार्थना करते हुए कहते हैं –

हे मुरारी! ओ बाँके बिहारी गोवर्धन धारी,
है नैया मझधार में इक मेरे तुम ही संसार में,
बनवारी तू बन जा खवैया, बचा ले यै नैया,

कवि भगवान श्री कृष्ण के दर्शन के लिए उत्सुक हैं, वे भगवान से अनुरोध करते हुए कहते हैं :–

आजा मेरे श्यामा तेरी याद मुझे तड़पाए,
हो जाए दीदार तेरा भाग्य मेरा जग जाए।

कवि भ्रम में भूले भटके जीव को जाग्रत करते हुए कहते हैं –

तू भूल ही बैठा है शायद ये दुनिया मुसाफिरखाना है,
मत इस पर कर विश्वास कभी ये जूठा इक अफसाना है,
जो सच समझे देवाना है, किस का रहा ठिकाना है?
सब कागज़ ज्यों गिल जाना है।

प्रभु का नाम ही सुखदाई है, नामस्मरण द्वारा अज्ञान अंधेरा हट जाता है। कवि नाम की महिमा गाते हुए कहते हैं –

दुख भंजन है नाम तुम्हारा, प्रेम से जो भी ध्याए,
धाम तुम्हारा मिले उसीको, अवश्य परम पद पाए;
स्मरण तेरा कटे अंधेरा, ज्ञान का खोले ताला।

कवि के मन में भारत भूमि के लिए जो श्रद्धा–भावना है उसकी झलक उनके निम्न काव्य पंक्तियों से मिलती है –

क्या महिमा गाऊं भारत की ये भूमि सब से न्यारी है,
क्या क्या न दिया इस भूमि ने ये भूमि हमको प्यारी है।
यहां दांत दान में सोने के ब्रह्मण को करण ने तोड़ दिये,
देता वो रहा मरते दम तक, चाहे प्राण भी अपने छोड़ दिये।
सिर झुका भाव से तू 'हेमन' ये माता परोपकारी है।

श्री मनोहर बेदी आज़िज़

श्री मनोहर 'अजिज़' का जन्म सन् १९३७ ई में कंडियारो नगर में श्री अर्जुनसिंह के घर में हुआ। सम्प्रति वे संत सिंह ओचाणी जुन्यर कालेज में शिक्षक हैं।उनका उपनाम अजिज़ है। उन्होंने सिन्धी एवं हिन्दी में साहित्य साधना की है। सरापियल युग में उनकी सिन्धी कविताएं संग्रहीत हैं। उनकी बाल गीतों की पुस्तक 'झिर मिर' पर राष्ट्रीय प्रशिक्षण अनुसंधान की ओर से एक हजार रुपये का पुरस्कार मिला है। उन्होंने हिन्दी में भी कुछ गीत एवं गज़ल लिखे हैं, जो अभी तक प्रकाशित नहीं हो सके।

कवि अजिज़ एक दरिद्र की मनो भावनाओं का चित्रण प्रस्तुत करते हुए कहते हैं कि गरीब आदमी जीवन की आवश्यकताओं को पूरा करना जाहते हैं अगर उन्हें सादी रोटी, झोपड़ी और सादे वस्त्र ही मिल जाते हैं तो वे संतुष्ट हो जाते हैं। वे धनिकों की भांति आकर्षणों को ओर नहीं भागते। एक गरीब व्यक्ति धनिकों को संबोधित करते हुए कहता है :-

जीवन जोंक बना है पल पल खून हमारा पीता है,
कितने मौतें मरता है, जो इस दुनिया में जीता है,
कदम कदम पर चित्ता जल रही, कदम कदम पर है शमशान,
जीने की खातिर हम मांगे, रोटी कपड़ा और मकान,
आख़िर हम भी हैं इन्सान !

कवि अजिज़ बेदी ने कुछ मिनी कविताएं भी लिखी हैं, जिन में उन्होंने नए प्रतिमानों को प्रस्तुत किया है। उदाहरणार्थ-

ईमानदारी
मेरे हिस्से में
सत्य
या तो कोई पागल बोल सकता है,
या कोई शराबी
मैं नहीं !

उपर्युक्त मिनी कविताओं में व्यंजना ममाहित है।

श्री बेदी ने कुछ गज़ल भी लिखी हैं, जिन में उन्हों ने गज़ल की शैली का पूरा निर्वाह किया है, उदाहरण-

आज तक हमने तो पाया न कहीं उसका सुराग़,
लोग कहते हैं कि दुनिया में वफा होती है।
तेरा दीदार ए आजिज़ नहीं तकदीर अपनी,
जब कि पर्दा नहीं होता तो हया होती है।

श्री वेदप्रकाश (श्री राजुराम शास्त्री)

श्री वेद प्रकाश का जन्म सिन्ध प्रान्त के पीर गोठ में सन् १९३८ ई में श्री पहूमल उत्तमचंद रोहड़ा के घर में हुआ। उनका सन्यास पूर्व नाम राजूराम है। सन् १९५० ई में वे स्वामी शान्ति प्रकाशजी महाराज के शरण में आये और उनसे गुर–मंत्र की दीक्षा ली। स्वामीजी ने उन्हें वाराणसी में विद्याध्ययन के लिए भेजा, जहां उन्होंने हिन्दी व संस्कृत भाषा का गहन अभ्यास कर शास्त्री एवं बी. ए. की परीक्षाएं उत्तीर्ण की। संतों के साथ उन्होंने सिन्धी एवं हिन्दी में फुटकर काव्य की रचना की है।

कवि गुरु की महिमा गाते हुए कहते हैं कि गुरु को राम रुप समझकर उनकी शरण लो तो तुम्हें प्रभु के दर्शन होंगे।

सत्गुरु के चलो द्वार रे।
सत्गुरु को तुम राम पछानो, दिल से करो नमस्कार।
तुझे हरि मिलेंगे।

जब साधक श्रद्धा के साथ गुरु की शरण लेगा तब उसे गुरु ज्ञान रुपी दीपक देंगे और उसके अन्तःकरण का अज्ञान अंधेरा दूर हो जाएगा।

ज्ञान का दीपक गुरु से मिलेगा,
चरणों में तेरा शीष झुकेगा, श्रद्धा से बैठाई मन में।

कवि ब्रह्म को सर्वत्र व्यापक मानते हुए कहते हैं :–

घट घट में प्रीतम की छाया,
खेल रहा वह सब की काया।

कवि ज्ञान रुपी गंगा में नहाने का परामर्श देते हुए कहते हैं :–

ज्ञान गंगा से नहाय प्यारे।
ज्ञान गंगा से पाप मिटेंगे सारे।

राम नाम की महिमा गाते हुए कवि कहते हैं कि राम का नाम त्रिवेणी है, संजवनी की भांति सुखदायी है।

राम ही तीर्थ राम ही त्रिवेणी। सहज संजीवन सुख की दानी।

कवि वेद प्रकाशजी भगवान श्री कृष्णचन्द्र के छबि का वर्णन करते हुए कहते हैं–

तेरी श्याम सलोनी सूरति कोटि कामदेव लजाते हैं,
चित्त चोर बने तुम देवों के मन मनुष्यों के हर्षाते हैं।

कवि श्री कृष्ण से कहते हैं कि तू ने न केवल गोपियों के चीर चुराये किन्तु तू माया का चीर हटा कर जीव को आवागमन से मुक्त करते हो।

तू ने चीर चुराये गोपियों के, तुझे चोर चोर सब कहतें हैं।
चीर पर्दे माया के तुमने हटा, जन्म मरण से छुड़ाते हैं।।

श्री प्रभुदास वाधवा

श्री प्रभुदास का जन्म सितम्बर १९३९ में सिन्ध के पीरगोठ नगर में श्री नानकराम वाधवा के घर में हुआ। वे चौथी भाषा तक मातृभाषा सिन्धी पढ़े और तत्पश्चात् हिन्दी की परीक्षाएं उत्तीर्णकर हिन्दी शिक्षक होकर हिन्दी का प्रचार करते रहे। सन् १९६२ में उन्हें ब्रह्मनेष्ठि ब्रह्मज्ञानी संत स्वामी शान्ति प्रकाशजी महाराज सत्गुरु के रुप में प्राप्त हुए। उनके सान्ध्य में वे भगवद् भक्ति के पथ पर चलने का प्रयास करने लगे, अब उनका मन सांसारिक उपभोगों से ऊब गया। व्यवसाय से वृत्ति टूट गई और वे स्वामी टेऊँराम आश्रम उल्हासनगर ५ में अपने आध्यात्मिक अधिष्ठाता की सेवा एवं प्रभु भक्ति में जीवन व्यतीत कर रहे हैं।

काव्य रचना:– श्री प्रभुदास के मन में वैराग्य वृति एवं उत्कट ईश्वर प्रेम उत्पन्न हुआ उसकी प्रतिछाया उनके फुटकल काव्य में प्रतिभासित होती है। वे संसार की नश्वरता का उल्लेख करते हुए कहते हैं –

मेरा मन ना लागे संसार में,
तन भी झूठा धन भी झूठा, झूठे सब संसारी,
झूठी काया, झूठी माया, झूठी दुनिया सारी,
सुख सांचा तेरे प्यार में।

दार्शनिक विचार:– कवि प्रभुदास के अनुसार ब्रह्म सर्वव्यापक होते हुए भी सब से निर्लिप्त है नियारा है।

घट घट में वो खेल रहा है, फिर भी सब से न्यारा है।

जीव अज्ञान के कारण ब्रह्म की प्राप्ति के लिए बाहर भटकता है, वह तो मन मंदिर में विराजमान है। कवि साधक को परामर्श देते हुए कहते हैं –

नगरी नगरी द्वारे द्वारे भटकत क्यों बांवरिया,
ज्ञान–दृष्टि से घट में खोजो बैठे हैं सांवरिया।
मथुरा में ना मोहन मिलते, ना वो बैठे वृन्दावन;
एक बार तो अंतर्मुख हो ढूंढले प्यारे अपना मन,
मन मंदिर में छुपकर बैठे बजा रहे मुरलिया।

भगवान श्री कृष्ण के प्रति अनुराग – श्री प्रभुदास के मन में उनके इष्ट भगवान श्री कृष्णचन्द्र आनंद के प्रति उत्कट अनुराग एवं मिलन की उत्कंठा है। वे भगवान से प्रार्थना करते हुए कहते हैं –

मेरे मन मंदिर के वासी,
प्रत्यक्ष प्रभु दर्शन दे दो, मिट जाये मेरी उदासी।
बिन दर्शन के तरसत हैं ये मेरे दो प्यासे नैना,
श्रवण सदा सुनन चाहें तेरे मधुर मधुर बैना,
दरश दिखाके बैन सुनाके, कर हृदय में हुलासी।

कवि भगवान श्री कृष्ण की प्रतीक्षा में जीवन की घड़ियां बिता रहे हैं। वे अपनी मनो–दशा का चित्रण करते हुए कहते हैं –

सकल जगत् के पालन हारे, सुर मुनियों के सरताज,
नन्द के लाला, हे गोपाला, मोरी विनती सुनो ब्रजराज।
तोरें मलन की राह में बैठे हम तेरी राह में,
नैन बिछाये, आस लगाये जलते रहे प्रेम दाह में,
प्रेम परीक्षा कब होगी पूरी, ये बता दो मुझे महाराज।

श्याम सुंदर की मुरली की मधुर आवाज़ सुनकर एवं उनकी मंद मंद मुस्कान देखकर स्वयं को भी भूल गया है। कवि के मूल शब्दों में :–

ब्रज राज की बांसुरी, मेरा मन मोह गयी,
मन्द मन्द मुस्कान देख, मेरी सुध–बुध खो गयी।

कवि के मन में 'ब्रज भूमि' एवं 'नासिक' नगर के लिए अगाध श्रद्धा है। वे स्वयं इन स्थलों पर जाकर भगवद् भजन में तल्लीन हो जाते हैं। वे कहते हैं –

जै ज जमुना मातु की, जै जै श्री ब्रज धाम।
जै जै गोपी ग्वाल सब, जै जै राधा श्याम॥

मोह तो नासिक नगरी भावै,
बार बार नासिक जाने को, मन मेरा ललचावै,
बलि बलि जाऊं ताँके ऊपर जो नासिक नाम सुनावै।
नैन नगरिया उसे बसाऊँ तप–बन की जो बात बतावै,
निरख निरख उसको हर्षाऊं गोदावरी जो नर नावै।
तन मन प्राण न्यौछावर कर दूं जो राम का दरश दिखावै॥

प्रो. भास्कर शर्मा

प्रो. भास्कर शर्मा का जन्म सन् १९४० ई में हैदराबाद सिन्ध में श्री चतुर्भुज लक्षमणदास शर्मा के घर में हुआ। उन्होंने बम्बई विश्व विद्यालय से एम. ए. की उपाधि प्राप्त की। वे एलफसटन कालेज बम्बई में हिन्दी के प्राध्यापक हैं। उनकी रचनाएं धर्मयुग एवं अन्य पत्र पत्रिकाओं में प्रकाशित होती रहती हैं। उन्होंने हिन्दी एवं सिन्धी में काव्य रचना की है। 'दिन के अंधेरे' काव्य संग्रह में उनकी नई कविताएं संग्रहीत हैं। कवि की स्वानु भूतिः–

जब जिंदा होते हुए भी आदमी
जिंदा नहीं होता
तब छटपटाती है कविता।

कवि की दार्शनिकता एवं भावुक्ता की झलक निम्न मिनी कविता से झलकती है :–

सुबह खिलते हैं फूल :
उदास कर देते हैं :
हम क्यों नहीं खिलते?

कवि पर पीड़ा को आत्मसात करता है। दीन दुखिग्रों को भूख में तरसते देखकर कवि भास्कर जी 'विलास नगर' कविता में उन पैसे वालों पर व्यंग्य करते हैं जो एशो आराम की ज़िन्दगी बसर कर रहे हैं।

वह भूखा आदमी
समुद्र के किनारे
लहरों में खड़ा
सीपी का गूदा खा रहा है;
समूद्र तट पर
इस महानगर के ऐयाश युवक
आइस्क्रीम, सैंडविच, चाकलेट
खाते हुए घूम रहे हैं!
उस भूखे आदिमी ने
खाने के सिवा
किसी से कोई बात नहीं की
और उस से किसी ने
उसे खा जाने के सिवा कोई बात नहीं की।

श्री गोवर्धन शर्मा 'घायल'

श्री गोवर्धन शर्मा का जन्म सन् १९४० ई में श्री नामदेव शर्मा के घर में हुआ। उनका उपनाम 'घायल' है। सम्प्रति वे डेक्न कालेज पुणे में सिन्धी शब्दकोश तैयार करने मैं संलग्न है।

वे साहित्यिक गतिविधियों में सक्रिय भाग लेते रहे हैं। 'छोड़ि सखी सरगम' 'उहे माउर भली मुरिकनि' 'कूंजूं थियुं कुणिकनि' उनके सिन्धी काव्य संग्रह हैं। उनके कुछ हिन्दी गीत 'कहानी झूलेलाल की' में संग्रहीत हैं।

कवि शर्मा जी भारतीय जवानों को दुश्मन का मुकाबिला करने के लिए उद्बोधित करते हुए कहते हैं –

> अब दूध छही का दुश्मन को तुम याद दिलाने वीर उठो,
> बन तीर उठो, शमशेर उठो, दुश्मन की छाती चीर उठो!

भारत पर जब दुश्मन ने आक्रमण किया तब कवि ने जवानों को आव्हान किया –

> ओ वीर बढ़ो रण–भूमि में सौगंध जवानी की लेकर,
> सौगंध उठाकर शंकर की सोगंध भवानी की लेकर!
> अब लाल किले की, दिल्ली की और ताज की रक्षा करनी है,
> भारत की रक्षा करनी है, स्वराज की रक्षा करनी है।

कवि शर्मा प्रगतिशील कवि हैं। उनके काव्य में साम्यवाद की झलक मिलती है। पूंजी पतियों पर व्यंग करते हए कवि शर्मा उनकी कटु आलोचना करते हुए कहते हैं –

> जहां में जिनकी बदौलत सदा ही जीते हो,
> उन्हीं का खून हमेशा से पीते रहते हो!
> अमीर जानते हो किसने बनाया तुमको?
> ऐशो आराम ये सब किसने दिलाया तुमको।

प्राचार्य तुलसी अनंदाणी

सुश्री तुलसी अनंदाणी का जन्म सन् १९४१ ई में कराची में श्री परसराम अनंदाणी के घर में हुआ। उन्होंने गुजरात विश्व विद्यालय से एम. ए. एवं बी. एड्. की उपाधियां प्राप्त की और साथ साथ आदिपुर में अध्यापन कार्य भी करती रही। सम्प्रति वे मैत्री कन्या महा विद्यालय, आदिपुर (कच्छ) की प्राचार्य हैं। उन्होंने न केवल शिक्षा के क्षेत्र में योगदान किया [है किन्तु साहित्यिक एवं सामाजिक क्षेत्र में भी योगदान किया है। अब वे गांधीधाम नगर पालिका की उपाध्यक्ष हैं। उन्होंने सिन्धी एवं हिन्दी में साहित्य साधना की है। उनकी कहानियां एवं कविताएं विभिन्न पत्रिकाओं में प्रकाशित हुई हैं, किन्तु कोई संकलन प्रकाशित नहीं हुआ। प्रस्तुत है उनकी कुछ कविताओं के उध्दतांश, जिनसे कवियत्री तुलसीदेवी की अन्तःचेतना एवं रहस्यमयी भावनाओं का दर्शन होता है –

आज मैं तुझ में समाकर सुप्त होना चाहती हूँ,
इस लिए खुद को मिटाकर गुप्त होना चाहती हूँ।

... .

हठ करते हो देने का तो, मुझको पीड़ामय कर दो,
और अगर कुछ देना चाहो, आंसू से दामन भर दो,

... .

विश्वासों के दीपक मैंने, उसके पास जलाए,
जब मेरे मंदिर में स्वामी देवी के सम आए।

बहन तुलसी अनंदाणी महादेवी वर्मा से प्रभावित प्रतीत होती है। बहन तुलसी ने भावों के अनुरुप भाषा का प्रयोग किया है। इनके काव्य में रूपक अलंकार का भी अच्छा समावेश हुआ है।

...

स्वामी नारायणदास

संत स्वामी नारायणदास लाड़काना के प्रसिद्ध संत स्वामी अचल प्रसाद के धर्मपीठ के उत्तराधिकारी हैं। उनका जन्म सन् १९४२ ई में सुजावल गांव लाड़काना ज़िला में श्री तीर्थदास नाथाणी के घर में हुआ। उन्होंने बाबा प्रेमदास से गुरु मंत्र की दीक्षा ली।

अब उनका आश्रम 'अमर धाम' के नाम से उल्हासनगर में स्थित है। उन्होंने सिन्धी एवं हिन्दी में काव्य की रचना की है। अपने गुरु परम्परा की महिमा गाते हुए स्वामी नारायणदास जी कहते हैं –

ॐजय गुरदेवा स्वामी जय श्री गुरदेवा।
उदासीन गुरु श्री चन्द्र सफल करो सेवा।
बाबा रंगीरामजी पारस कंचन लोह करा,
जो भी शरण में आया सागर पार तरा।
बाबा अचल प्रसाद जी नीलम निर्मल ज्ञान भरे।
बाबा अमरदास पुखराजन भक्ति भंडार धरे।

स्वामी नारायणदासजी वेदों की महत्ता प्रतिपादित करते हुए कहते हैः–

नित्य वेद का दर्शन कर तू, वेद रूप भगवान।
ब्रह्मादिक और सुर सनकादिक, करें वेद का गान।

कवि स्वामी नारायणदासजी भारत माता की वंदना करते हुए कहते हैं–

ऊं जय भारत माता, मैया जय भारत माता।
गंगा यमुना सरस्वती सिन्धु निर्मल जल आता।
पर्वतराज हिमालय, उत्तर में सोहै,
सुर नर मुनि जन गँधर्व, सब का मन मोहे। ऊं जय
भारत के कण कण में से उपजे वीर अनेक,
दानी दाता और उदासी जन्में एक से एक॥ ऊं जय
आरती वेद भगवान की जो कोई करता गान।
नर से 'नारायण' हो जावै पाए पद निर्वान॥

स्वामी नारायणदासजी के दार्शनिक विचार–धारा की झलक निम्न पद्यांश से मिलती है। उनके विचारानुसार जगत् के विभिन्न पदार्थ मिट्टी के ही हैं और अंत में मिट्टी में ही मिल जायेंगे।

तू माटी का, मैं माटी का, सारा जग ये है माटी का,
सोना चाँदी सब है माटी, कपड़ा रेशम भी है माटी,
हीरा लाल जवाहर मोती आखिर तो है सब माटी का।

श्री मयाराम कुकड़ेजा

श्री मयाराम का जन्म सन् १९४३ ई में लाड़काना सिन्ध में श्री दानोमल कुकड़ेजा के घर में हुआ। उन्होंने माध्यमिक शिक्षा नासिक में प्राप्त की और बम्बई विश्व विद्यालय से एम. ए. की है। वे नासिक में अध्यापन कार्य करते हैं। संगीत से उनका लगाव है। उन्होंने सिन्धी एवं हिन्दी में काव्य रचना की है। उनका उपनाम 'दर्द' है। दर्द के दिल में क्या दर्द है, जिन्दगी के कटु अनुभव, उनकी निम्न नई कविताओं से प्रतिभासित होते हैं:–

'दर्द' के
कलम से निकलकर
हर शब्द
चिंगारी बना और
चिंगारी ने भयंकर आग का
रूप
ले लिया
इस आग के शोले
एक कसक
एक चुभन
बनकर रह गये!!

– हवा की चाल –

तुम्हारी
भावनाओं,
विचारों,
आदर्शों का
मूल्य
इस जमाने के पास नहीं है!
कौड़ियों के व्यापारी,
इन
अमूल्य मोतियों का मूल्यांकन नहीं कर सकते!
अच्छा है
इन भावनाओं, विचारों और आदर्शो को दबा दो,
क्यों कि
हवा की चाल की विरूद्ध दिशा की ओर,
पतंग उड़ाई नहीं जा सकती!!

प्रो. जीवितराम सतेपाल

प्रो. जीवितराम सेतपाल का जन्म सन् १९४३ ई में सक्खर नगर में श्री कालूराम सेतपाल के घर में हुआ। सम्प्रति वे नैशनल कालेज, बान्द्रा-बम्बई में हिन्दी के प्राध्यापक हैं। सिन्धी भाषी होते हुए भी इन्होंने हिन्दी में साहित्य साधना की है। वे प्रोत्साहन का सम्पादन भी करते हैं। 'रेत के कगार' (कहानी संग्रह) 'तुम्हारे ही नाम' (लघु उपन्यास) उनकी हिन्दी गद्य में देन हैं। वे डॉ. राम सकल शर्मा के निर्देशन में 'कवि दिनकर' के काव्य में राष्ट्रीयता विषय पर शोध कर रहे हैं। सेतपालजी मूलत: कवि हृदय हैं, उनके काव्य संग्रह 'राष्ट्रीय वाणी' एवं 'प्यासी धरती' से उनकी राष्ट्रीय भावना परिलक्षित होती है। उनके काव्य में वीर रस प्रधान है, करुण एवं श्रृंगार रस गौण हैं।

प्रो. आर. एस. यादव 'अजात शत्रु' के विचारानुसार सेतपाल की कहानियों, कविताओं एवं व्यक्तित्व में करुणा, देश प्रेम, जोश और संघर्ष की पुकार के जो मिले जुले स्वर हैं, वे सब अनायास नहीं हैं, परिवेश में से समर्थित होकर व्यक्तित्व में विकसित हुए हैं।

जब देश पर दुश्मनों ने आक्रमण किया तब कवि की ज़िबान ने दुश्मन को ललकारा–

यह न समझ लो शांति–अहिंसा है निर्बल हथियार;
चढ़ा निकष पर अगर कभी तो डूबोगे मझधार!
ईंट का जवाब, पत्थर से देंगे, मुंह की तुम को खानी होगी।
विश्व शान्ति के हवन कुंड में तेरी ही कुर्बानी होगी,

रपु का सामना करने के लिए कवि वीरों को उत्तेजित करते हुए कहते हैं–

जाग उठो, जाग उठो हे वीर सूरमा! अरि ने अब ललकारा है।
भारत की प्रभु सता पर फिर किया प्रहार करारा है।
कर दो खट्टे दाँत उसीके जो भी आँख उठाये।
तोड़ के रख दो टांग उसीकी जो भी कदम बढ़ाये।[२]

---

१ राष्ट्रवाणी	जीवितराम सेतपाल	पृष्ठ १०
२ प्यासी धरती	जीवितराम सेतपाल	पृष्ठ २३

कवि सेतपाल एक आशावादी एवं निर्भीक कवि हैं । देश को समृद्ध-सम्पन्न बनाने हेतु एवं देश की आज़ादी की अक्षुण्णता के लिए कवि भारतीय जवानों को आह्वान करते हुए कहते है :-

अधिक उत्पादन करेंगे देश में घर-घर ।
ज्ञान का दीपक जलाएँ रोशनी दर दर ।।
सैन्य शक्ति को बढ़ाकर देश को बल दो ।
देश रक्षा हेतु दौलत, रक्त, तन मन दो ।।
बढ़ चलो ऐसे समर में जैसे हो तूफान ।[1]

कवि सेतपाल के मन में दीन दुखियों के प्रति स्नेह एवं सद्भावना है । देश की आर्थिक एवं राजनैतिक व्यवस्था देखकर वे आह्वान करते हैं :-

छल-कपट के कर्म तजकर, ढलन निर्धन का कुचलकर,
पर दुखों के वास्ते तुम, सुखद जीवन से उतर कर,
दु:खित जन-जन के घरों में स्नेह का सागर बहाओ ।
एक रावण तब जला था एक रावण अब जलाओ !
द्वेष ईर्षा लोभ दुर्गुण जलायें देश को,
घूसखोरी, छलित जीवन भी सताएं देश को !
रोंदकर तुम दु:खित कर्मों कों सरित गंगा बहाओ !
एक रावण तब जला था, एक रावण अब जलाओ ![2]

कवि की मनोदशा का सजीव चित्रण उनकी निम्न लिखित पंक्तियों से प्रतीत होता है :

गीतकार की कामिनी कविता भर श्रृंगार चली उपवन में
सुरभि प्यार सन्देश भरा उर ले चल पड़ी, मचल आंचल में,
उसको भी कभी पत्रकार से पल भर हृदय मिलेगा क्या !
उठेगी अर्थी गीतकार की तब भी हृदय हिलेगा क्या ?

कवि सेतपाल के काव्य में छेकानुप्रास, वृत्यानुप्रास, उपमा, रुपक एवं प्रतीकों का अच्छा समावेश हुआ है ।

---

१ प्यासी धरती — पृष्ठ २२
२ राष्ट्रवाणी — पृष्ठ ३१

किशोर वास्वाणी

श्री किशोर वास्वाणी का जन्म सन् १९४४ ई में सिन्ध के सक्खर नगर में श्री सीरूमल वास्वाणी के घर में हुआ। देश विभाजन के कारण उनका परिवार मध्य प्रदेश में आ बसा, वहाँ ही किशोरजी ने पढ़ाई प्रारंभ की। उन्होंने जीवाजी विश्व विद्यालय से एम. ए. की परीक्षा उत्तीर्ण की। अब वे पुणे में 'हिन्दी शिक्षण योजना' के अंतर्गत शिक्षक के रूप में कार्य कर रहे हैं। साथ साथ उनका शोध कार्य भी जारी है। वे अच्छे लेखक एवं पत्रकार भी हैं। वे हिन्दी एवं सिन्धी में काव्य रचना करते हैं। वैसे अभी तक उनका कोई काव्य संग्रह प्रकाशित नहीं हुआ है। उनकी कविताएं विभिन्न पत्र पत्रिकाओं में प्रकाशित होती रहती हैं।

श्री किशोर जी छन्द-बद्ध कविता नहीं लिखते। वे नई कविता की शैली में स्वच्छंद सृजन कर रहे हैं। उनकी कविता में भावनात्मक संतुलन और व्यंग्य तथा आक्रोश का प्रभावी समावेश है। वे देश के विभाजन का यथार्थ चित्र प्रस्तुत करते हुए रजनीतिज्ञयों पर व्यंग्य करते हैं :-

वे लोग कौन हैं?
जिन्होंने मेरी जमीन का
वह टुकड़ा छीना है,
जिस ने मेरे जन्म को
सरिटीफाइ किया था।
किस अधिकार से घुस आते हो तुम लोग
उस घर में जिस के बारे में
तुम्हें यह तक मालूम नहीं,
कि उसकी नींव कब खुदी थी,
और उसकी दीवारें कैसे बनी थी।

नई कविता के कवि नए प्रतीकों और प्रतिमानों द्वारा अपनी अनुभूतियों एव भावनाओं का चित्र प्रस्तुत करते हैं। किशोरजी भी नए प्रतीकों द्वारा राज्य–सत्ता पर व्यंग्य करते हुए कहते हैं –

बहुत से हाथ
मिंची मुटिठ्यों की
गोलाई लिए ऊपर उठे हुए हैं
जिन में वे
संकल्पों की जगह
बस के डंडे पकड़े हुए हैं।

नगर में रहने वाले मनुष्य के लिए कवि अख़बार की उपमा देते हुए शहरी आदमी की अवस्था का यथार्थ चित्र प्रस्तुत करते हैं –

दिन उगने के साथ ही,
अखबार की रफतार से,
बासी होने लगता है,
यह शहरी आदमी।

किशोरजी जीवन को आधुनिक संदर्भ में प्रस्तुत करते हुए नए प्रतिमानों द्वारा अपने मनोदशाओं का विश्लेषण करते हुए कहते हैं :–

रेस के घोड़े के ख़ुरों की कहानी हूँ मैं,
अपने लिए जो न दौड़ी वो जिंदगानी हूँ मैं।
नहीं दब सकता हाड़ माँस वह तोप की ताकत से मनु,
इसी चुनौती को ललकारता विको[1] के रुप में सोया हूँ मैं।

१ विको : अफ्रीकी नेता जो स्वतंत्रता की लड़ाई में मारा गया।

श्री ढोलण राही

श्री ढोलण का जन्म सन् १९४९ ई में अजमेर राजस्थान में श्री तीर्थदास के घर में हुआ। वे आदर्श विद्यालय अजमेर में अध्यापक हैं। उन्होंने सिन्धी एवं हिन्दी में काव्य रचना की है। वे एक अच्छे गायक भी हैं। उनकी रचनाएं आकाशवाणी से भी प्रसारित होती रहती हैं। वे सांस्कृतिक कार्य क्रमों में भी सक्रिय भाग लेते हैं। सिन्धी में उनका काव्य संग्रह 'नेणनि ओतियो नींह' प्रकाशित हुआ है। उन्होंने हिन्दी में अधिकतर गीत एवं गज़ल लिखे हैं। उनका उपनाम राही है।

कवि राही के गीतों में एक निराश विरही की प्रतिछाया है। वे अपनी मनोदशा का चित्रण प्रस्तुत करते हुए कहते हैं:-

पतझड़ से सूने जीवन में,
आशा का मधु मास नहीं!
मैंने पाई घोर निराशा,
कंवरी रह गयी हर अभिलाषा,
मृत्यु मेरे पास न आई,
जीवन आया रास नहीं है।
किया निठुर पर तन मन अर्पण,
टूट चुका अब दिल का दर्पण,
चाह नहीं तुमसे मिलने की,
जीने की भी आस नहीं।

कवि प्रियतम के मिलन के लिए उत्सुक हैं। वे पकों एवं उपमाओं द्वारा अपनी आकांक्षाओं का उल्लेख करते हुए कहते हैं।

प्राण! तुम्हारे नैनों की मैं कोर बनूं
स्नेह तुम्हारा मोती मैं हूं सीप पिया,
मेरी प्रीत शिखा सी तुम हो दीप पिया,
तुम घनघोर घटा से बरसो, मोर बनूं
इस सृष्टि के दूर क्षितिज के पार कहीं,
चलो बसाएं एक नया संसार कहीं;
तुम दिनकर से प्रखर पिया, मैं मोर बनूं!

श्री खिलूमल गंगवाणी

नवोदित नवयुवक सिन्धी कवि श्री खिलमल कुन्दनदास गंगवाणी ने हिन्दी साषा में काव्य रचना की है। उनके गीतों और कविताओं का संग्रह 'भाव संगम' अन्तर भारती प्रकाशन जमखंडी द्वारा प्रकाशित हुआ है। श्री गंगवाणी ने विभिन्न विषयों पर कविताएं लिखी हैं, जिन में बाह्य सृष्टि की वस्तुओं, अंतर की कल्पनाओं और अनुभवों की अभिव्यक्ति है। इनकी भाषा हिन्दुस्तानी है।

जब भारत पर चीन ने आक्रमण किया तब कवि खिलूमल ने देश के जवानों को आह्वान करते हुए कहा –

न उनकी दोस्ती अच्छी, न उनकी दुश्मनी,
जहर में भरे हुए हैं, नाग जैसी दुश्मनी,
दोस्ती के बदले में खतरे में डाल दी आज़ादी,
सावधान रहना आकर पड़ी खतरे में आज़ादी!
पर्वत की गोद में शहीद हुए भारत वासी,
उठाओ बन्दूक हटाओ ख़तरा ये हिन्द की आन है;
दुश्मन का नामो निशान मिटा दो ये हिन्द की शान है।
सिर पर खून का तिलक लगाकर कर लो अपनी कुर्बानी!

कवि के उपर्युक्त पद्यांश में उनकी राष्ट्रीयता की झलक मिलती है। कवि ऐसे आतंक के समय में भगवान शंकर से अनुरोध करते हुए कहते हैं:–

कैलाश पर्बत पे रहने वाले ओ शिवशंभू महादेव
मेरी माँ का सिन्दूर ना मिटाना
मुझे यहां से उठाओ मगर बहन का सिन्दूर ना मिटाना
कैलाश छोड़कर उतर आओ, खोलो तीसरी आँख,
जला दो असत्य–अन्याय को कर दो उसको खाक।

कवि को जब अपनी मातृभूमि सिन्ध की स्मृति आती है तो उनका कवि हृदय छलक पड़ता है:–

हम अपने प्यारे सिन्ध को छोड़ के आये
माता से अपना नाता तोड़के आये
हम सब पंछी थे एक डाल के
उड़ा दिया किसी ज़ालिम ने आपस मे फूट डालके!

समापन : विवेचित कवियों के अतिरिक्त बीसवीं शती के कुछ अन्य कवि हैं जिन्होंने हिन्दी में गीत, दोहे भजन लिखकर अपने विचारों की अभिव्यक्ति की हैं। सूखा साधुबेला सक्खर के महंत ब्रह्मलीन स्वामी संत प्रसादजी ने हिन्दी में दोहे लिखे हैं । वे परमात्मा की स्तुति गाते हुए कहते हैं :–

भगवान विश्वम्भर प्रभु, विनय करूँ कर जोर ।
तव पद पद्मनि में सदा, लगा रहे मन मारे ।
नन्द नंदन अज दैत्य निकंदन, नरसिंह ईश मुरारी।
कमल नयन सीता पति सुंदर धरणी धर कंसारी ।

ब्रह्मलीन संत स्वामी तिलोकदास महाराज जय बाबा, स्वामी बोध्दराज, संगीताचार्य, मास्टर चंद्र ने कुछ भक्ति परक भजन लिखे हैं।

श्री लुल्लाजी 'मदहोश' ने हिन्दी में गीत लिखे हैं। उनके गीतों की एक छोटी पुस्तक 'मदहोश के गैर फिलमी गीत' प्रकाशित हुई है। नवोदित गीतकार मदहोश के गीतों में उनके जीवन की अनुभूति का प्रतिफलन प्रतिबिम्बित होता। है। एक गीत में वे कहते हैं :–

अपनो ने ही अंधेरे में अपना कारवाँ लूटा !
सपने में न था जो उस पास्बां ने लूटा !
न कोई मंजिल है, न ठिकाना ही रहा है,
न कोई दिन रहे हैं, न वो दिल ही रहा है !
न वो ज़माना रहा है न वो फसाना रहा है।

युवा कवि अशोक कुमार राही के मुक्तक से उनके कवि हृदय की झलक मिलती है–

दूर तक एक भी आता है मुसाफिर न नज़र,
ये भी मालूम नहीं रात है ये या कि सहर,
मेरे अस्तित्व के बस दो ही चिन्ह बाकी हैं,
एक बुझता सा दिया एक उजड़ी सी कबर !

पंडित देवदत्त कुंदाराम शर्मा, डॉ. सतीश रोहड़ा, श्री देवप्रकाश कु. कांता मनवाणी श्री जयंत रेलवाणी श्री लक्ष्मण दुबे श्री वेदप्रकाश, डॉ. लखमीचन्द प्रेम, 'ज़िया' श्री प्रभुदास ब्रह्मचारी प्रो. मामतोरा, श्री अजीत किशोर, प्रो. श्री परसराम राम कालीदास शर्मा, प्रो. प्रियतम देव पमनाणी, प्रो. टिलूलाल ठारवाणी, प्रो. टहल माखीजाणी, प्रो. ईश्वरी जोतवाणी, प्रो. भावन वाधवाणी 'बवैन', श्रीमती इंदिरा पूनावाला श्री बलदेव बुधराणी 'दोर' खुशीराम जेसवाणी, प्राचार्य कृष्णा भम्भाणी, श्रीमती फूल रोहड़ा आदि सिन्धी भाषियों ने फुटकर हिन्दी काव्य की रचना की हैं।

'सिन्धी कवियों की हिन्दी साधना'

विद्वानों के मत–

'सिन्धी कवियों की हिन्दी साधना' नामक शोध डॉ. दयाल 'आशा' ने लिखा है, जिसमें बड़े परिश्रमपूर्वक और लगन के साथ १९ वीं शती के तक के, सन्तों भक्तों की रचनाओं पर विचार किया गया है। ऐसा लगता है कि कवि हिन्दू हो या मुस्लिम, दोनों ही हिन्दी को प्यार से अपनाते थे। और कोई तअज्जुब इस मामले में नहीं था। सधुक्कड़ी भाषा तब एक ही थी, जो कबीर और नानक ने भी प्रयुक्त की थी। इस तरह के ग्रन्थ देश की भावनात्मक एकता और मिली जुली सांस्कृतिक परम्परा के उत्तम प्रमाण हैं। मैं प्रो. दयाल 'आशा' को इस कार्य के लिए बधाई देता हूँ।

–डॉ. पभाकर माचवे

शोधकर्ता डॉ. दयाल आशा ने अपने ढंग से इस ग्रन्थ में अनेक सत्यों, तथ्यों एवं तत्वों का समावेश किया है। अत्यंत कष्टसाध्य सामग्री के चयन और अनेक नूतन उदभावनाओं के साथ उनका यह खोज कार्य कई दृष्टियोंसे सराहनीय है। उनकी उपलब्धियों, स्थापनाओं और निष्कर्षों को गिनाने की न तो यहाँ आवश्यकता है, न अवकाश ही! फिर भी कतिपय प्रमुख बातों की ओर संकेत करना मैं अपना कर्तव्य समझता हूँ। सबसे पहले महत्त्वपूर्ण बात तो यह है कि इन्होंने सिन्धी संतों की वाणी को हिन्दी मनीषा के साथ जोड़ कर अध्ययन की एक नवीन दिशा खोल दी है। और दूसरी बात है–एक स्वर से सूफी कहे जाने वाले सिन्धी शायरों को इन्हों ने बड़े ही मनोयोग से संत कवि, सगुण भक्त और सूफी शायर के निकष पर रखकर अलग–अलग परखा है। इनके इस ग्रन्थ को प्रकाशित होते देखकर मुझे हार्दिक प्रसन्नता एवं संतोष का अनुभव हो रहा है।

–डॉ. रामसकल शर्मा